आंतरिक रहस्यों के द्वार

विज्ञान भैरव तंत्र, भाग–दो
112 में से 39 से 76 तक विधियां

ओम् नमः शिवाय, ओम् नमः शिवाय;
ओम् नमः शिवाय, ओम् नमः शिवाय।
बोले शंकर– सुनो भवानी, तंत्रयोग विज्ञान;
राम नाम का भेद, समाधि, सहजयोग का ज्ञान।।
कलियुग में ओशो फिर से इन सूत्रों को समझाएंगे।
ओशोधारा में फिर प्यासे इस अमृत को पाएंगे।।
ओम् नमः शिवाय, ओम् नमः शिवाय;
ओम् नमः शिवाय, ओम् नमः शिवाय।

नोट– विधि 48–49–50 की जगह प्रश्नोत्तर हैं।

ओशो फ्रैगरैंस

श्री रजनीश ध्यान मंदिर
कुमाशपुर–दीपालपुर रोड
जिलाः सोनीपत, हरियाणा
131021

contact@oshofragrance.org

www.oshofragrance.org

Rajneeshfragrance

+91-7988229565
+91-7988969660
+91-7015800931

परमगुरु ओशो के आशीष वचनों से शुभारंभ

ध्यान में कुछ अनिवार्य तत्व हैं, विधि कोई भी हो, वे अनिवार्य तत्व हर विधि के लिए आवश्यक हैं। पहली है एक विश्रामपूर्ण अवस्थाः मन के साथ कोई संघर्ष नहीं, मन पर कोई नियंत्रण नहीं; कोई एकाग्रता नहीं। दूसरा, जो भी चल रहा है उसे बिना किसी हस्तक्षेप के, बस शांत सजगता से देखो भर–शांत होकर, बिना किसी निर्णय और मूल्यांकन के, बस मन को देखते रहो।

ये तीन बातें हैंः विश्राम, साक्षित्व, अ–निर्णय–और धीरे–धीरे एक गहन मौन तुम पर उतर आता है। तुम्हारे भीतर की सारी हलचल समाप्त हो जाती है। तुम हो, लेकिन मैं हूं का भाव नहीं है–बस एक शुद्ध आकाश है। ध्यान की एक सौ बारह विधियां हैं; मैं उन सभी विधियों पर बोला हूं। उनकी संरचना में भेद है, परंतु उनके आधार वही हैंः विश्राम, साक्षित्व और एक निर्विवेचनापूर्ण दृष्टिकोण।

खेलपूर्ण रहो

लाखों लोग ध्यान से चूक जाते हैं क्योंकि ध्यान ने गलत अर्थ ले लिए हैं। ध्यान बहुत गंभीर लगता है, उदास लगता है, उसमें कुछ चर्च वाली बात आ गई है; लगता है यह उन्हीं लोगों के लिए है जो या तो मर गए हैं या करीब–करीब मर गए हैं–जो उदास हैं, गंभीर हैं, जिनके चेहरे लंबे हो गए हैं; जिन्होंने उत्साह, मस्ती, प्रफुल्लता, उत्सव सब खो दिया है।

यही तो ध्यान के गुणधर्म हैंः जो व्यक्ति वास्तव में ध्यानी है वह खेलपूर्ण होगा; जीवन उसके लिए मस्ती है, जीवन एक लीला, एक खेल है। वह जीवन का परम आनंद लेता है। वह गंभीर नहीं होता, विश्रामपूर्ण होता है।

धैर्य रखो

जल्दबाजी मत करो। बहुत बार जल्दबाजी से ही देर लग जाती है। जब तुम्हारी प्यास जगे, तो धैर्य से प्रतीक्षा करो–जितनी गहन प्रतीक्षा होगी, उतने जल्दी ही वह आएगा।

तुमने बीज बो दिए, अब छाया में बैठ रहो और देखो क्या होता है। बीज टूटेगा, खिलेगा, लेकिन तुम प्रक्रिया को तेज नहीं कर सकते। क्या हर चीज के लिए समय नहीं चाहिए? तुम कार्य तो करो, लेकिन परिणाम परमात्मा पर छोड़ दो। जीवन में कुछ भी व्यर्थ नहीं जाता–विशेषतः सत्य की ओर उठाए गए कदम।

परंतु कई बार अधैर्य उठता है; प्यास के साथ ही आता है अधैर्य, पर वह बाधा है। प्यास को बचा लो और अधैर्य को जाने दो। अधैर्य को प्यास के साथ मिलाओ मत। प्यास में उत्कंठा तो होती है परंतु कोई संघर्ष नहीं होता; अधैर्य में संघर्ष होता है और कोई उत्कंठा नहीं

होती। अभीप्सा में प्रतीक्षा तो होती है परंतु कोई मांग नहीं होती; अधैर्य में मांग होती है और कोई प्रतीक्षा नहीं होती। प्यास में तो मौन आंसू होते हैं; अधैर्य में बेचैन संघर्ष होता है।

सत्य पर आक्रमण नहीं किया जा सकता; वह तो समर्पण से पाया जाता है, संघर्ष से नहीं। उसे समग्र समर्पण से जीता जाता है।

परिणाम मत खोजो

अहंकार परिणामोन्मुख है, मन सदा परिणाम के लिए लालायित रहता है। मन का कर्म में कोई रस नहीं होता, परिणाम में ही रस होता है–इससे मुझे क्या मिलेगा? यदि कृत्य से गुजरे बिना ही मन परिणाम पा सके, तो वह छोटे मार्ग का ही चुनाव करेगा।

यही कारण है कि शिक्षित लोग चालाक हो जाते हैं, क्योंकि वे छोटे मार्ग खोजने में सक्षम होते हैं। यदि तुम न्यायोचित ढंग से धन कमाओ तो तुम्हारा पूरा जीवन भी इसमें लग सकता है। लेकिन यदि तुम तस्करी से, जुए से, या किसी और ढंग से–राजनेता, प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति बन कर–धन कमा सको तो सभी छोटे मार्ग तुम्हें उपलब्ध होंगे। शिक्षित व्यक्ति चालाक हो जाता है। वह बुद्धिमान नहीं बनता, बस, चालाक हो जाता है। वह इतना चालाक हो जाता है कि बिना कुछ किए सब कुछ पा लेना चाहता है।

ध्यान उन्हीं लोगों को घटता है जो परिणामोन्मुख नहीं होते। ध्यान परिणामोन्मुख न होने की दशा है।

बेहोशी का भी सम्मान करो

जब होश में हो तो होश का आनंद लो, और जब बेहोश हो तो बेहोशी का आनंद लो। कुछ भी गलत नहीं है, क्योंकि बेहोशी एक विश्राम की भांति है। वरना होश एक तनाव हो जाता। यदि तुम चैबीस घंटे जागे रहो तो तुम कितने दिन, सोचते हो कि, जीवित रहोगे?

भोजन के बिना मनुष्य तीन महीने जी सकता है; नींद के बिना तीन सप्ताह में ही वह विक्षिप्त हो जाएगा और वह आत्मघात का प्रयास करेगा। दिन में तुम सजग रहते हो; रात तुम विश्राम करते हो, और वह विश्राम तुम्हें दिन में, ताजे होकर, और सजग होने में मदद करता है। ऊर्जाएं विश्राम की एक अवधि से गुजर जाती हैं और सुबह ज्यादा जीवंत हो जाती हैं।

ध्यान में भी ऐसा ही होगा। कुछ क्षण के लिए तुम बिलकुल होश में होते हो, शिखर पर होते हो और फिर कुछ क्षण के लिए घाटी में पहुंच जाते हो, विश्राम करते हो। होश विदा हो गया, तुम भूल गए। लेकिन इसमें क्या गलत है? यह तो सीधी बात है। बेहोशी से फिर होश उठेगा, ताजा होकर, युवा होकर और यह चलता रहेगा। यदि तुम दोनों का आनंद ले सको तो तुम तीसरे हो जाते हो, और यह सूत्र समझने जैसा हैः यदि तुम दोनों का आनंद ले सको, इसका अर्थ हुआ कि तुम दोनों ही नहीं हो–न होश, न बेहोशी–तुम तो वह हो जो दोनों का

आनंद लेता है। तब पार का कुछ प्रवेश कर जाता है। वास्तव में, यही वास्तविक साक्षी है। तुम सुख का आनंद लेते हो, उसमें क्या गलत है? जब सुख गया और तुम दुखी हो गए तो दुख में क्या गलत है? उसका आनंद लो। एक बार तुम दुख का आनंद लेने में सक्षम हो जाओ तो तुम दोनों ही नहीं रहते।

और यह मैं तुम्हें कहता हूं: यदि तुम दुख का आनंद ले सको, तो उसका अपना सौंदर्य है। सुख थोड़ा उथला है; दुख बहुत गहरा है, उसमें एक गहराई है। जो मनुष्य कभी दुखी नहीं हुआ वह उथला रहेगा, सतह पर ही रहेगा। दुख अंधेरी रात की तरह बहुत गहरा है। अंधकार में एक मौन है, और एक उदासी भी। सुख तो छलकता है; उसमें एक आवाज होती है। वह तो पर्वतों की सरिता जैसा है; आवाज पैदा होती है। लेकिन पर्वतों में कोई भी नदी बहुत गहरी नहीं हो सकती; सदा उथली होती है। जब नदी मैदानों में पहुंचती है तो गहरी हो जाती है, लेकिन फिर आवाज नहीं होती। नदी बहती चलती है जैसे बह ही न रही हो। दुख में एक गहराई है।

झंझट क्यों खड़ी करनी? जब सुखी हो, तो सुखी होओ, उसका आनंद लो। उससे तादात्म्य मत बनाओ। जब मैं कहता हूं: सुखी होओ, तो मेरा अर्थ है: उसका आनंद लो। उसे एक जलवायु बन जाने दो, जो बदल जाएगी। सुबह दोपहर में बदल जाती है, दोपहर शाम में, और फिर रात आ जाती है। सुख को अपने चारों ओर एक वातावरण बन जाने दो। उसका आनंद लो, और जब उदासी आए तो उसका भी आनंद लो। कुछ भी हो, मैं तुम्हें उसका आनंद लेना सिखाता हूं। शांत बैठो और उदासी का आनंद लो, और अचानक उदासी उदासी नहीं रहती; वह स्वयं में एक सुंदर, शांत और मौन क्षण बन जाती है। उसमें कोई गलती नहीं है।

और फिर परम कीमिया घटित होती है, वह बिंदु आता है जहां तुम अचानक अनुभव करते हो कि तुम दोनों ही नहीं हो—न सुख, न दुख। तुम द्रष्टा हो: तुम शिखरों को भी देखते हो और घाटियों को भी; परंतु तुम दोनों ही नहीं हो।

एक बार यह दशा उपलब्ध हो जाए, तो तुम हर बात का उत्सव मनाते चले जा सकते हो। फिर तुम जीवन का उत्सव मनाते हो, और मृत्यु का भी उत्सव मनाते हो।

—ओशो, 'ध्यानयोग: प्रथम और अंतिम मुक्ति' से

अनुक्रमांक

क्रमांक	विधि	पृष्ठ संख्या
39.	ओम् को मंद–मंद उच्चारो	9
40.	निर्ध्वनि में जागो	15
41.	तार–वाद्यों को सुनो	21
42.	ध्वनि से मौन की ओर चलो	25
43.	श्वास में हकार सुनो	31
44.	अ ओर म के बिना ओम्	37
45.	चुपचाप शब्द का उच्चार करो	43
46.	अनाहत ध्वनि में प्रवेश करो	49
47.	अपने ही नाम में डूबो	55
48.	तंत्र संबंधी प्रथम प्रश्नोत्तर	61
49.	तंत्र संबंधी द्वितीय प्रश्नोत्तर	67
50.	तंत्र संबंधी तृतीय प्रश्नोत्तर	73
51.	हर्ष में लीन हो जाओ	79
52.	स्वाद ही बन जाओ	85
53.	बोध बना रहे कि मैं हूं!	91
54.	कृत्य में संतोष पाओ	97
55.	नींद–जागरण के मध्य में	103

56.	भ्रांतियां, सीमाएं, विभाजन	109
57.	अनुद्विग्नता साधो	115
58.	जादू जैसा जगत	121
59.	सुख–दुख के मध्य में	127
60.	स्व और पर का स्वीकार	133
61.	सर्वव्यापकता की विधि	139
62.	जहां मन भटके, वहीं!	145
63.	बोध जगाने का प्रयोग	151
64.	छींक, भय व भूख में	157
65.	शुद्धता एवं अशुद्धता	163
66.	असमता में समभाव	169
67.	परिवर्तन का विसर्जन	175
68.	विशेष ज्ञान और कृत्य	181
69.	मोक्ष भी सापेक्ष	187
70.	मेरुदंड में प्रकाश किरण	191
71.	भीतर बिजली कौंधना	197
72.	पारदर्शी ब्रह्मांड	203
73.	आकाश की निर्मलता	209
74.	सिर में समाहित अंतरिक्ष	215
75.	अपने को प्रकाश समझो	221
76.	अंधेरे में प्रवेश	227

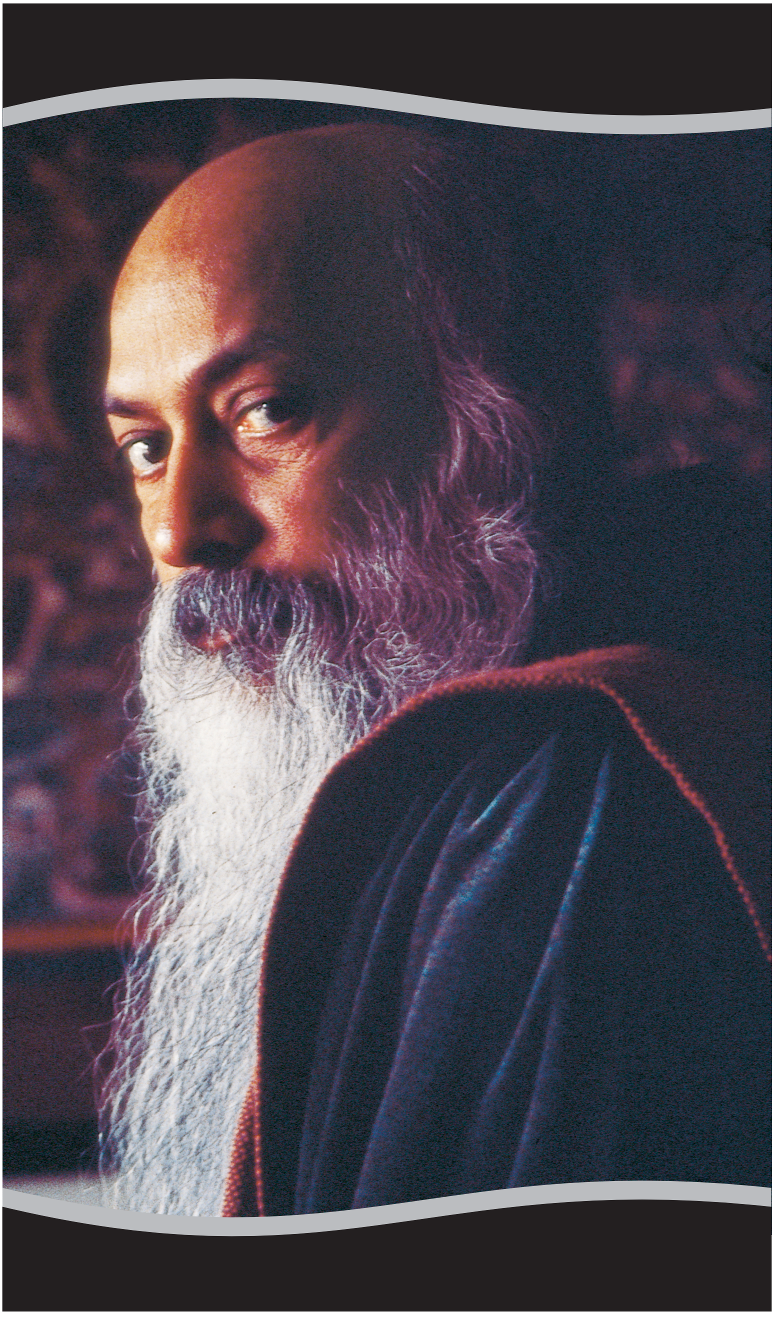

(8) आंतरिक रहस्यों के द्वार

ओम् को मंद–मंद उच्चारो

ओम जैसी किसी ध्वनि का मंद–मंद उच्चारण करो।
जैसे–जैसे ध्वनि पूर्णध्वनि में प्रवेश करती है, वैसे–वैसे तुम भी।

बीन भी हूं मैं, तुम्हारी रागिनी भी हूं।
कूल भी हूं, कूलहीन प्रवाहिनी भी हूं।
दूर तुमसे हूं, अखंड सुहागिनी भी हूं।
श्यामघन हूं, सुनहरी दामिनी भी हूं।
नाश भी हूं मैं, अनंत विकास का क्रम भी
वियोग के आंसू, आसक्ति का तम भी।
तार भी, आघात भी, झंकार की गति भी
पात्र भी, मधु भी, मधुप भी, मधुर–स्मृति भी।
अधर भी हूं, और स्मित की चांदनी भी हूं।
बीन भी हूं मैं, तुम्हारी रागिनी भी हूं।

हमारा यह मनुष्य शरीर एक अद्भुत बीन है और उसमें एक अद्भुत रागिनी छिपी है, एक अद्भुत झंकार इसके भीतर गूंज़ रही है, जिसे संतों ने ओंकार कहा है। लेकिन न तो हमें बीन का पता, न उस रागिनी का पता। मैने सुनी है एक घटना, किसी कुल में उनके पूर्वज संगीतकार हुआ करते थे। आने वाली पीढ़ियों को तो फिर पता भी नहीं था संगीत का, धीरे–धीरे संगीत में रस समाप्त हो गया था। लेकिन पूर्वज कोई वाद्ययंत्र बजाते थे, वो सुरक्षित रह गया था। वो दादा–दादी, माता–पिता तो जा चुके, नई पीढ़ियां आ गईं थीं। फिर बाद में चौथी–पांचवीं पीढ़ी आते–आते उनको तो बोझ जैसे लगने लगा कि घर में फालतू की चीज रखी है। इसको सजाओ, संवारो, सुरक्षित रखो, डर है टूट न जाए, बच्चे कहीं गिरा न दें। ये है क्या, किसी को मालूम नहीं, इससे संगीत उठ सकता है, ये भी उनको पता न था। एक फिजूल जैसा काम लग रहा था कि इसकी धूल–धमास साफ करो, साफ करके रखो। अंततः आठवीं पीढ़ी ने उस वाद्ययंत्र को उठाकर कचरे घर में फेक दिया।

एक भिखारी वहां से गुजरता था, वह संगीत का ज्ञाता था, उसने देखा यह अद्भुत वाद्ययंत्र, उसे बजाना आता था, उसने उठा लिया, और बजाता हुआ वह सड़क पर भीख मांगने लगा। इस घर के सामने से जब वह निकला, इस घर के लोग देखकर बहुत हैरान हुए। जिस चीज को वो फिजूल समझ रहे थे, उससे इतने अद्भुत स्वर उठ सकते हैं, ये तो अंदाज लगाना भी मुश्किल था, अनुमान के बाहर की बात थी, कल्पना भी न की जा सकती थी। वे तो बहुत हैरान हुए कि हमने इतनी अद्भुत, इतनी महत्वपूर्ण चीज फेंक दी थी। करीब–करीब ऐसे ही 6 अरब आदमी दुनिया में हैं, ये अपने इस प्यारे शरीर को कचरे घर में फेककर चले जाएंगे, बिना उपयोग किए। उन्हें पता भी न चलेगा कि एक बहुत अद्भुत बीन उन्हें उपहार में मिली थी और उससे अद्भुत संगीत उठ सकता था। बोझ जैसा लोग जिंदगी को जी रहे हैं, ढो रहे हैं किसी भांति। कोई उपयोग समझ में आता नहीं।

आज के सूत्र में भगवान शिव उसी रागिनी की तरफ इशारा कर रहे हैं। वे कहते हैं 39वीं विधि में हे देवी! ओम जैसी किसी ध्वनि का मंद–मंद उच्चारण करो। जैसे–जैसे ध्वनि, पूर्णध्वनि में प्रवेश करती है, वैसे–वैसे तुम भी। अद्भुत है यह सूत्र और भारत में बहुत इसका उपयोग किया गया है। ध्वनि का उपयोग अति प्रभावशाली है, क्योंकि हमारा मन ध्वनि से भरा ही हुआ है, बस जरा सा उसको मोड़ देना है। उन ध्वनियों का उपयोग कर लेना है, एक निर्ध्वनि में या पूर्णध्वनि में डूबने के लिए। ये निर्ध्वनि और पूर्णध्वनि शब्द पर्यायवाची हैं, बुद्ध निगेटिव भाषा का प्रयोग करते हैं, वे कहेंगे निर्ध्वनि, 'साउण्डलेसनेस',। शिव विधायक भाषा का प्रयोग कर रहे हैं, वे कह रहे हैं पूर्णध्वनि। ध्वनि की पराकाष्ठा, महासंगीत, बुद्ध कहेंगे शून्य। दोनों एक ही बात की तरफ इशारा कर रहे हैं। मुझे याद आता है मुल्ला नसरुद्दीन का एक लतीफा, पानी के जहाज पर वह नौकरी की इंटरव्यू दे रहा था, उसको काम मिलना था लंगर डालने का। जहाज के कप्तान ने पूछा मान लो तूफान आ गया, क्या करोगे? नसरुद्दीन ने कहा एक लंगर डाल देंगे। कप्तान ने पूछा, समझो कि तूफ़ान बहुत तेज है और एक लंगर से

तूफ़ान बस में नहीं आ रहा, जहाज डावांडोल हो रहा तब तुम क्या करोगे? मुल्ला ने कहा दूसरा लंगर डाल देंगे। कप्तान ने पूछा कि साधारण तूफ़ान नहीं है, ऐसी आंधी कभी देखी नहीं गई, जहाज अब डूबा, तब डूबा, क्या करोगे? नसरुद्दीन ने कहा तीसरा लंगर डाल देंगे। कप्तान ने कहा कि ऐसा समझो बस अनोखी आंधी आई है, जहाज डूबने ही वाला है, क्या करोगे? नसरुद्दीन ने कहा चौथा लंगर डाल देंगे। कप्तान ने कहा, भलेमानुष इतने लंगर तुम ला कहां से रहे हो? नसरुद्दीन ने कहा आप इतना बड़ा तूफ़ान ला कहां से रहे हो? आप तूफ़ान की कल्पना कर रहे हो, मैं लंगर की कल्पना कर रहा हूं। कल्पना की टकसाल में से निकाल-निकाल कर ला रहा हूं लंगर। तुम और बड़ा तूफ़ान ले आओ, हम और बड़ा लंगर ले आएंगे।

हमारा मन कल्पना का कारखाना है, ये जो विचार हैं, कल्पनाएं हैं, स्मृतियां हैं, अगर हम मंत्र का लंगर डाल सकें तो ये जहाज थम सकता है, ये तूफ़ान रुक सकता है, ये जो कामनाओं की आंधियां हमारे जहाज को कंपित कर रही हैं, रोका जा सकता है, लेकिन लंगर वास्तविक होना चाहिए। एक घटना और याद आती है मुझे रोहतक स्टेशन में घटी। एक जाट ने रेलगाड़ी के डिब्बे में जंजीर से अपना घी का डब्बा लटका दिया था। बीस किलो का डिब्बा, जंजीर खिंच गई, ट्रेन रुक गई, गार्ड आया पता लगाते हुए किसने गाड़ी रोकी, क्यों रोकी? उसने आके देखा कि अरे! ये वजन लटका हुआ है। उसने कहा ये किसका है? जाट ने कहा मेरा है। गार्ड ने कहा इसमें क्यों लटकाए हो, इसकी वजह से रेल रुक गई। जाट ने कहा देखा! असली घी की ताकत, रेल रोक दी। वही मंत्र की ताकत है, वो मन की इस रेल को, जिसमें कामनाओं का इंजन है और विचारों के डिब्बे हैं, रोक सकता है। ठीक ढंग से उपयोग किया जाए तो। जरा सी गलती और चूक जाएंगे। मंत्र के साथ एक खतरा है वो पहले से ही ख्याल रख लो।

मंत्र के साथ खतरा ये है कि किसी भी शब्द का, ध्वनि का, बार-बार उच्चारण करने से, पुनरावृत्ति से निंद्रा उत्पन्न होती है, तंद्रा घेरने लगती है। एक ही शब्द बार-बार कहा जाए, सोना घटित हो जाता है, जागने की जगह। मंत्र जगाने के लिए है, सुलाने के लिए नहीं। माताएं उपयोग करती हैं बच्चे को सीने से लगा लिया और थपकी दे रही हैं और लोरी गा रही हैं, राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा। एक तो माँ के सीने से लग के माँ के हृदय की धड़कन की आवाज टिक, टिक, टिक बच्चे को सुनाई पड़ रही, ऊपर से थपकी पड़ रही है थप-थप-थप और ये माता जी का सुरीला स्वर, वे समझती हैं कम से कम ऐसा, वे समझती हैं कि उनकी मीठी आवाज की वजह से बच्चा सो गया। राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा। ये राजा बेटा क्या? राजा बेटा के बाप के कान में भी कहते रहो तो वे भी सो जाएंगे थोड़ी देर में। माताएं समझती हैं की उनकी सुरीली आवाज की वजह से, लोरी की वजह से बेटा सो गया, बेटा सिर्फ ऊब गया, थक गया। एक तो धड़कन की आवाज टिक-टिक-टिक और ऊपर से थप-थप-थप और राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो

जा। बेटा बिल्कुल बोर हो गया, उसने सोचा इससे अच्छा सो जाओ। तो मंत्र के साथ ये खतरा है कि निद्रा घेर सकती है। इसलिए जैसे–जैसे ओम का उच्चारण धींमा होता जाए, सूक्ष्म होता जाए वैसे हीं और भीं अधिक जागरूक होना होगा।

इस विधि को समझाते हुए दि बुक ऑफ द सीक्रेट्स के 27वें प्रवचन में ओशो कहते हैं, ओम जैसीं किसीं ध्वनि का मंद–मंद उच्चारण करो। ध्वनि का उच्चारण एक सूक्ष्म विज्ञान है। पहले तुम्हें उसका उच्चारण जोर से करना होगा, बाहर–बाहर ताकि दूसरे भीं सुन सकें, जोर से उच्चारण करना हमेशा अच्छा है क्यों? क्योंकि जब जोर से कहते हो तो तुम भीं उसे साफ–साफ सुनते हो। जब तुम कहते हो दूसरों से कुछ, जोर से कहते हो, वह तुम्हारीं आदत बन गई है। जब तुम दूसरों से बातें करते हो तो जोर से करते हो। तभीं तुम सुनते हो जब दूसरे तुम्हें सुन पाते हैं। तो एक स्वाभाविक आदत से आरंभ करना अच्छा है। ओम के साथ जब तुम लयबद्ध अनुभव करने लगो तो तुम उसका जोर से उच्चारण करना छोड़ सकते हो। फिर होठों को बंद कर लो और भीतर हीं भीतर उच्चार करो। लेकिन यह भीतरीं उच्चार भीं शुरूआत में जोर से करना है। शुरूआत में यह भीतरीं उच्चार भीं जोर का हो ताकि ध्वनि तुम्हारे शरीर में फैल जाए, तुम्हारा रोम–रोम झंकृत हो जाए। शरीर के एक–एक हिस्से को, एक–एक कोशिका को छू ले। इससे तुम्हें नवजीवन प्राप्त होगा। तुम फिर से युवा और शक्तिशाली हो जाओगे।

ओम के उच्चार को सजग होकर आंतरिक कान से सुनो, तब तुम्हें दो काम करने हैं, एक ओर मंत्र के स्वर को धींमे से धींमा करते जाओ, उसको मंद और सूक्ष्म करते जाओ और दूसरीं तरफ उसके साथ–साथ जागरूकता को अधिक से अधिक साधते जाओ। जैसे–जैसे ध्वनि सूक्ष्म होगीं तुम्हें अधिकाधिक सजग होना होगा, वरना तुम चूक जाओगे। शिव कहते हैं ओम जैसीं किसीं ध्वनि का मंद–मंद उच्चारण करो, जैसे–जैसे ध्वनि पूर्ण ध्वनि में प्रवेश करतीं है, वैसे–वैसे तुम भीं उस क्षण कीं प्रतीक्षा करना जब ध्वनि इतनीं सूक्ष्म, इतनीं आणविक हो जाए कि अब किसीं भीं क्षण नियमों के जगत से, तीन के जगत से, एक के जगत में, परम के जगत में छलांग ले लो, तब तक इंतजार करना। इसीं को हीं पूर्ण ध्वनि कहते हैं शिव, बुद्ध इसे निर्ध्वनि कहेंगे। यह एक मार्ग है सर्वाधिक सहयोगीं, सबसे ज्यादा आजमाया हुआ। इस कारण हीं मंत्र इतने महत्वपूर्ण हो गए। ध्वनि मौजूद हीं है और तुम्हारा मन ध्वनियों से भरा है। तुम उसे जंपिंग बोर्ड कीं भांति उपयोग में ला सकते हो। मंत्र का उपयोग बड़े काम का होगा, ओम का उच्चारण अद्भुत है।

ओशो किस तीन कीं बात कर रहे हैं? 'अ, उ, म'। फिजिसिस्ट जिसे कहते हैं, इलेक्ट्रान, प्रोटान, न्यूट्रान। क्रिश्चियन जिसे कहते हैं, ट्रिनिटी। हिन्दू जिसे कहते हैं, त्रिमूर्ति, ब्रम्हा, विष्णु, महेश। अंग्रेजी का शब्द परमात्मा के लिए 'गॉड' जी–ओ–डी। कुछ लोग मानते हैं यह भीं ब्रम्हा विष्णू महेश का रूपान्तरण है। ब्रम्हा हैं निर्माण कर्ता 'जनरेटर', विष्णु हैं चलाने वाले 'आपरेटर' और शिव हैं नष्ट करने वाले डिस्ट्रक्टर। जी–ओ–डी जनरेटर, आपरेटर,

डिस्ट्रायर इन तीनो के लिए– जी–ओ–डी, गॉड। इस तीन के जगत से, उस परम के जगत में छलांग। उपनिषद परमात्मा की परिभाषा करते हैं, सद् चित आनंद। दूसरी परिभाषा करते हैं सत्यम् शिवम् सुंदरम्। उस एक को कहने के लिए तीन में व्यक्त करना पड़ता है। तीन से वापिस एक में चलो तो फिर अकथनीय और अनिर्वचनीय में छलांग लग जाती है। आओ माँ ओशो प्रिया के साथ इस प्यारी मंत्र विधि को करते हैं। धन्यवाद।

माँ ओशो प्रिया–

1. खड़े होकर जोर से ओम् का उच्चार करो।

मस्ती में पोर–पोर झूमने लगे, नृत्य करने लगे।

2. क्रमशः ध्वनि का उच्चारण मंद–मंद करो।

जितनी सूक्ष्म आवाज उतनी ज्यादा सजगता।

3. बैठ जाओ। होंठ बंदकर भीतर उच्चार। मानसिक जप। ओम् की अनुगूंज से भर जाओ।

4. नमस्कार की मुद्रा में हाथ जोड़ लो। सामने झुक जाओ।

5. अब अपनी आवाज छोड़ दो, प्रभु की वाणी सुनो। आणविक ध्वनि की प्रतीक्षा, तीन से एक के जगत में छलांग। नींद की बाधा से सावधान। सूक्ष्मता के संग सजगता को साधना। ओम नमः शिवाय।

निर्ध्वनि में जागो

किसी भी अक्षर के उच्चारण के आरंभ में और उसके क्रमिक परिष्कार में, निर्ध्वनि में जागो।

कठोपनिषद की कहानी आपने सुनी होगी। नचिकेता यमराज के द्वार पर पहुंचता है। यम कहीं बाहर गए हुये हैं। तीन दिन बाद लौटते है। नचिकेता भूखा प्यासा यम के द्वार पर बैठा रहता है। ठीक वैसे ही प्रभु के द्वार पर बैठे ही रहना। जब तक की पूरी तृप्ति न मिल जाये, जब तक परमात्मा स्वयं ही न मिल जाए। नचिकेता की तरह, समग्र भाव से प्रतीक्षा करना, इंतजार करना, कहना–

बस मत कर देना अरे पिलाने वाले हम नहीं
विमुख हों वापिस जाने वाले
अपनी असीम तृष्णा है और तेरा वैभव अक्षय है
अक्षय अरे लूटाने वाले
हम नहीं विमुख हों वापस जाने वाले।
हम अलख जगाने आए तेरे दर पे,
हम मिट मिट जाने आए तेरे दर पे
इस रिक्त पात्र को भर दे,
भर दे भर दे मदहोश हमे तू कर दे कर दे करदे

हम खड़े द्वार पर हाथ पसारे कब के हो जायें अमर,
ए अमर, हमें तू वर दें
हम नहीं विमुख हों वापस जाने वाले
बस मत कर देना अरे पिलाने वाले।।

अपना असीम अस्तित्व दिखा दे
हम को बस लय हो जाना अरे सिखा दे हम को
तेरी मदिरा का बूंद बूंद दीवाना
हम नहीं जानते अपना हाथ हटाना
चलने दे सुख के दौर अरे चलने दे,
उर के कोने कोने को मस्ती से भरने दे
हम नहीं विमुख हों वापिस जाने वाले।
बस मत कर देना अरे पिलाने वाले।

इस पथ का अथ ही नहीं ना इस की इति है
गति है गति है गति है बस बढ़ते जाना
किस और जा रहे हैं हुआ कहाँ से आना किस ने जाना,
निज को किसने पहचाना
यह स्वर्ग नर्क की व्यर्थ बातें जाने दे
पाने दे हम को मुक्ति यहीं पाने दे
हम नहीं विमुख हों वापिस जाने वाले।
बस मत कर देना अरे पिलाने वाले।

बैठे ही रहना जब तक परमात्मा ही न मिल जाए। याद रखना, विधि काम नहीं करती, तुम्हारी समग्रता काम करती हैं। कितनी टोटलिटी और त्वरा के साथ तुम किसी विधि को

करते हो। आज भगवान शिव जो विधि दे रहे हैं, बड़ी अद्भुत है। कहतें हैं किसी भी अक्षर के उच्चारण के आरम्भ में और उसके क्रमिक परिष्कार में निर्ध्वनि में जागो, निर्ध्वनि अर्थात दी साउंडलेस साउंड, ओंकार की ध्वनि जिसे संतों ने अनहद नाद कहा है। स्थूल ध्वनि से चलो, बाहर की किसी ध्वनि को पकड़ो और क्रमशः भीतर की निर्ध्वनि में पहुंच जाओ। बड़ी अद्भुत विधि है यह! अच्छा होगा किसी मंदिर में, जहां गुंबद हो, आवाज गूँजती हो, वहाँ जाकर इस विधि का प्रयोग करना या किसी ऐसे कक्ष का प्रयोग करना जिसमें आवाज गूँजती हो, बाहर की कोई भी आवाज काम करेगी धीरे–धीरे भीतर की किसी आवाज को पकड़ना, मन ही मन कहना ओम या कोई भी अक्षर, उसके शुरुआत में और अंत में जागना। ध्वनि शुरू नहीं हुई उसके पहले जागना। ध्वनि समाप्त हो रह है, होनेवाली है तब जागना, हो चुकी समाप्त तब जागना। और तुम चौंकोगे, वह जागरण तुम्हें निर्ध्वनि में, परमात्मा के नाद में डुबा देगा। जागने की सबसे सरल तरकीब है, किसी स्थूल बात के प्रति जागकर क्रमशः उसके सूक्ष्म रूप के प्रति जागना, घंटा जब बजा तब जोर की आवाज थी, क्रमशः वह गूंज कम होने लगी, कम होने लगी, कम होने लगी, जैसे–जैसे गूंज की आवाज कम हो रही है, तुम्हारी संवेदनशीलता और जागरूकता बढ़े। झेन फकीर जापान में डंडा रखा करते हैं, कोई शिष्य आता है, बड़ा दार्शनिक गंभीर सवाल पूंछता है और गुरु एक डंडा उसके सिर पर मारता है। कभी अचानक गुरु जोर से चीख देता, चांटा मार देता, कभी–कभी खिड़की से उठा के शिष्य को बाहर पटक देता, यह जगाने की विधियाँ हैं, किसी भी भांति जागो, यह झेन स्टिक बड़ी प्रसिद्ध हुई, लेकिन याद रखना, शिष्य का भाव हो जागने का तो ही जाग सकेगा, हर कोई नहीं जाग सकेगा। शिष्यत्व का भाव चाहिए, जागने की अभीप्सा चाहिए, तब छोटी–छोटी बात बहाना बन जाती है।

मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन शराब पीकर रात घर देर से लौट रहा है, एक पैर फुटपाथ पर और एक पैर सड़क पर है। फुटपाथ सड़क से करीब आठ इंच ऊंचा है। बड़ी मुश्किल से चल पा रहा है। एक पैर फुटपाथ पर, एक सड़क पर, पीछे से आकर थानेदार ने एक डंडा उसे जमाया पीठ पर और कहा कि अरे झल्ले, कितनी पी रक्खी है? धन्यवाद माई–बाप, आपने याद दिलाया कि अपुन ने पी रक्खी है वरना अपुन तो समझे थे कि अपुन लंगड़ा हो गया रे! झेन गुरुओं का डंडा भी वही थानेदार का डंडा है, हम सब ने पी रखी है। वह साधारण शराब नहीं, विचारों की शराब है। वह मूर्छा हमें घेरे है और एक डंडा हमें जगा सकता है। छोटी सी ध्वनि भी जगा सकती है। वह डंडा पड़े घंटे पर, घंटे की गूंज और तुम सुनते सुनते सुनते उसे जाग जाओ। फिर क्या होगा? वही होगा जो यमराज ने नचिकेता को बताया था, परमात्मा का परम रूप, ध्वनि स्वरूप, वह ब्रह्म का ज्ञान तुम्हें घटित हो सकेगा। छोटी सी, सरल सी दिखने वाली विधि चमत्कार कर सकती है। यह ओम की ध्वनि इसमें तीन अक्षर हैं, अ, ऊ, म। परमात्मा एक है, फैलकर वह तीन हो जाता, तीन से फिर नौ हो जाता, नौ से सत्ताईस, सत्ताईस से इक्यासी, और इस प्रकार उसका विस्तार होता जाता। अनंत, अनंत, सारा

ब्रम्हाण्ड, सारी सृष्टि उसी की रचना है। ओम से सब कुछ निकला, जब वापिस लौटते हैं अनंत से क्रमशः इक्यासी, सत्ताईस, नौ, तीन और वापिस एक में पहुँच जाते है। मैंने सुनी है एक घटना चंदूलाल के बारे में, उन्होंने कसम खा ली की शराब पीना छोड़ देंगे। दोस्तों ने पूछा कि यह अचानक कसम क्यों खा ली शराब छोड़ने की, चंदूलाल ने कहा कि क्या बताऊँ, मैं एक पत्नी से ही बहुत परेशान हूँ। मित्रों ने कहा कि हम समझे नहीं, एक पत्नी और शराब छोड़ने का क्या मतलब? चंदूलाल ने कहा कि तुम जानते नहीं जब मैं शराब पी लेता हूँ तो एक पत्नी की जगह मुझे तीन–तीन पत्नियाँ दिखाई देती हैं, मैं तो एक से ही बहुत परेशान हूँ। हमें जो द्वैत दिखाई दे रहा है, त्रैत दिखाई दे रहा है, द्रष्टा, दृष्य और दर्शन का, श्रोता, श्रव्य और श्रवण का, याद रखना उस तीन से हम वापिस एक पर आ सकते हैं। लेकिन यह जो मूर्छा है उसको तो तोड़ना ही होगा। शराब को तो छोड़ना ही होगा। वह विचारों की शराब है। आंतरिक शराब है, वह कोई केमिकल, रसायनिक द्रव्य नहीं है। बड़ी सूक्ष्म, हवाई शराब है। यह विचारों की श्रृंखला टूटे, वह टूट सकती है, घंटे की आवाज से टूट सकती है या तुम स्वयं अपने भीतर ही कोई ध्वनि करो उससे टूट सकती है। इस विधि को समझाते हुए ओशो कहते हैं, किसी मंदिर चले जाओ, वहाँ घंटा होगा, घंटे को हाथ में ले लो और रुको, पहले पूरी तरह से सजग हो जाओ, ध्वनि होने वाली है और तुम्हें उसका आरंभ नहीं चूकना है। समग्र रुपेण पहले से ही सजग हो जाओ, जैसे की इसी बात पर तुम्हारी पूरी जिंदगी निर्भर है। ऐसा समझो की अभी कोई तुम्हारी हत्या करने वाला है और तुम्हें पूर्ण सावधान रहना है। ऐसे सावधान रहो कि मानो तुम्हारी मृत्यु आने वाली है। पहले जब ध्वनि नहीं है, उस शून्यता पर ध्यान दो, फिर आंखे बंद कर लो, घंटे को बजाओ, अब ध्वनि के साथ गति करो। ध्वनि धीमी से धीमी, सूक्ष्म से सूक्ष्म होती जाएगी और अंततः खो जाएगी, इस ध्वनि के साथ यात्रा करो। सजग और सावधान बने रहो, ध्वनि के साथ उसके अंत तक यात्रा करो। उसके दोनों छोरों को, आरंभ और अंत को सुनो। पहले किसी बाहरी ध्वनि के साथ, घंटे के साथ प्रयोग करो फिर आंखे बंद कर के भीतर किसी अक्षर का जैसे ओम का उच्चारण करो, उसके साथ भी वही प्रयोग करो। जरा कठिन होगा, इसलिए हम पहले बाहर की ध्वनि से प्रयोग शुरू करते हैं, जब उसमें सक्षम हो जाओ तो भीतर करना आसान होगा, तब अपने अंदर उस आवाज को गूँजने दो और प्रतीक्षा करो कि वह आवाज जब समाप्त हो तब भी ध्वनि सुनाई पड़े, तब तुम निर्ध्वनि को, अनाहत नाद को सुनोगे उसे अनुभव करोगे, उसके साथ गति करो, इस प्रयोग को करने में समय लगेगा। कम से कम तीन माह लगेंगे। प्रयोग बड़ा सरल है, बड़ा आसान है। ओशो ने पुस्तक 'गहरे पानी पैठ' के तीसरे प्रवचन में मंदिर के विज्ञान को समझाया है। मंदिर में जो गुंबज बनाए गए, घंटे लटकाए गए, वह इसी प्रयोग को करने के लिए थे। बड़ा आसान सा प्रयोग है। कोई भी व्यक्ति ओंकार में इसके माध्यम से डूब सकता है। सुनो यह गीत–

ओम है प्यारे प्रभु का नाम सभी जगह है उसका धाम
उपनिषद कहते हैं उसे प्रणव, नानक कहते हैं सतनाम
जीवन की हर सुबह शाम सुनते रहो ओम का नाम
इसकी हद नहीं अनहद है आदि अंत रहित शाश्वत है
कहीं शुरू न कहीं समापन अभी यहीं मौजूद है हर क्षण
समस्त साधना का अंजाम सुमिरन रहे ओम का नाम
एकै साधे सब सधै मिट जाते सब क्षोभ
ओंकार में ध्यान से गिरते सब अवरोध
सुफल होंगे सारे काम भज लो प्यारे ओम का नाम

आओ इस ओम की साधना का हम क्रमवार प्रयोग करें।

सब से पहले खड़े होकर एक मिनट भस्त्रिका प्राणायाम कर के ऊर्जा का जागरण कर लें ताकि आप खूब संवेदनशील और जागरूक हो पायें। ... लंबी गहरी श्वास ... छोड़ने पर जोर ... पूरी ताकत लगा दें ... छोड़ें जोर से ... शरीर को डोलने दें, श्वास के साथ हिलने दें . .. शरीर का रोम–रोम कंपित हो जायें ... जितनी ज्यादा ऑक्सीजन भीतर होगी, उतने ही संवेदनशील हो पाएंगे... वह मूर्छा टूटेगी... और गहरी... और गहरी... ठीक।

अब दूसरा चरण, आराम से बैठ जायें, रीढ़ और गर्दन सीधी हों लेकिन शरीर शिथिल और विश्रामपूर्ण, सीधे बैठने में कोई तनाव ना हो, श्वास को धीमा छोड़ दें, शिथिल छोड़ दें, अब घण्टे की आवाज होगी... गौर से सुनें..., खूब सजग होकर... कल्पना करें कोई छुरा लेकर आप की छाती पर खड़ा है ... संभव है अगले क्षण आप की मृत्यु हो जाए, इतने जागरूक हो जायें... ध्वनि होने के पूर्व... ...ध्वनि के दौरान...ध्वनि के पश्चात...सघन जागरूकता...घंटे की स्थूल ध्वनि को अब बंद करते हैं... पालथी मार के बैठ जायें ... अब मानसिक ध्वनि... और भी सूक्ष्म...अब मन ही मन कहें... ओम... कहने के पहले... कहने के दौरान।। और कहने के बाद।। ...विदा होती ध्वनि को सुनते जायें ... भगवान शिव कहते हैं किसी भी अक्षर के उच्चारण के पूर्व... और उसके क्रमिक परिष्कार में, ... उसके समापन के पश्चात निर्ध्वनि को सुनो...

अंतिम चरण...विश्रामपूर्वक लेट जायें...ओंकार की ध्वनि में डूब जाएँ...इस निर्ध्वनि में डूबना ही समाधि है।
ओम नमो शिवाय।

तार–वाद्यों को सुनो

तार वाले वाद्यों को सुनते हुए उनकी संयुक्त केंद्रीय ध्वनि को सुनो; इस प्रकार सर्वव्यापकता को उपलब्ध होओ।

परमात्मा है अभी और यहीं, वर्तमान में और हमारा मन हमेशा गति करता है भूत में या भविष्य में और इसलिए मन का मिलन परमात्मा से कभी नहीं हो सकता। परमात्मा है परम शांति में जहां सारी गति समाप्त हो गयी। और मन का अर्थ ही है गति, प्रवाह, भागदौड़। स्थिरता और गति का मिलन नहीं हो सकता। कुछ लोग हैं जो अतीत की स्मृतियों में डोलते रहते हैं। जैसे भारत के लोग बैठ के रामलीला देख रहे हैं, रामायण सुन रहे, रामराज्य के आने की योजना बना रहे, फिर से अतीत कैसे पुनरावृत्त हो। अमरिका के लोग हैं भविष्योन्मुख, वे उटोपिया की, आदर्श राज्य की कल्पना कर रहे हैं। मंगल ग्रह पर बस्ती कैसे बसे, बस अभी और यहीं वर्तमान का जो क्षण है उसमें कोई नहीं जी रहा है। और वही एक मात्र वास्तविकता है। ना राम राज्य अब है और ना मंगल पर बस्ती अभी है। अभी जो है, जहां तुम बसे हो, जो तुम हो, जिस शरीर के भीतर तुम वास कर रहे हो वहां लौटकर आओ। यह सारी विज्ञान भैरव तंत्र की विधियां उस स्वयं पर वापसी के उपाय हैं। सपनों में हम दूर चले गये, खुद पर वापिस लौट आना है, जापान के झेन फकीर इसे 'रिटर्निंग टू दी सोर्स कहते हैं।'

मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन के बारे में, सड़क पर गर्दन झुकाये, नजरें नीची किए चला जा रहा था। किसी आदमी ने पूछा, क्या हुआ? गर्दन में कोई तकलीफ, सिर ऊपर नहीं उठ रहा? नसरुद्दीन ने कहा, नहीं, वास्तव में मैं एक मित्र से मिलने जा रहा हूं, उनके घर का दरवाजा छोटा है, तो कई बार ऐसा हुआ है कि उनके दरवाजे से मेरा सिर टकरा जाता है, तो मैं पहले से ही सावधानी बरत रहा हूं। सुनी नहीं वह तुमने कहावत कि सावधानी हटी और दुर्घटना घटी। तो मैं पहले से ही सिर नीचा कर के जा रहा हूं ताकि दुर्घटना दोबारा न हो वरना

बार बार सिर टकराते टकराते मेरा सिर ही गंजा हो जाएगा। और जानते हो उस दिन क्या हुआ, सामने से आ रही एक भैंस को ना देख पाने के कारण नसरुद्दीन रास्ते में भैंस से ही टकरा गया। हम बड़े दूर की योजना बनाते हैं, दूर की सोचते हैं और जो वर्तमान में है उससे हम चूक जाते हैं। मन भविष्य पैदा करने का, कामना का यंत्र है। इसलिए मन का और सत्य का कोई भी मिलन संभव नहीं। यहां तक कि सत्य की खोज और खोज का प्रयास भी बाधा है। इसलिए तंत्र सूत्र की बहुत सी विधियां तो तुम्हें ऐसे लगेंगी की इसमे कुछ करने को ही नहीं है। हां, वास्तव में कुछ करने को नहीं है, करने की जरूरत भी नहीं है, तुम्हें निष्क्रिय करना है, अगर कहीं तुम्हें कुछ भ्रांति हुई है कुछ करने को कहा जा रहा है तो वह तुम्हें धोखा देने के लिए क्योंकि तुम हो करने में उत्सुक और ले जाना है तुम्हें ना करने में। तंत्र विधियां बस वर्तमान के क्षण में आने में सहयोगी हैं। जो प्राप्त ही है उस पर नजर डालो। जो पहले से ही मौजूद है, तुम्हारा चैतन्य, उस पर दृष्टि को लाना है। कुछ लोग हैं जो मेरे पास आकर कहते हैं मुक्ति की चाहना, बड़ी मुश्किल बात कह रहें हैं, कि आवागमन की मुक्ति की चाहत है। मुक्ति का अर्थ ही है निर्वासना, अचाह की अवस्था। बंधन क्या है, कामना ही तो बंधन है। वासना ही तो हमारा बंधन है, वही तो हमारी जंजीरें हैं और यह आदमी कह रहा है कि मैं मुक्ति की कामना करता हूं अर्थात निर्वासना की वासना करता हूं। बड़ी मूढ़तापूर्ण बात हो गयी। अचाह की चाह कैसे की जा सकेगी। नहीं! मन के इस धोखे से सावधान! अचाह की चाह नहीं हो सकती। मत पूछना की इस क्षण में कैसे आ जाएं, बस आ जाओ। बस आ जाओ! परमात्मा और मोक्ष को अपनी वासना का हिस्सा मत बनाना। इसलिए धर्म की आकांक्षा करने वाले लोग ही धार्मिक नहीं हो पाते। याद करो शुरुआत विज्ञान भैरव तंत्र की, देवी पार्वती ने बड़े दार्शनिक प्रश्न पूछे थे, इस ब्रम्हाण्ड का सत्य क्या है? जीवन का परम रहस्य क्या है? और आश्चर्य! शिव ने एक भी बात का उत्तर ना दिया, वे सीधी विधि की बात करने लगे।

आज विधि नंबर इकतालीस में वे कहते हैं **हे देवी! तार वाले वाद्यों को सुनते हुये उनकी संयुक्त, केन्द्रीय ध्वनि को सुनो और इस प्रकार सर्वव्यापकता को उपलब्ध होओ।** ऐसा लगता है कि कोई तालमेल नहीं। पार्वती क्या पूछ रही हैं कि जीवन का परम रहस्य क्या है? यह ब्रम्हाण्ड की सृष्टि कैसे हुई? परमात्मा है या नहीं? और शिव कह रहे हैं किसी तार वाद्य को सुनते हुए, उसकी केन्द्रीय ध्वनि को सुनो और सर्वव्यापकता, वह जो ओमनीप्रेजेंट है उसको उपलब्ध हो जाओ। बिल्कुल ठीक कह रहे हैं, यही एकमात्र उपाय है। दार्शनिक प्रश्न का दार्शनिक उत्तर देने से मन को और भी गति मिलेगी, चंचल मन और भी चंचल हो जाएगा, इसलिए झटपट शिव एक विधि देते हैं, वर्तमान में थिर होना विधि का बायप्रोडक्ट है। याद रखना विधियों का संप्रदाय से कोई लेना–देना नहीं है। यह संयोग की बात है कि हिंदुओं ने तंत्रसूत्र की विधियां खोजीं, योग की विधियां खोजीं, इससे योग और तंत्र हिन्दू नहीं हो जाते। किसी ईसाई ने गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत

खोजा इससे गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत ईसाई नहीं हो जाता। जो परम सत्य है वह सार्वलौकिक और सार्वभौमिक है। फिजिक्स की खोज ईसाईयों ने की इससे फिजिक्स ईसाई नहीं हो जातीं और योग और तंत्र भारत में खोजे गए इसलिए भारतीय नहीं हो जाते। वे सारी मानवता के हैं। वे ठीक विज्ञान के समान है, मन कोई वस्तु नहीं है, एक प्रक्रिया है इस बात को समझना, सतत विचार, सतत कामना की प्रक्रिया है। इसमें कहां से हम छलांग लगाएं बाहर? कहीं से भी लगा सकते हैं। आज की यह छोटी सी विधि, किसी संगीत को सुनते हुये उसकी केन्द्रीय ध्वनि को पकड़ो और अचानक वर्तमान के क्षण में आ जाओ क्योंकि वह ध्वनि तो अभी हो रही है, यहीं हो रही है। इसमें कामना की कहां कोई जरूरत? इसमें अतीत की स्मृतियों की कहां कोई आवश्यकता? ध्वनि को सुनते सुनते श्रवण मात्रेण, सुनने मात्र से मुक्ति घट जाती है। सुनना अद्भुत है। आंखों से देखो तो उसमें एक सक्रियता होती है, एक्टिविटी है, सुनने में उतनी भी एक्टिविटी नहीं होती है। सुनना बिल्कुल ही पेसिव है। सच पूछो तो सुनने के लिए तुम कुछ करते नहीं। देखने में कुछ करना पड़ता है इसलिए देखते देखते थक जाते हो। सुनना बहुत अद्भुत है। आँख और कान के सूक्ष्म भेद को समझना। रात जब तुम सोये हो, आंखे तुम्हारी बंद हैं, कुछ भी दिखाई नहीं देता। उस गहन बेहोशी में भी तुम्हें सुनायी पड़ता है। अगर तुम्हारा नाम लेके पुकारूँ तो तुम अचानक उठ के बैठ जाओगे। कोई जोर की आवाज हो, तुम्हारी नींद टूट जाएगी। इसका मतलब हुआ, उस गहरी नींद में भी तुम सुन सकते हो। सुनने के लिए तुम्हारे अहंकार की, तुम्हारे मन की कोई आवश्यकता नहीं। सुनना सीधा चेतना से जुड़ा हुआ है और इसलिए सुनने की यह ग्यारह विधियां भगवान शिव जो दे रहे हैं बहुत अद्भुत विधियां है। कुछ करना ही नहीं, बिल्कुल निष्क्रिय और शून्य हो जाओ और सुनो, और तुम पाओगे तुम सर्वव्यापक के साथ जुड़ गए। ओशो इस विधि को समझाते हुये कहते हैं, तुम किसी वाद्य को सुन रहे हो, सितार या अन्य किसी वाद्ययंत्र को, उसमें कई स्वर हैं, सजग होकर उनके केन्द्रीय स्वर को सुनो, उस स्वर को जो उनका केंद्र है, जिसके चारो ओर वे सभी स्वर घूमते हैं, उसकी आंतरिक धारा को पकड़ो जो अन्य सभी स्वरों को सम्हाले हुये है। जैसे तुम्हारे समूचे शरीर को मेरुदंड, तुम्हारी रीढ़ सम्हाले हुये है, वैसे संगीत की भी एक रीढ़ होती है, संगीत को सुनते हुये सजग होकर उसमें प्रवेश करो, और उसके मेरुदंड को, केन्द्रीय स्वर को खोजो जो पूरे संगीत को सम्हाले हुये है। स्वर तो आते जाते रहते हैं लेकिन वह केन्द्रीय तत्व निरन्तर विद्यमान रहता है। उसके प्रति जागरूक बनो, बुनियादी रूप से मूलतः संगीत का उपयोग ध्यान के लिए किया गया था। भारतीय संगीत का विकास, भारतीय नृत्य का विकास विशेष रूप से ध्यान के विधि के रूप में हुआ। शिव कहते हैं तारवाले वाद्य को सुनते हुए उसकी संयुक्त केन्द्रीय ध्वनि को सुनो और इस प्रकार सर्वव्यापकता को उपलब्ध होओ। तब तुम उसे जान लोगे जो जानने योग्य है, तब तुम सर्वव्यापक हो जाओगे। संगीत के साथ उसके केन्द्रीय तत्व को पकड़कर तुम जाग जाओगे और उस जागरूकता के साथ तुम सर्वव्यापी हो जाओगे। अभी तो तुम कहीं एक जगह हो,

उस एक बिन्दु को अहंकार कहते हैं। अभी तुम उसी बिन्दु पर हो, अगर तुम जाग जाओगे तो वह बिन्दु विलीन हो जाएगा। तब तुम कहीं एक जगह नहीं रहोगे, सब जगह होओगे, सर्वव्यापी हो जाओगे तब तुम सर्वात्मा ही हो जाओगे, तुम सागर हो जाओगे तुम अनंत हो जाओगे। मन सीमा है, ध्यान असीमा में प्रवेश है। उस सागरीय अनुभव के लिए ही ओशो ने अपना नाम चुना है ओशनिक एक्सपिरियन्स, जिससे ओशो शब्द बनाया है। संगीत का उपयोग अधोगमन के लिए भी किया जाता है। विशेषकर आधुनिक संगीत कामुकता को जगाने के लिए, मनोरंजन के लिए, सुलाने के लिए, मन को और भी मूर्छित करने के लिए उपयोग में लाया जाता है। लेकिन मूल रूप में हमारे देश में शास्त्रीय संगीत की जो खोज हुई थी वह जीवन ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन के लिए हुई थी और सजग और संवेदनशील होने के लिए सूक्ष्म स्वरों के खेल शुरू हुये थे। संगीत का जन्म मंदिरों में हुआ था, नृत्य का जन्म भी मंदिरों में हुआ था। चीन में एक कहावत है जब कोई संगीतकार वीणा बजाने में कुशल हो जाता है तो वह अपनी वीणा को फेंक देता है। क्यों? क्योंकि उसके ह्रदय में अंतरवीणा गूंज उठती है। ओंकार का नाद निनादित होने लगता है। यह ओंकार क्या है? कहना बड़ा कठिन है सुनना बड़ा सरल। सुनने की कला सीखो। लेकिन वही एक चीज है जो हमें नहीं आती।

मैंने सुना है कि पुरुषों से कुछ कहो तो एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देते हैं और महिलाओं से कुछ कहो तो दोनों कानों से सुनकर मुंह से बाहर निकाल देती हैं। दूसरे कि बात सुनते ही नहीं। सुनने की कला सीखो। जब सुन रहे हो तो तुम्हारे विचार बीच में व्यवधान न बनें। तभी उस महासंगीत को, ओंकार को सुन पाओगे। किसी शायर ने लिखा है–

मुमकिन नहीं कि मौन का पर्दा उठा सकूँ, जो बात राजे दिल की है होठों पे ला सकूँ।
क्या रंग है, खुशबू है मय की खुमारी है चाहूं के जाम ए मस्ती सभी को पिला सकूँ।
कैसा तिलिस्म है तेरी महफिल के नूर में जी भर के देखूँ पर जरा भी दिखा न सकूँ।
एक धुन उठ रही है मेरे दिल के साज पर, खुद सुन सकूँ मगर न किसी को सुना सकूँ।

वह ओंकार की धुन ही भगवान शिव हम सबको सुनाना चाहते हैं वह मौन का पर्दा ही उठाना चाहते हैं। वही बात राजे दिल की है जो समझाने से समझ न आएगी लेकिन प्रयोग करोगे तो समझ में आएगी। तो चलो प्रयोग के लिए तैयार हो जाओ...

सबसे पहले तानपुरा की ध्वनि को सुनो और सुनते हुये झूमो। ... तानपुरा के विभिन्न स्वरों से हटकर उस केन्द्रीय स्वर को पकड़ते हुये मस्ती में डोलो। ...तानपुरा का संगीत बंद। ...आंख बंद करके अपने भीतर डूबो ...बिल्कुल स्थिर हो जाओ और मौन के संगीत को सुनो ... अंत में लेटकर विश्राम में डूबो। ... सर्वव्यापक, ओमनीप्रजेंट हो जाओ। अहंकार का बिन्दु विलीन हो गया ... वह केवल मूर्छा में आभासित होता है ...इस गहन जागरूकता के क्षण में ... न भविष्य है न अतीत है ... बस वर्तमान का यह मौन का संगीत, दि सायलेंट म्यूजिक ... ओम की यह ध्वनि यह ओमनीप्रजेंट है ... सर्वव्यापक है ...धन्यवाद... भगवान शिव को जिन्होंने यह अद्भुत विधियाँ दी ...और अहोभाव अपने प्यारे ओशो के प्रति जिन्होंने यह विधियाँ हमें सरल भाषा में समझाईं। ओम नमो शिवाय। ओशो शरणम् गच्छामि।

ध्वनि से मौन की ओर चलो

किसी ध्वनि का उच्चार ऐसे करो कि वह सुनाई दे; फिर उस उच्चार को मंद से मंदतर किए जाओ– जैसे–जैसे भाव मौन लयबद्धता में लीन होता जाए!

भगवान शिव कहते है पार्वती से, किसी ध्वनि का उच्चार ऐसे करो कि वह सुनाई दे, फिर उस उच्चार को मंद से मंद किए जाओ। जैसे जैसे भाव मौन लयबद्धता में लीन होता जाए। स्मरण रखना, शोरगुल के बीच में भी शांति का संगीत छुपा है। कोलाहल के बीच में भी परमात्मा की वाणी, अनाहत नाद गूंज रहा है, सिर्फ सुनने की कला चाहिए। कानों की संवेदनशीलता चाहिए । जगत के दो आयाम हैं, एक– 'जो है' और दूसरा– 'जो हो सकता है'। एक बीज है और एक फूल है, एक संभावना है और एक वास्तविकता। शोरगुल है, तब भी अनाहत नाद हो सकता है, इसकी खोज करनी होगी, श्रम करना होगा, साधना करनी होगी। हिन्दू जिसे कहते हैं इहलोक और परलोक, प्रगट बह्म और अप्रगट ब्रह्म। यह संसार प्रगट ब्रह्म है, अनाहत नाद अप्रगट ब्रह्म है। एक प्रत्यक्ष है दूसरा परोक्ष है। संसार और मोक्ष में कोई विरोध नहीं है। एक ही सत्य है एक तरफ से देखो तो संसार, दूसरी तरफ से देखो तो मोक्ष, एक तरफ से जिन्हें तुम ध्वनियों की भांति जानते हो, दूसरी तरफ से उन्हीं में निर्ध्वनि छुपी है। यही तंत्र की अद्भुत दृष्टि है। तंत्र में किसी चीज की आलोचना नहीं है क्योंकि तंत्र चीजों को द्वंद्व में तोड़ता ही नहीं है। एक समग्र सत्य को स्वीकार करता है, कोई विभाजन नहीं करता और हमारा मन है प्रिज्म जैसा, सूरज कि रोशनी उससे गुजरकर सात खंडों में टूट जाती है। तंत्र प्रिज्म का ठीक विपरीत है, सातों रंग मिलकर पुनः सफेद रंग हो जाते हैं। जब

हम समग्र स्वीकार कर लेते हैं पूरे जीवन का, तब मन में अद्भुत शांति का जन्म होता है। स्वीकार भाव से शांति प्रगाढ़ होती है और केवल ऐसा शांत व्यक्ति ही उस शांति के संगीत को, अनहद नाद को सुन पाएगा। दुनिया के अनेक धर्मों ने जीवन की बहुत निंदा की है, जीवन को पाप बताया, पिछले जन्मों के दुष्कर्मों का फल बताया, बड़ी आलोचना की, आवागमन से मुक्ति को ही जीवन का एकमात्र लक्ष्य बताया। यह जीवन के प्रति निषेधात्मक दृष्टि मन को उद्वेलित करेगी, बेचैन करेगी और यह अशांत व्यक्ति फिर कभी परमात्मा से न जुड़ सकेगा। जीवन के प्रति जिसके मन में धन्यता का भाव है, पूर्ण स्वीकार का भाव है, जिसके मन में जीवन का जरा भी विरोध नहीं, केवल वहीं शांत हो सकेगा। तो तंत्र ना तो भोग सिखाता है, न त्याग सिखाता है दोनों के पार जाना सिखाता है, ना तो राग न तो वैराग बल्कि वीतराग होना सिखाता है। बाकी शेष सभी धर्म अंतत् विक्षिप्तता का कारण बनते हैं। अगर तुम उन तथाकथित धर्मों की मान कर चलो, तब दो ही विकल्प संभव हैं या तो पाखंडी हो जाओ या पागल हो जाओ, तीसरा कोई विकल्प नहीं है केवल तंत्र ही एकमात्र स्वस्थ धर्म है। ना जहां पाखंड की जरूरत है न पागलपन की। इन दोनों से मुक्त होकर तुम सच में ही विमुक्त हो सकते हो। इसलिए शिव जो सिखा रहे हैं एक मात्र स्वस्थ धर्म वही है। इसकी अनिवार्य शर्त है सुनने की कला, यह जो ग्यारह विधियाँ अनाहत नाद से संबंधित जिनकी हम चर्चा कर रहे हैं यह श्रवण की कला से संबंधित है और वही सबसे कठिन बात हो गयी है। सुनना जैसे हमें आता ही नहीं। हम कुछ का कुछ सुनते हैं।

मैंने सुना है कि रात बिजली चली गयी और सरदार विचित्र सिंह ने अपने बेटे से कहा, ओये, पंखा चला, बड़ी गर्मी लग रही है। कर दी ना सरदारों वाली बात आज फिर, मेरे पूज्य पिताजी अगर पंखा चलाया तो मोमबत्ती ना बुझ जाएगी। सरदार का बेटा सरदार ही होगा। एक बैंक कर्मचारी से किसी ने पूछा, सायक्लोन के बारे में आप क्या जानते हैं? बैंक कर्मचारी ने कहा कि साइकल के लिए दिया गया लोन, सायक्लोन कहलाता है। शब्द तो हम सुन लेते हैं उसके पीछे का भाव नहीं पकड़ पाते। एक ऑर्थोपेडिक सर्जन, एक हड्डी स्पेशलिस्ट डॉक्टर अपनी प्रैक्टिस किया करते थे। अपने क्लीनिक में, उसके दवाखाने के पीछे तीन–चार बड़े–बड़े पेड़ थे। एक दिन कंपाउंडर ने आकर कहा कि डॉक्टर साहब इन पेड़ों पर ये छोटे छोटे बच्चे चढ़ते रहते हैं, आम तोड़ने के लिए, कभी खेलने कूदने के लिए, बड़ा खतरा रहता है कहीं गिर ना जाएं और शोर भी मचाते हैं, आप कहें तो इन बच्चों को भगा दूँ। डॉक्टर साहब बोले अरे नहीं नहीं उनके खेलने कूदने के दिन हैं बेचारों को खेलने कूदने दो, बच्चे हैं, शोर तो मचाएंगे ही, इसमें क्या इतना बेचैन होना? कंपाउंडर बोला, डॉक्टर साहब आप को तो बच्चों से बड़ा लगाव है, बड़ा प्रेम है। डॉक्टर ने मुस्कुराकर कहा, निश्चित रूप से बड़ा प्रेम है, आज पेड़ पर चढ़ रहे हैं, कल टपकेंगे भी तो, हड्डियाँ भी तो उनकी टूटेंगी, तभी तो इलाज के लिए मेरे पास आएंगे, खेलने दो, कूदने दो। अतः लोग क्या कहते हैं, क्या सुनते हैं, उसके भीतर के भाव को नहीं पकड़ पाते। भाव तक जाना होगा। शिव कह रहे हैं केवल ध्वनि तक ही

सीमित ना रहो, ध्वनि के पीछे भाव छिपा है, याद रखना एक छोटा बच्चा जन्मता है, उसके भीतर भाव है, माँ के प्रति, पिता के प्रति प्रेम का भाव है, सम्मान का भाव है उसके भीतर क्रोध का भाव भी है, घृणा भी करता है, मोह का भाव भी है, भय का भाव, रक्षा का भाव भी है। भावनाएं सब हैं उसके अंदर लेकिन उसे शब्द नहीं आते, विचार नहीं आते, धीरे–धीरे बाद में बोलना सीखेगा, शब्द सीखेगा, शब्द के बाद विचार, फिर विचार के बाद स्कूल, कॉलेज, फिर बड़ा ज्ञान उपलब्ध करेगा लेकिन यह सब बाद में सीखी गयी बातें हैं, भाव वह लेकर ही आया था जन्म के साथ, भाषा लेकर नहीं आया था। संयोग से कोई भारत में पैदा हुआ तो एक भाषा बोलने लगा, फ्रांस में पैदा होता तो दूसरी भाषा बोलने लगा, सोवियत रूस में जन्म हुआ तो तीसरी भाषा बोलता है। यह भाषा सांयोगिक है, समाज ने सिखायी है। यह बच्चा स्वयं लेकर नहीं आया।

एक बार ऐसा हुआ कि भेड़िया किसी बच्चे को जंगल में उठा ले गया, वह बच्चा वहीं जंगली माहौल में बड़ा हुआ। लगभग 15–20 साल की आयु में वह किसी को मिला, लेकिन वह कुछ भी न बोल सका, उसके कंठ से कोई उच्चारण न हो सका, वह केवल भेड़ियों जैसी ही आवाज निकालता था, उसके अलावा और कुछ भी आवाज उससे न निकलती थी। इसका मतलब हुआ भाषा समाज के द्वारा, शिक्षा के द्वारा सिखायी गयी है, भाव उससे बहुत गहरा है। तो शिव कह रहे हैं पार्वती से कि ध्वनि का उच्चार करो, वह सुनाई दे, धीरे धीरे उसके भाव को पकड़ो और भाव के द्वारा फिर शब्दातीत और ध्वनि शून्यता में प्रवेश कर जाओ। याद रखना मन है ध्वनि का जोड़ और हृदय है हमारा भाव। मन से हृदय की ओर यात्रा करनी है, तभी यह विधियाँ काम कर सकेंगी। अगर ध्वनि व्यवस्थित है, स्वस्थ है तो शरीर और मन स्वस्थ रहता है। यदि यह ध्वनियाँ, यह विचार अराजक हों जाएँ तो आदमी पागल हो जाता है। यदि ध्वनि शून्य हो जायें तो अपनी अंतर्आत्मा में प्रवेश हो जाता है। अच्छा होगा किसी प्रिय ध्वनि से शुरू करो क्योंकि उसके साथ तुम्हारे भाव जुड़े होंगे। किसी हिन्दू से मैं कहता हूँ अगर तुम्हें जपना है तो राम–राम जपना, तुम अल्लाह का जाप मत करना, किसी मुसलमान को कहूँगा कि अल्लाह का स्मरण करो, अल्लाह का जप करो। जप हमेशा वही करना जो शब्द तुम्हें बहुत प्रीतिकर हैं, छोड़ो राम और अल्लाह को, तुम्हें अपने प्रेमी का नाम, बेटे का नाम या खुद का नाम पसंद है तो तुम उसका जाप करो उसके साथ तुम्हारा भाव जुड़ा हुआ है, अगर भगवान का नाम पसंद है तो उसे जपो। जिससे भी तुम्हारा भाव है, लगाव है उसी का नाम जपना। इसलिए पुराने जमाने में धर्म परिवर्तन करने की मनाही थी। दो पुराने धर्म हैं हिन्दू और यहूदी दोनों ही कन्वर्शन की, धर्म परिवर्तन की आज्ञा नहीं देते। यह बात ठीक है, क्योंकि ऊपर–ऊपर से विचार बदले जा सकते हैं। आप तर्क–वितर्क से किसी को प्रभावित कर सकते हैं लेकिन उसके अचेतन हृदय को नहीं बदल सकते। एक हिन्दू जो जिंदगी भर राम कि पूजा करता रहा चालीस साल की उम्र में ईसाई हो जाता है, ठीक अब वह ईसाई क्रियाकाण्ड ऊपर–ऊपर से करने लगा, उसके विचार ईसाई हो गये लेकिन भीतर उसके

राम ही बसे रहेंगे, उन्हें नहीं हटाया जा सकता। राम की जगह जीसस क्राइस्ट कभी भी ना ले सकेंगे।

ओशो के एक मित्र मराठी भाषी थे। तीस साल से जर्मनी में थे। वहीं उन्होंने विवाह किया, वहीं नौकरी करते थे। तीस साल से भारत आये भी नहीं थे। फिर वृद्धावस्था में बीमार पड़े, कोमा में चले गये, कभी–कभी कोमा से थोड़ा सा होश आता बेहोशी अवस्था में तब वे अचानक मराठी भाषा बोलने लगते। तो उस अस्पताल के कर्मचारी हैरान हुये कि क्या कह रहे हैं कुछ समझ में नहीं आ रहा, बाद में पता चला कि मराठी भाषा बोल रहे हैं। तीस साल से जिस भाषा का उन्होंने प्रयोग नहीं किया था, तीस साल से जर्मनी ही बोलते थे, जर्मनी भाषा के वे प्रोफेसर थे वहाँ पर, मराठी तो भूल चुके थे लेकिन जब बेहोश हुये, कोमा में अचानक मराठी भाषा बोलने लगे। वह अचेतन में छुपी हुयी है। जर्मन भाषा ऊपर–ऊपर है। वह बाद में सीखी हुयी है। तो अच्छा होगा एक ऐसी ध्वनि का उच्चार करना जो तुम्हारे हृदय को स्पर्श करती हो, जिसके प्रति तुम्हारा प्रेम और राग हो। इसलिए धर्म परिवर्तन की मनाही होती थी। विधर्मी को मंदिर में प्रवेश की इजाजत नहीं थी। यह बात सुनने में कठोर लगती है लेकिन जरा भी कठोर नहीं है, क्योंकि मंदिर कोई पर्यटन का स्थल थोड़े ही है? कोई टूरिस्ट प्लेस नहीं है जहां घूमने आए हों। साधना की जगह है। अगर कृष्ण के भक्त वहाँ आते हैं तो सिर्फ कृष्ण के भक्त ही आयें। फिर शिव के भक्त को, राम के भक्त को वहाँ आने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि उनके मन में कृष्ण के प्रति वैसा भाव नहीं होगा। वह जो बचपन से कृष्ण का भक्त है उसके भीतर बात ही अलग है, जब वह कहता है एक बार कृष्ण, उसके कहने में प्रार्थना का भाव जुड़ा होता है, यहाँ हम ओशो सन्यासी जब शाम को कीर्तन संध्या के समय कहते हैं 'ओशो' तो बात अलग होती है, कोई इसको देख के नाटक करे, और यूं ही कहे ओशो, उसके भीतर तो कोई भाव न होगा। तो असली बात भाव की है, शब्द की नहीं। तो राम ठीक लगे तो रामराम जपना, शिव ठीक लगे, ओम नमः शिवाय जपना। जिससे तुम्हें लगाव हो। ओशो से तुम्हें प्रेम है, ओशो, ओशो जपना, शब्द महत्वपूर्ण नहीं हैं, भाव महत्वपूर्ण हैं। तो आज जो प्रयोग हम करने जा रहे हैं, अच्छा होगा कि वह कहीं गुंबजवाली जगह में या मंदिर में, चर्च में करना या हो सके तो अपने घर में एक छोटा सा कक्ष खाली कर लेना, जिसमें आवाज गूँजे, वह आवाज गूंजना बड़ा सहयोगी होगा। कोलाहल वाली जगह में यह प्रयोग ना करना। शांत एकांत वाली जगह पर करना। हो सके तो सुबह उठ के करना जब अभी सड़क के हॉर्न बजने शुरू नहीं हुये, वह बिल्कुल उपयुक्त समय होगा। विधि इस प्रकार होगी। दोनों हाथ आकाश की ओर उठाकर प्रभु के स्मरण से भरके अपने प्रिय देवता का नाम, उदाहरण के लिए राम, राम, राम जपना शुरू करें, खुद अपनी ही आवाज सुनें...राम, राम, राम... राम, राम, राम ... राम, राम, राम ... राम, राम, राम... दूसरा चरण, भगवान राम की मूर्ति या उनके चित्र का स्मरण करें... और बैठकर धीमे स्वर में राम, राम का जाप करें। राम, राम, राम, ... राम, राम, राम... अब तीसरा चरण, अजपा जाप– अब राम का उच्चार करना छोड़ दें,

मानसिक जाप शुरू करें, होठों से आवाज ना निकालें, कंठ का उपयोग ना हो... दोनों हाथ जोड़कर श्रद्धा में बार बार झुकें और मन ही मन राम, राम, राम कहते रहें... अंतिम चरण, अब असली अजपा जाप, अभी तक तो मन में जप रहे थे। अब उसे भी छोड़ दें, शांत, शून्य, शिथिल हो जाएँ। केवल हृदय में राम के प्रति जो भाव था, अब उस भाव को समस्त अस्तित्व के प्रति निवेदित कर दें, राम की मूर्ति को भी कल्पना से हटा दें। बस! हृदय का भाव रह जाए सुनें ... क्या कोई आवाज आपको सुनाई पड़ती है..., ...ठीक राम, राम, राम जैसी...राम से मिलती जुलती...जैसे कोई बहुत जल्दी जल्दी राम राम राम राम कह रहा हो, ओवर्लैपिंग... स्पष्ट रूप से राम राम राम नहीं... पर इतनी लगातार कि जैसे केवल अंत का 'ममममम्'..... ही सुनाई दे रहा हो, बस इक गूंज जैसी... इसे ध्यान से सुनें, गौर से, और सुनते सुनते समाधि में डूब जायें...धन्यवाद!

श्वास में हकार सुनो

मुंह को थोड़ा सा खुला रखते हुए मन को जीभ के बीच स्थिर करो। अथवा जब श्वांस चुपचाप भीतर आए, हकार ध्वनि को अनुभव करो।

विज्ञान भैरव तंत्र की 43वीं विधि में भगवान शिव कहते हैं, हे देवी! मुंह को थोड़ा सा खुला रखते हुए, मन को जीभ के बीच स्थिर करो। अथवा जब श्वांस चुपचाप भीतर आए, हकार ध्वनि को अनुभव करो। बड़ी सरल और बड़ी चमत्कारी यह विधि है। पहले तो यह समझ लो, मन यानि एकाग्रता। जहां पर भी तुम एकाग्र करो, वहीं मन मौजूद हो जाता है। सामान्यतः हम सोचते हैं कि खोपड़ी के भीतर जो मस्तिष्क है, वह मन है, यह हमारी धारणा गलत है। ब्रेन नॉट माइंड। जब कोई व्यक्ति प्रेम से भरा है, उसका मन हृदय में तल्लीन है। जब आप एक फूल की सुगंध का आनंद ले रहे हैं, आपका मन नाक में मौजूद है। जब आप शीतल जल से नहा रहे हैं, फव्वारे के नीचे खड़े हैं, तब आपका मन आपकी त्वचा में केंद्रित हो गया। मन कहीं भी केन्द्रित हो सकता है। इस बुनियादी बात को समझ लो फिर यह सूत्र समझ में आ जाएगा। हां, गणित करने के लिए सिर में होना जरूरी है। इसलिए आज का शिक्षित, बुद्धिजीवी व्यक्ति मस्तिष्क केन्द्रित हो गया है और इसलिए आधुनिक बुद्धिजीवी व्यक्ति के लिए, कामभोग भी व्यर्थ सा हो गया। प्रेम में डूबना भी संभव न रहा।

जीवन के छोटे–मोटे ऐन्द्रिक सुख बुद्धिजीवी के लिए गहराई से प्राप्त नहीं हो पाते। जब आदमी बुद्धिजीवी नहीं थे, जब इतनी शिक्षा का प्रचार–प्रसार नहीं हुआ था, तब लोग ज्यादा शारीरिक सुखों को भोग पाते थे। रूखी–सूखी रोटी भी बहुत स्वाद दे जाती थी। लेकिन अगर खोपड़ी में विचार ही विचार चल रहे हों, भविष्य की योजनाएं चल रही हों, कुछ चिंतन–मनन चल रहा हो, छप्पन प्रकार के भोजन भी रखें हों तोउसमें कोई स्वाद हासिल न कर पाओगे। क्योंकि तुम्हारा मन जीभ पर केन्द्रित ही नहीं हो पाता, वह विचारों में उलझा हुआ है, हिसाब–किताब लगा रहा है। तो सबसे पहले इस बात को समझ लो, मन मस्तिष्क में नहीं है, मन स्वतंत्र रूप से कहीं भी गति कर सकता है। मन अर्थात एकाग्रता। जापान के समुराई यह प्रशिक्षण पाते हैं कि अपने मन को हारा केन्द्र पर स्थित करें, नाभि के दो इंच नीचे। बचपन से ही उन्हें यह शिक्षा दी जाती है, श्वांस की विशेष पद्धतियां सिखाई जाती हैं। उदर (पेट) केन्द्रित होकर वे जीते हैं।

हारा केन्द्र पर जो व्यक्ति स्थित है, उसका इंट्यूशनपावर, अतःप्रेरणा की शक्ति बहुत जागरूक हो जाती है। दो समुराई जब युद्ध करते हैं, तलवार चलाते हैं, बड़ा मुश्किल होता है कोई नहीं जीत पाता, न कोई हार पाता। उनको दोनों को ही पता है, इसके पहले कि दूसरा हमला करे, ढाल वहां पहले मौजूद हो जाती है। उनकी अंतःप्रेरणा जागी हुई है, इंट्यूशनपावर बहुत तेज है। बिना सोचे, बिना विचारे वे तुरंत अपनी रक्षा का उपाय कर लेंगे। दूसरा कहां हमला करने वाला है? अभी उसने किया नहीं, कहां करने वाला है, यह पहले से ही उन्हें पता है। भारत में एक बहुत अद्भुत गणितज्ञ हुआ रामनुजम, पिछली सदी में। एक प्रकार का चमत्कार ही था। गणित की पहेली उसे बताओ, इसके पहले कि बोलने वाले ने बोलना बंद किया, रामानुजम उसका उत्तर बता देता। गणित का लंबा सवाल जिसे हल करने में दो घंण्टे लगेंगे, रामानुजम को दो सेकण्ड भी न लगते। सवाल पूरा बता भी नहीं पाए कि उत्तर आ गया। इंग्लैण्ड का एक बहुत प्रसिद्ध गणितज्ञ उस जमाने का हार्डी, रामानुजम का दीवाना हो गया। उसने रामानुजम को सारी दुनिया में घुमाया। जगह–जगह प्रदर्शन करवाए कि अद्भुत है यह व्यक्ति। जिस गणित को हल करने में बड़े से बड़े गणितज्ञ को चार दिन लगेंगे इसको चार सेकण्ड भी नहीं लगते।

ओशो ने कहा है कि जहां तक मेरी समझ है, रामानुजम पिछले जन्म में जापानी समुरायी रहा होगा। उसकी सारी जीवन उर्जा हारा केन्द्र पर फोकस थी। उसे सोचने–विचारने की जरूरत नहीं, सीधा हल निकल आता है, सीधा उत्तर मिल जाता है। शिव इस विधि में कह रहे हैं, मुंह को हल्का सा खोलो, जीभ के मध्य में ध्यान को केंन्द्रित करो। स्थूल से सूक्ष्म की तरफ जाना बहुत सरल है। सीधा विचारों के पार जाना बहुत कठिन है। लेकिन जीभ बोलने का यंत्र है, वाणी का यंत्र है, उसी के माध्यम से वाणी प्रकट होती है। अगर हम जीभ पर ध्यान एकाग्र कर लें, जीभ के सूक्ष्म कंपनों को महसूस करें, जो व्यक्ति लंबे साधना में डूबते हैं, उन्हें धीरे–धीरे जीभ के कंपन महसूस होने लगते हैं। जब हम बोल नहीं रहे,

तब भी जीभ में अति सूक्ष्म कंपन हो रहे हैं। मस्तिष्क में विचार चले, उनकी गति और तुरंत जीभ में एक हल्का सा कंपन होता है। जिसे दूसरे तो महसूस न कर पाएंगे, लेकिन आप स्वयं उन्हें जान सकते हैं। तीन हफ्ता मौन के प्रयोग में इन कंपनों के प्रति खूब सजगता बढ़ जाती है। और तब शिव की यह विधि करना बहुत आसान होगा। अधखुला मुंह करके जैसे कि तुम बस कुछ बोलने ही वाले हो, ध्यान को वहां पर एकाग्र करो। मन के विचार शांत हो जाएंगे, जैसे ही जीभ के कंपन बंद हुए। वे आपस में एसोसिएटेड हैं, कुछ चीजें आपस में जुड़ी हुई हैं, जैसे श्वांसों का चलना, विचारों से जुड़ा है, पुतलियों का गति करना, विचारों की गति से जुड़ा है, ठीक उसी प्रकार से जीभ के सूक्ष्म कंपन विचारों की परिवर्तनशीलता से और गतिमयता से जुड़े हुए हैं। अगर हम जीभ को स्थिर कर लें, मन भी ठहर जाएगा और थम जाएगा। तब उस अमनी दशा में ओंकार का नाद सुनाई पड़ना शुरू होगा। शिव सीधा–सीधा ओंकार के नाद के बारे में नहीं कहते, वे कहते हैं हकार ध्वनि को अनुभव करो। 'ह' जैसी अतिसूक्ष्म आवाज सुनाई देगी। जीभ मन का प्रगट रूप है, वाणी का यंत्र है। जीभ के साथ–साथ गति करने पर पहले इस हकार को महसूस करोगे और अंततः हकार भी खो जाएगा, ओंकार आ जाएगा। अनाहत नाद में प्रवेश हो जाएगा।

मैने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन के घर एक मेहमान आया था। उसने पूछा पांच वर्षीय बेटे फजलू से कि पिछले साल मैं जब आया था, तुम लोग अपनी छोटी बहन को बोलना सिखा रहे थे, क्या वह बोलना सीख गई? फजलू ने कहा, अंकल बोलना तो वो कब की सीख गई, अब सारे घर के लोग उसे चुप होना सिखा रहे हैं। और ये काम ज्यादा कठिन जान पड़ता है। पहले हम सोच रहे थे कि बोलना सिखाना कठिन है। एक बार बच्चे बोलना शुरू कर दिए, विशेषकर लड़कियां बहुत जल्दी बोलने लगती हैं। लड़के अगर दो–ढाई साल में बोलते हैं, लड़कियां साल–सवा साल में ही बोलने लगती हैं और बोलती ही जाती हैं, फिर बंद ही नहीं होती हैं, एक बार शुरू हो गई तो बस...। जब मैं मेडिकल कालेज में पढ़ता था, मेरे मेडिसिन के प्रोफेसर ने समझाया कि कोई पेशेंट जिंदा है कि मर गया इसकी जांच करने के लिए बड़ा आसान उपाय है। अगर पुरुष मरीज है तो उसकी नब्ज, हृदय की धड़कन और श्वांस की गति देख लो अगर बंद हो गई हैं तो समझो कि मर गया है और स्त्री अगर मरीज है तो इतनी सब जांच करने की जरूरत नहीं, अगर उसकी ज़बान चलना बंद हो गई, तो समझो गई।

चंदूलाल के बेटे ने अपनी मम्मी से आकर कहा कि मम्मी इस पेंसिल को बीच से तोड़ना है। घर में कोई अस्त्र–शस्त्र मिल नहीं रहा, आप अपनी जीभ से इसको काट दें। मम्मी ने कहा हद हो गई, मैं अपनी जीभ से इसको कैसे काट सकती हूं? बेटा बोला कि पापा तो हमेशा कहते हैं कि तुम्हारी जीभ कैंची की तरह चलती है। शिव कह रहे हैं इस जीभ के प्रति सजग बनो। ओशो इस विधि को समझाते हुए कहते हैं, मुंह को थोड़ा सा खुला रखो मानो कि तुम बोलने जा रहे हो और तब श्वांस को तुम अपने भीतर ले आओ और उस ध्वनि के प्रति सजग रहो। जो भीतर जाती श्वांस से उत्पन्न होती है, वह ध्वनि ही 'हकार' है। चाहे श्वांस भीतर

जाए या बाहर इस ध्वनि को तुम्हें पैदा नहीं करना पड़ता, वह अपने आप उत्पन्न होती। बहुत धीमा स्वर है लेकिन वह हकार जैसा मालूम होगा। वह बहुत मौन आवाज है, मुश्किल से सुनाई देगी। उसे सुनने के लिए तुम्हें बहुत सजग होना पड़ेगा। लेकिन उसे पैदा करने की चेष्टा मत करना। अगर तुमने पैदा करने की चेष्टा की तो चूक जाओगे, वास्तविक ध्वनि से चूक जाओगे। पैदा की हुई ध्वनि किसी काम की न होगी। जब–जब श्वांस भीतर या बाहर आती–जाती है तब जो ध्वनि अपने आप नैसर्गिक रूप से होती है, वही असली 'हकार' है।

भगवान शिव कहते हैं, भीतर आती श्वांस के साथ प्रयोग करना, बाहर जाती श्वांस के साथ नहीं। क्योंकि बाहर जाती श्वांस के साथ तुम भी बाहर चले जाओगे, जब कि ध्यान की सारी चेष्टा भीतर जाने की है, अंतर्यात्रा की है। अतः भीतर आती श्वांस के साथ 'हकार' ध्वनि को महसूस करो। देर–अबेर तुम अहसास करोगे कि यह ध्वनि सिर्फ जीभ में ही नहीं, कंठ में हो रही है और तब वह और भी धीमी हो जाएगी, तुम्हें सुनने के लिए और प्रगाढ़ होश की जरूरत पड़ेगी। जीभ से शुरू करो, सजगता को बढ़ाओ, फिर कंठ में महसूस करो। उसके बाद धीरे–धीरे हृदय में तुम उसे सुनने लगोगे और जब वह हृदय में पहुंचती है तब तुम मन के पार चले गए। ये सारी विधियां भीतर आत्मा तक पहुंचने का सेतु निर्मित करने के लिए हैं। धीरे–धीरे वह सेतु निर्मित होता है। ये मंत्रों के प्रयोग चाहे हकार, चाहे ओंकार ये सब हमें अपने परमात्मा में प्रतिष्ठित कर देंगे।

मैंने सुना है मुल्ला से किसी ने पूछा कि तुम जंगल यात्रा में जा रहे हो, मान लो शेर मिल गया और उसने हमला कर दिया। मुल्ला ने कहा, मैं उसको मार डालूंगा। मित्र ने पूछा कैसे? मुल्ला ने कहा, मैं पोटेशियम सायनाइट अपने साथ ले जा रहा हूं, जैसे ही शेर मुझ पर हमला करेगा मैं खुद पोटेशियम सायनाइट खा लूंगा। जब वो मुझे खाएगा तो जहर उसके शरीर में पहुंच जाएगा और वो मर जाएगा। ये मंत्र भी बस ऐसे ही हैं। मंत्र मन को मारने के उपाय हैं। तुम एक बार मंत्र का प्रयोग शुरू कर दो और तुम पाओगे, जिस मन ने इस मंत्र को शुरू किया था, वह मन स्वयं ही समाप्त हो गया। मुल्ला नसरुद्दीन किसी से कह रहा था कि विज्ञान की प्रगति के क्या कहने, दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति कर रहा है विज्ञान। शीघ्र ही एक ऐसा तेजाब (एसिड) खोजा जाने वाला है जो हर चीज को, मोम को, शीशा को, लकड़ी को, प्लास्टिक को, लोहा को, सोना को, चांदी को दुनिया की सारी धातुओं को, उनके मिश्रणों को, आर्टीफिसियल बनाए गए बर्तनों को, हर चीज को गला देगा, हर चीज को पिघला देगा। ऐसा तेजाब खोजा जा रहा है। किसी शंकालु आदमी ने पूछा कि मुल्ला, इस तेजाब को फिर रखा किस बर्तन में जाएगा? मुल्ला ने कहा, ये बात बाद में खोजी जाएगी। ब्रह्म का नाद, ओंकार वह तेजाब है, तुम जिस बर्तन में भी उसे रखो, वह उसी को गला देगा। इस अहंकार के बर्तन में, मन के बर्तन में रखना शुरू भर तो करो, तुम पाओगे धीरे–धीरे ब्रह्म ने अहम् को नष्ट कर दिया। कोई बर्तन इसे समा नहीं सकता, यह सबको गला देगा।

पहले जानो ओम् है क्या, एक ओंकार सत्तनाम।
भाव सहित उसमें डूबो, ओम् है प्यारा गोविन्द नाम।
ध्वनि ओम् की है अति-पावन, महामंत्र का सुर मन-भावन।
यह शाश्वत संगीत है अनुपम, यही सृष्टि का शब्द प्रथम।।
मध्य, अंत, सर्वत्र है राम, भज लो प्यारे ओम् का नाम
ओम् कहो कि ओंकार कहो, हृदय में बारम्बार गहो।
शब्द की महिमा अपरम्पार, ओम् करेगा बेड़ा पार।।
जीतोगे जीवन संग्राम, सुमिरन रहे ओम् का नाम

चलो इस ओंकार की तरफ एक-एक कदम चलते हैं।

पहला चरण- अधखुला मुंह रखें थोड़ी सी जीभ बाहर निकालें। दूसरा चरण- धीमी गहरी श्वांस लें। तीसरा चरण- जीभ के मध्य बिंदु पर मन को एकाग्र करें। चौथा चरण- सांस की आवाज सुनें। पांचवां चरण- जीभ के सूक्ष्म कंपन और श्वांस से भी धीमी आवाज हकार का अनुभव करें। छठवां चरण- जीभ मुंह के भीतर, अभी भी अधखुला मुंह, श्वांस को सामान्य कर दें ताकि हकार की ध्वनि और सूक्ष्म हो जाए, कंठ में उसे महसूस करें। सातवां चरण- मुंह बंद कर लें, जीभ बिल्कुल स्थिर हो जाए, सीने के भीतर हृदय की अंतर्गुफा में गूंजते हुए अनाहत नाद को सुनें। अपने दोनों हाथ जोड़ लें। कहें ओम नमो शिवाय, ओम नमो शिवाय। सामने झुक जाएं और प्रेमभाव से कहें, ओशो शरणम गच्छामि, ओशो शरणम गच्छामि, ओशो शरणम गच्छामि। ध्यान का प्रयोग समाप्त हुआ।

धन्यवाद। ओम् नमः शिवाय। ओशो शरणं गच्छामि।

अ ओर म के बिना ओम्

अ और म के बिना ओम ध्वनि पर मन को एकाग्र करो।

जीवन हमें भेंट देता है केवल एक घास का फूल
मान रखो तो यह चंपा है, नहीं रखो तो यही बबूल।
उपहारों की कीमत से तुम, भावना की गहराई न नापो,
निज विवेक से करो मंत्रणा, निर्णय के क्षण में मत कांपो।
अनुभव को परिपक्व करेगी, हर एक छोटी मोटी भूल,
अनुभव को परिपक्व करेगी, हर एक छोटी–मोटी भूल,
सीखो तो है छड़ी जादू की, वरना जिंदगी है त्रिशूल।
जीवन हमें भेंट देता है, केवल एक घास का फूल,
मान रखो तो यह चंपा है, नहीं रखो तो यही बबूल।
एक भावना भर का अंतर, सिर्फ प्यार में और घृणा में,
प्याले की दीवाल सिर्फ है, बीच तृप्ति में और तृष्णा में।
सौंप रहा प्रभु नित स्वप्न की, चुटकी भर गंधाई धूल,
सौंप रहा प्रभु नित स्वप्न की, चुटकी भर गंधाई धूल,
स्वीकारो तो यह चंदन है, अगर नहीं तो सभी फिजूल।

अगर स्वीकारो जीवन को, उसकी पूर्णता में तो सुभाषित चंदन है, वरना सब धूल धमास है, सब फिजूल का कचरा है। जीवन को हम किस दृष्टि से देखते हैं? यहां परमाणु में परमशक्ति का भण्डार छिपा है। यहां बीज में फूल छिपे हैं, मूर्त में अमूर्त विराजमान है, देह में आत्मा मौजूद है, पदार्थ में परमात्मा। लेकिन उद्घाटन करना होगा, अनावरण करना होगा। हिन्दु कहते हैं कि कण–कण में भगवान हैं, लेकिन जिसे अपने भीतर ही समझ न आया, उसे बाहर कैसे दिखाई देगा भगवान। कीचड़ में कीचड़ ही नहीं है, कमल की संभावना भी है। काम में राम छिपा है, प्रेम में प्रार्थना छिपी है। क्षुद्र में विराट छिपा है, लेकिन खोजना होगा, अन्वेषी की आंखें चाहिए। जीवन के अराजक शोरगुल में शांति का संगीत भी बज रहा है। यहीं रात के सन्नाटे में रोज कृष्ण की बांसुरी बजती है, सुन सको तो सुनो, नहीं सुनोगे तो बस एक कोलाहल का नाम है जिंदगी। सुन लो तो मधुर संगीत बन जाए।

शोरगुल और संगीत में क्या भेद होता है, कभी आपने गौर किया? स्वर तो वही सात होते हैं, सारे–गामा–पाधा–नी, अगर उनको अराजक ढंग से जमा दो तो कोलाहल पैदा हो जाता है। कोई संगीतकार कुशलता पूर्वक उन्हीं को लयबद्ध तरीके से जमा देता है और अद्भुत संगीत जनम जाता है। रंग वही हैं, कैनवास वही है, वृक्ष वही है, एक कुशल चित्रकार, उन रंगों से चित्र में जान डाल देता है और कोई विक्षिप्त आदमी उन्हीं रंगों को तितर बितर कर कैनवास को नष्ट कर देता है। उसने तो सिर्फ कैनवास को नष्ट कर दिया पर अधिकांश लोग अपनी जिंदगी के कैनवास को भी यूं ही नष्ट करके चले जाते हैं। इसमें कैनवास की भूल नहीं है, वृक्ष की भी भूल नहीं है, रंगों की गलती नहीं है, जीवन का दोष नहीं है। जीवन की निंदा और आलोचना मत करना, शायद हमें वह कला ही नहीं आई। पर यह जिंदगी हमें बार–बार अवसर देती है कि हम वह कला सीखें। परमात्मा अति करुणावान है। हम एक बार में नहीं सीख पाए कोई बात नहीं, फिर जन्म मिलेगा, फिर आओ फिर सीखो। ये जिंदगी एक पाठशाला है, एक स्कूल है। जब तक हम कला सीख न लें, शोर–गुल के बीच में संगीत को खोजने की, तब तक हम यहां से उत्तीर्ण न हो सकेंगे।

आज विज्ञान भैरव तंत्र की 44वीं विधि में भगवान शिव कहते हैं देवी से, अ और म के बिना ओम ध्वनि पर मन को एकाग्र करो। बड़ी अद्भुत विधि है लेकिन यह उन्हीं के काम आ सकेगी, जो संगीत में कुशल हैं। स्वरों के साथ जिन्होंने अभ्यास किया है। जो स्वरों के सूक्ष्म भेद को पकड़ पाएंगे। अपने कानों को संवेदनशील बनाना होगा। ओम में तीन अक्षर हैं अ, उ और म। अंग्रेजी के ए, यू और एम से मिलकर ओम बना है। गौर से सुनना ओम को, जरा धीरे–धीरे उच्चार करके देखना, और तुम पाओगे तीन स्वरों का संगम। संयोग है, संगम है। फिर धीरे–धीरे इस भेद को गहराना, क्रमशः छोड़ना शुरू करना। पहले अ को छोड़ देना, सिर्फ उ और म को पकड़ना। फिर म को भी जाने देना, सिर्फ मध्य का स्वर उ ही रह जाए और अंततः तुम पाओगे, वह भी विदा होने लगा। जैसे–जैसे वह स्वर विदा होने लगेगा,

तुम्हारी संवेदनशीलता और जागरूकता बढ़ेगी। वह जागरूकता ही असली बात है, ओम तो बहाना है।

असली बात है तुम्हारी संवेदनशीलता को बढ़ाना, तुम्हारी सेंस्टीविटी का विकास करना। तुम कैसे अत्यंत जागरूक हो जाओ, इतने जागरूक की कोई विचार न रहे। तो ध्वनि या मंत्र उसमें मदद कर सकते हैं। एक ध्वनि पर एकाग्र करो तो बाकी की ध्वनियों से, अनर्गल विचारों से मुक्त हुए और अंत में उस ध्वनि को भी जाने देना, उसको पकड़े मत रहना। अक्सर मंत्रोचार करने वाले साधक एक भूल करते हैं। वे जिस मंत्र को जप रहे हैं, फिर उसको नहीं छोड़ते, उसको पकड़ के रखते हैं। मैने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन एक सड़क से गुजर रहा था। एक दीवाल पर उसने एक पोस्टर लगा देखा, मोस्ट वांटेड। किसी अपराधी की फोटोग्राफ थी। पुलिस वालों ने इश्तिहार निकाला था कि जिंदा या मुर्दा इसको पकड़ कर लाने वाले को 10 लाख रुपए इनाम। मुल्ला नसरुद्दीन ने पोस्टर देखा, उसने कहा कि हद हो गई। अरे! जब ये इतना बड़ा मुजरिम था, तो फोटो उतरवाने जब आया था तो क्यों नहीं पकड़ के रखा, जाने ही क्यों दिया। मंत्रोचार करने वाले वही भूल करते हैं पकड़ के रख लेते हैं, फिर जाने ही नहीं देते। नहीं ओम को भी जाने देना। अ को जाने देना, म को जाने देना, फिर अंत में उ को भी जाने देना, फिर पीछे क्या बचेगा? पीछे एक विराट शून्य रह जाएगा। याद रखना पीछे तुम भी नहीं बचोगे।

मुझे एक और किस्सा याद आया नसरुद्दीन का, गांव का एक दर्जी बहुत सारे लोगों के कपड़े लेकर भाग गया। सारे दुखी ग्राहक इकट्ठे होकर उसे कोस रहे थे। किसी ने कहा कि मेरा बिल्कुल नया कोट था, सिर्फ एक बटन टूटी थी, बटन टांकने के लिए उसको दिया था। मेरा महंगा, कीमती कोट लेके भाग गया। किसी ने कहा कि मैने चार जोड़े कुर्ते–पाजामे सिलने के लिए दिए थे। पांच हजार रुपए का कपड़ा था, महंगा, रेशमी कपड़ा लेकर वह भाग गया, कोई कुछ कह रहा था, कोई कुछ कह रहा था। सबसे ज्यादा दुखी था नसीरुद्दीन। लोगों ने पूछा नसीरुद्दीन, नसरुद्दीन ने एकदम गालियां देनी शुरू कर दी। कहा कि मेरा तो सब कुछ लुट गया। अब मेरे पास तो कुछ बचा ही नहीं, जिंदगी भर शायद मुझे नग्न ही रहना पड़े। लोगों ने कहा तुम्हारा क्या–क्या ले गया? नसरुद्दीन ने कहा तुम्हें क्या बताऊं क्या ले गया, मुझे तो बुरी तरह से उसने लूट लिया। अरे मेरा नाप ले गया। अब मैं भविष्य में भी कपड़े बनवाऊं तो कैसे बनवाऊं, किससे बनवाऊं? जब 'अ' चला जाएगा, 'म' चला जाएगा, 'उ' चला जाएगा, मैं तुमसे कहता हूं तुम भी चले जाओगे, तुम्हारा नाप भी चला जाएगा। तुमने अपना जो रूप और आकार मान रखा है, वह तुम्हारा वास्तविक होना नहीं है, उस नाप को भी चले जाने देना। तुम अमाप, असीम, निराकार, चैतन्य भर पीछे रह जाएगा बस, वही वास्तव में तुम हो।

तो मंत्र को पकड़ के मत रखना, मंत्र सिर्फ एक छोटा सा उपाय है। संसार से मुक्त करके एक विषय पर आओ, फिर क्रमशः उस एक विषय को भी छोड़ दो। जैसे स्वीमिंग पुल

में जंपिंग बोर्ड होता है, तुम दौड़ते हुए जाते हो जंपिंग बोर्ड पर और अंत मे छलांग लगा जाते हो जंपिंग बोर्ड से भी। मंत्र भी जंपिंग बोर्ड की तरह है, मन फैला हुआ है किनारे की तरह। इस किनारे से छलांग न लग सकेगी। तो किनारे को छोड़ दो, जंपिंग बोर्ड ने तुम्हारी मदद की किनारे को छुड़ाने में, अब जंपिंग बोर्ड पर ही मत जंप करते रहना। कोई जप रहा है राम–राम–राम, अब वो छोड़ ही नहीं रहा है राम को। राम को भी छोड़ दो, राम जंपिंग बोर्ड था। अब छलांग लगा जाओ उस महाशून्य में। तो मंत्र का सदुपयोग करना। मंत्र का खूब दुरुपयोग हुआ है, न समझी की वजह से और ओम का मंत्र तो महामंत्र है। प्रणव है परमपिता का नाम, इसी से सृष्टि का अंजाम। उपनिषद के ऋषियों ने ओम को प्रणव कहा है। प्रणव यानि ध्वनि, आवाज, अस्तित्व की ध्वनि, ऐसी ध्वनि जो हम पैदा नहीं कर रहे 'अनाहतनाद'।

प्रणव है परम पिता का नाम इसी से सृष्टि का अंजाम,
भर–भरकर ओशोधारा से पीते रहो समाधि जाम।
समय निकालो सुबहो शाम सुमिरन कर लो ओम का नाम।
ईश्वर प्राणिधान से शीघ्र समाधि फलती है,
बाधाएं मिट जाती सब महा चेतना जगती है।
फिर अनहद में करो विश्राम, सुमिरन कर लो ओम का नाम।
हे मनुज जन्म पाने वालो जीवन को धन्य बना डालो।
नाहक इधर–उधर न दौड़ो अंतर्ध्वनि से नाता जोड़ो।
निश्चित होगा शुभ परिणाम, भज लो प्यारे ओम का नाम।

लेकिन वो शुभ परिणाम मैं तुम्हें बता दे रहा हूं। तुम्हारा नाप–जोख भी न बचेगा। ओशो ने हरि ओम् तत्सत की व्याख्या करते हुए कहा, कि हरि के दो अर्थ हैं, एक ईश्वर और दूसरा चोर, ओम की ध्वनि महाचोर ध्वनि है। हरि ओम तत्सत्– 'हरि' यानि हरण करने वाला, चुराने वाला, 'तत्सत्' यानि यही है परम सत्य, दिस इज़ दि ट्रुथ, हरि ओम तत्सत्, अर्थात ओम महाचोर है। महाचोर की परिभाषा ओशो ने की, छोटा–मोटा चोर तो तुम्हारे कपड़े ले जाता, नाप ले जाता, धनसंपत्ति ले जाता, कम से कम तुम्हें तो छोड़ जाता है, बड़ी कृपा करता है। महाचोर वो है जो तुम्हें भी ले जाए। तुम्हारे अहंकार को भी ले जाए। और अंततः तुम ही न बचो। परमात्मा ऐसा परम चोर है, ये बड़ा प्यारा शब्द ऋषियों ने खोजा 'हरि', हरण करने वाला। 'मनमोहन' मन को मोहने वाला, दिल को चुराने वाला, परमात्मा महाचोर है। पीछे कुछ भी न बचेगा, महा शून्यता बचेगी। तो इस विधि को हम तीन–चार स्टेप में करेंगे।

सब लोग तैयार हो जाएं।

सबसे पहले ओम का उच्चार करें। ओम इस ढंग से कहें कि उसमें अ, उ और म के प्रति तुम्हारी संवेदनशीलता बने। अउम्। अउम्। अउम्। दूसरा चरण, अ को छोड़ दें, सिर्फ उम् रह जाए। तीसरा चरण, म को भी छोड़ दें, सिर्फ उ की ध्वनि। चौथा चरण, उ को भी जाने दें। निर्विचार मौन। अब सुने तिब्बती घंटी जैसी एक आवाज गूंज रही है। अब घंटी की आवाज भी बंद करते हैं। इससे मिलती-जुलती अनहद ध्वनि में डूबो। यह डूबना तुम्हें विलीन कर देगा, तुम्हें समाप्त कर देगा, तुम नहीं रह जाओगे, बस परमात्मा ही बचेगा। ओम नमो शिवाय।

चुपचाप शब्द का उच्चार करो

अः से अंत होने वाले किसी शब्द का उच्चार चुपचाप करो।
और तब हकार में अनायास सहजता को उपलब्ध होओ।

असली राम-नाम है ओम्, रमा है इसमें सारा व्योम।
यहीं रहस्य ऋषियों ने जाना, मौन में मुनियों ने पहचाना।।
शब्द परम आनन्द का धाम, सुमिरन रहे ओम् का नाम।
नहीं छोड़ना है परिवार, रहना है अपने घरबार।
बाहर करना सम्यक काम, रखो याद अंदर सतनाम।।
दिन या रात, सुबह या शाम, भज लो प्यारे ओम् का नाम।
मस्जिद-मंदिर-चर्च छोड़ के, मन के अंदर खोज-खोज के।
ब्रह्मनाद जो सुनता प्रतिक्षण, वही ब्रह्म-ज्ञाता है ब्राह्मण।।
भीतर अपने करो विश्राम, सुमिरन रहे ओम् का नाम।
ओम् ही शिव है, ओम् ही शक्ति, ओम् से अनुरक्ति है भक्ति।
ज्ञानी, योगी, तपस्वी, त्यागी, सभी ओम् के हैं अनुरागी।।
सब करते बारम्बार प्रणाम, भज लो प्यारे ओम् का नाम।

सारे व्योम में, अंतरिक्ष में एक नाद गूंज रहा है, उसको ओम कहो, कि राम कहो, कि नाम कहो, कि सतनाम कहो। कोई भी शब्द वैसे तो उस पर ठीक लागू नहीं होता। वह

अनाहत ध्वनि ही अनहद नाद कहलाती है, परमात्मा का स्वर कहलाती है। ईश्वर यानि वही स्वर जो सारे अस्तित्व में गूंज रहा है। आज भगवान शिव, मां शक्ति को फिर से संकेत करते हैं, उस ओंकार की तरफ। विज्ञान भैरव तंत्र की विधि नंबर 45 में वे कहते हैं, हे देवी! अः से अंत होने वाले किसी शब्द का चुपचाप उच्चार करो और तब 'हकार' में अनायास सहजता को उपलब्ध होओ। उस सहज के साथ जुड़ना ही सहज योग है। परमात्मा की इस ध्वनि अनहद नाद में डूबना सहज योग कहलाता है। सहजता का अर्थ जो हमारे साथ ही जन्मा। आपने दो शब्द सुने होंगे, अग्रज और अनुज। बड़े भाई को कहते अग्रज जो हमसे आगे, पहले पैदा हुए और अनुज जो पीछे, बाद में पैदा हुए छोटा भाई, अनुजा यानि छोटी बहन। तो सहज क्या होगा फिर? जो न आगे जन्मा, न पीछे जन्मा, जो हमारे संग, साथ ही जन्मा, सह। सह से बना सहज, जिसे हम लेकर ही पैदा हुए हैं, जो हमारा आंतरिक स्वभाव है, जो हमसे भिन्न नहीं, जो हमारा ही होना है।

उसमें डूबने की एक और बड़ी अद्भुत विधि, अः से अंत होने वाले किसी शब्द का धीरे–धीरे उच्चार करो। कोई भी मंत्र काम देगा। उदाहरण के लिए अल्लाह, बड़ा प्यारा शब्द है सूफियों का यह शब्द। ह से अंत हो रहा है, 'हकार' ध्वनि में ले जाएगा और 'हकार' फिर ओंकार में ले जाएगी। ह से अंत होने वाले शब्द पर क्यों भगवान शिव का जोर है? इसे भी समझना, भीतर आती श्वांस में हम 'ह' न कह सकेंगे, हमेशा बाहर जाती श्वांस में ही कहना होगा। जब 'अल्लाह' कहोगे श्वांस बाहर जाएगी, भीतर रिक्तता पैदा होगी, शून्यता उत्पन्न होगी, उस शून्यता में मौन संगीत सुना जा सकेगा। जब हम श्वांस भीतर ले जाते हैं, वह जीवन का प्रतीक है। जीवन दिन जैसा है, प्रकाश जैसा है। जब हम श्वांस बाहर छोड़ते हैं, एक छोटी मृत्यु घटित होती है, ऐसा मानो। अंधकार जैसा छा जाता है भीतर। प्रकाश में चीजें सीमित हो जाती हैं, उनके रूप उभर के दिखाई देते हैं, अंधकार में सब अरूप और निराकार हो जाता है।

प्रकाश में सीमा है, अंधकार में कोई सीमा नहीं है, अंधकार सदा ही अनंत है, असीम है। न उसकी कहीं शुरूआत होती, न कहीं समाप्ति होती। भीतर उस महाशून्य में, अंधकार में डूबकर ही ओंकार में डूबना हो सकता है, समाधि लग सकती है। इसलिए जो लोग अंधकार से डरते हैं, वे समाधि से भी डरते हैं। जिन्हें अंधकार से भय लगता है, वे समाधि में न डूब पाएंगे। भीतर जाने में वे घबराने लगेंगे। मृत्यु और समाधि पर्यायवाची हैं एक अर्थ में, इसलिए तो हम किसी की कब्र को भी कहते हैं समाधि और ध्यान की पराकाष्ठा को, ओंकार में डुबकी को भी समाधि कहते हैं। इसके पीछे कारण है, छोटा बच्चा जब पैदा होता है, पहली श्वांस उसके भीतर जाती है और जब कोई व्यक्ति मरता है, आखिरी श्वांस उसकी बाहर जाती है। प्रतीकात्मक रूप से हर भीतर आती श्वांस जीवन का प्रतीक और हर बाहर जाती श्वांस मृत्यु का प्रतीक है। इस मृत्यु को जो अंगीकार करने को राजी है, वह समाधिस्थ हो सकेगा, वह अपने भीतर के अमृत तत्व को पहचान सकेगा।

इसके लिए कहां से शुरूआत करें? सुनने से शुरूआत करें। 'हकार' की ध्वनि को सुनें। तो पहले धीरे–धीरे उच्चार करेंगे, 'हकार' को पकड़ेंगे। अल्लाह में धीरे–धीरे अल को छोड़ देंगे, अकेला 'लाह' रह जाए। फिर 'लाह' में से ला को भी छोड़ देंगे, अकेला 'अः' रह जाए। फिर इस 'अः' में जो विसर्ग है, उसको पकड़ना। फिर उसकी ध्वनि भी खो जाए, सिर्फ भाव रह जाए और फिर वह भाव भी खो जाए और तब तुम्हें 'हकार' ध्वनि सुनाई पड़नी शुरु होगी। धीरे–धीरे 'हकार' ओंकार में बदल जाएगी। भीतर की वह ध्वनि क्या है? वास्तव में ओंकार कि 'हकार', कहना थोड़ा मुश्किल। बाहर की किसी भी ध्वनि से उसकी तुलना हम नहीं कर सकते। अनाहत नाद सुनने की विधियां जो यहां हम 11 विधियों की चर्चा कर रहे हैं, ये उन लोगों के बड़े काम की हैं, जिनके कान संगीत सुनने में कुशल हैं। जिन्होंने थोड़ी–बहुत भी बहिर्संगीत की साधना की है, वे भीतर के संगीत में बड़ी आसानी से वे डूब पाएंगे। लेकिन हम तो बड़े विचित्र लोग हैं, बाहर के स्वर भी हम कहां सुनते हैं, बात–चीत भी कहां सुनते हैं, कुछ का कुछ सुन लेते हैं। सुनने में कुशल बनो, बाहर श्रवण की कला सीखो, वह कला तुम्हें भीतर ले जाएगी, बड़े काम की सिद्ध होगी। लेकिन हम बाहर भी नहीं सुनते।

मैने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन एक दफ्तर में, किसी सरकारी दफ्तर में नौकरी किया करता था, सारे लोग उससे पूरी तरह त्रस्त आ गए थे। सब उसकी निंदा और आलोचना करते, सारे आफीसर्स उससे नाराज थे लेकिन मजबूरी थी नौकरी से निकाल भी नहीं सकते थे। सरकारी काम, कौन निकाले, कौन झंझट करे। किसी प्रकार से नसरुद्दीन को सह रहे थे, लेकिन नसरुद्दीन को भी बड़ा अपमान होता था। सब लोग उसकी उपेक्षा करते, निंदा करते, आलोचना करते, पीठ पीछे उसकी हंसी उड़ाते, अंततः उसने एक दिन तय किया कि मैं नौकरी से इस्तीफा देता हूं। सारे दफ्तर में खुशी की लहर छा गई। नसरुद्दीन ने रिजाइन कर दिया। सब लोगों ने सोचा अब जा ही रहा है बेचारा, अच्छे से इसको फेयरवेल दे दें जाते–जाते। एक पार्टी आयोजित की गई, सारे कर्मचारी, सहयोगी, मित्र, ऑफीसर्स, उच्चाधिकारी सभी लोग पार्टी में आए। डिनर के बाद औपचारिकतावश लोगों ने नसरुद्दीन की बड़ी तारीफ की, मंच पर आके। फूल मालाएं पहनाई, कहा की इसके जैसा कर्मठ व्यक्ति नहीं देखा, बड़ा लगनशील है, किसी ने कहा बहुत ईमानदार है, किसी ने कुछ, किसी ने कुछ, जाते–जाते लोग अच्छी–अच्छी बातें कहते हैं। नसरुद्दीन सुनता रहा, सुनता रहा, सुनता रहा, अंत में नसरुद्दीन खड़ा हो गया, उसने कहा कि क्षमा करें, मेरे बारे में आप लोगों के इतने सुंदर विचार सुनकर मैं बहुत प्रभावित हुआ हूं और जब आप लोग इतना सम्मान और प्यार मेरा करते हैं फिर मैं इस्तीफा क्यों दूं, अपना इस्तीफा वापिस लेता हूं। इसलिए सिर्फ सुनना ही नहीं, भीतर का भाव भी पकड़ना।

सुना है सेठ चंदूलाल, स्टेशन पर प्लेटफार्म नंबर तीन पर खड़े ट्रेन का इंतजार कर रहे थे। जैसे ही अनाउंसमेंट हुआ कि यात्रीगण कृपया ध्यान दें, फलां–फलां ट्रेन प्लेट फार्म नंबर तीन पर आ रही है। अचानक चंदूलाल छलांग लगा के, रेल की पटरियों पर जाके लेट गए।

प्लेटफार्म के लोग चिल्लाए कि अरे! क्या कर रहे हो, मर जाओगे ट्रेन वहां आ रही है। चंदूलाल ने कहा कि मैं नहीं मरूंगा, तुम लोग मरोगे, सुना नहीं अभी–अभी अनाउंस हुआ कि ट्रेन प्लेटफार्म पर आ रही है। मैं तो सुरक्षित जगह पटरी पे आ गया। बाहर सुनने की कला पहले सीखो फिर भीतर सुनने की कला भी आ जाएगी। हम तो बाहर भी बिल्कुल मूर्छित हैं, कुछ का कुछ सुन लेते हैं। मैंने सुना है, विचित्तर सिंह ने नया मकान किराए से लिया। पहली ही बरसात सारी छत में से जगह–जगह से पानी चू रहा था। विचित्तर सिंह ने अपने मकान मालिक को बुला के कहा कि देखिए हुजूर, कुछ तो इंतजाम करिए, घर में हमें छाता लेकर घूमना पड़ता है, घर के भीतर। दिन में दो चार बार यूं ही स्नान हो जाता है। कुछ तो व्यवस्था कीजिए। मकान मालिक ने कहा, जरूर दिन में तीन चार बार स्नान हो जाता है, हम अवश्य ही कुछ व्यवस्था करेंगे। अभी हम आपको टॉवेल और साबुन वगैरह भिजवाते हैं। श्रवण की कला विकसित करनी होगी, सुनने का एक विज्ञान सीखना होगा।

धर्म कला भी है और विज्ञान भी है। ये विज्ञान भैरव तंत्र की विधियां बिल्कुल वैज्ञानिक हैं, कोई लगनपूर्वक ठीक से करे तो सुनिश्चित रूप से परिणाम आएंगे। हां, एक फर्क है, साइंस में और रिलीजन में, विज्ञान की खोज बाहर के जगत में है, अध्यात्म की खोज स्वयं के भीतर है। दिशा का फर्क है, ढंग वही है। किसी अंधविश्वास की जरूरत नहीं, किसी मान्यता की जरूरत नहीं, किसी सिद्धांत की जरूरत नहीं, चिंतन–मनन की कोई आवश्यकता नहीं। सारे दर्शन शास्त्रों को उठाकर अलग रख दो, सीधे–सीधे तंत्र की विधियां करो और तुम पाओगे, तुमने जीवन के परम सत्य को जान लिया। इस विधि को समझाते हुए दि बुक ऑफ द सीक्रेट्स के 31वें प्रवचन में ओशो कहते हैं, जब श्वांस बिल्कुल बाहर निकल जाए, अः, तब जीवन से तुम रिक्त हो गए। उस क्षण अपने भीतर देखो जब श्वांस बिल्कुल बाहर जा चुकी है। दूसरी श्वांस लेने के पहले क्षण भर के अंतराल में गहरे उतरो, उस शून्यता में झांको, आंतरिक मौन और शान्ति के प्रति सजग हो। उस क्षण में तुम बुद्ध हो, अगर तुम उस क्षण को पकड़ सके तो तुम्हें वह स्वाद मिल जाएगा जैसे बुद्ध ने जाना और एक बार वह स्वाद जान लिया गया तो फिर तुम आने–जाने वाली श्वांस से अलग स्वयं को कर सकते हो। श्वांस चलती रहेगी, आती–जाती रहेगी और तुम उस चैतन्य में स्थित हो जाओगे, जिसे तुमने अपने भीतर पहचान लिया। वह तो सदा–सदा से ही वहां था, बस उसे सिर्फ उघाड़ना था। और उसे उघड़ना इतना आसान है, खासकर उस समय जब तुम श्वांस से रिक्त, खाली होते हो।

इसलिए भगवान शिव कहते हैं, अः से अंत होने वाले किसी शब्द का चुपचाप उच्चार करो और तब हकार में अनायास सहजता को उपलब्ध होओ। जब श्वांस बाहर जाती है, तब सब कुछ बाहर निकल जाता है। इस क्षण किसी प्रयास की जरूरत नहीं होती। अनायास, बिना प्रयास के, सहजता को, बोध को उपलब्ध होओ, मृत्यु के इस क्षण को उपलब्ध होओ और यही वह क्षण है जब तुम द्वार के बिल्कुल करीब हो, परमात्मा के दरवाजे के बिल्कुल पास हो। जो प्रगट है, जो असार है, वह बाहर चला गया। इस क्षण में तुम लहर नहीं, तुम सागर

हो। अभी तुम बिल्कुल सागर के निकट हो। जरा से भी बोधपूर्ण हो सके, सजग हो सके तो तुम भूल जाओगे कि मैं लहर हूं, फिर लहरें आएंगी–जाएंगी किंतु तुम लहरों के साथ कभी तादात्म्य न बनाओगे, तुम सागर बने रहोगे। एक बार तुमने जान लिया कि तुम सागर हो तो फिर तुम लहर नहीं हो सकते। श्वांस के भीतर आने–जाने की इस प्रक्रिया के साथ, मन में हो रहे परिवर्तनों का गहन निरीक्षण करना। बाहर जाती श्वांस के साथ उत्पन्न हो रही शून्यता का उपयोग करना। आओ अल्लाह के उच्चार के द्वारा हम भी इस विधि को करें, माँ प्रिया के संग, धन्यवाद।

माँ ओशो प्रिया–

तंत्र सूत्र की 45वीं विधि में आपका स्वागत है। खड़े होकर जोर से अल्लाह का जाप करेंगे। खड़े हो जाएं और जोर की आवाज में अल्लाह का जाप करें। अल्लाह, अल्लाह, अल्लाह, अल्लाह। दूसरा चरण है, अब केवल लाह का जाप लाह, लाह, लाह, लाह। अब केवल ह का उच्चार शेष रह जाए। ह.ह.ह.ह.ह.ह.ह.ह.ह.ह.ह.ह.ह.। बैठ जाएं, आंखे बंद रखें। पहले अल्लाह और फिर लाह और फिर धीरे–धीरे ह का मानसिक जाप करना है। मन ही मन में बोलें अल्लाह से शुरू करें। और अल्लाह इतना तेज हो जाए कि लाह बचे और लाह इतना तेज हो जाए कि केवल ह बचे। ह के साथ धीमे धीमे ओंकार में डुबकी लगाएं। आज का ध्यान यहीं समाप्त हुआ।

हरि ओम तत्सत्।

the sound of silence
represents the beginning, the creation of the universe and everything within it.

अनाहत ध्वनि में प्रवेश करो

कानों को दबाकर और गुदा को सिकोड़कर बंद करो, और ध्वनि में प्रवेश करो।

आज हम विज्ञान भैरव तंत्र की विधि नंबर 46 को समझेंगे और उसका प्रयोग करेंगे। कहते हैं भगवान शिव, हे देवी! कानों को दबाकर और गुदा को सिकोड़कर बंद करो और अंतस ध्वनि में प्रवेश करो। इससे पहले कि हम भीतर की सूक्ष्म ध्वनि को सुनने में सफल हों, हमें बाहर संवेदनशीलता साधनी होगी। छोटी–छोटी आवाजों के प्रति संवेदनशील बनना सीखो और न केवल आवाजों के प्रति, सुगंध के प्रति, स्वाद के प्रति, स्पर्श के प्रति, रोशनी के प्रति, सब भांति से अपनी संवेदनशीलता को जगाओ। तभी यह संभव है कि ध्वनि के प्रति संवेदनशील बन पाओगे। एक बार बाहर की सूक्ष्म ध्वनियों को सुनने में सक्षम हो गए, फिर भीतर की आंतरिक ध्वनि, जिसे संत अनाहत नाद कहते हैं, एक ओंकार सतनाम कहते हैं, उसे भी सुन पाओगे।

जापान में झेन फकीर अपने शिष्यों को, ध्वनि सुनने के लिए प्रशिक्षित करते हैं। उनकी साधना की खास पद्धति है। कोई शिष्य आता है, गुरू उसे एक कुआन देता है, कुआन अर्थात ऐसी पहेली, जिसका कोई बौद्धिक हल संभव नहीं है। उदाहरण के लिए गुरू कहता है, जाओ एक हाथ की ताली सुनो। अब एक हाथ की ताली कैसे होगी। जहां भी ताली होगी दो हाथ की होगी, दो चीजें टकराएगी तभी आवाज होगी। मैं बोल रहा हूं, मेरे तालु से जीभ टकरा रही, होंठ से होंठ टकरा रहे, मेरे स्वरयंत्र में वोकल कार्ड से हवा टकरा रही, उससे आवाज उत्पन्न हो रही। हवा चलती है पेड़ों से सरसराहट होती, हवा और पत्ते टकराते, पहाड़ी नदियां इतना शोर करती, क्योंकि चट्टानों से पानी टकराता। जहां–जहां आवाज है, वहां–वहां चोट से वह उत्पन्न होती है। बाहर के जगत की सभी आवाजें आहत ध्वनियां हैं। भगवान शिव इशारा कर रहे हैं, अनाहत ध्वनियां सुनने के लिए। तुम बाहर की सूक्ष्म ध्वनियों को सुनने की कोशिश करो। कभी पेड़ के नीचे बैठ के पत्तों की आवाज सुनो, कभी रात के सन्नाटे में, सुनसान में बगीचे में या अपने कमरे में बैठकर आवाजें सुनो, रात झींगुर की आवाज सुनो, पक्षियों की आवाज सुनो, किसी नदी के किनारे बैठकर नदी की आवाज सुनो।

पश्चिम के प्रसिद्ध लेखक हर्मन हैस का उपन्यास है 'सिद्धार्थ'। उसमें उस उपन्यास का जो नायक है, वह गौतम बुद्ध के पास दीक्षा लेने जाता है। उसका मित्र तो दीक्षा ले लेता है, किंतु सिद्धार्थ स्वयं दीक्षा नहीं लेता। वह बुद्ध के प्रवचन सुनके वापिस लौट आता है। वह एक नाविक के साथ रहने लगता है। नदी के किनारे छोटी सी झोपड़ी है, वो माझी है। कुछ और करने को नहीं है, दिन में दो–चार बार कोई यात्री आते हैं, जिन्हें नाव से उस पार ले जाना होता है। चुपचाप बैठे–बैठे नदी की आवाज सुनते–सुनते, सिद्धार्थ को ध्यान की घटना घट जाती है, समाधि फलने लगती है और उस उपन्यास में सिद्धार्थ परम ज्ञान को उपलब्ध हो जाता है। उसका जो मित्र गौतम बुद्ध का भिक्षु बन गया था, वो अंत तक भी ज्ञान को प्राप्त नहीं कर पाता और सिद्धार्थ ने कोई साधना न की, बस नदी की आवाज सुनते–सुनते परम समाधि फल गई। भगवान शिव उसी तरफ इशारा कर रहे हैं, एक हाथ की ताली सुनो। झेन फकीर जिसे कहते हैं, दि साउंड ऑफ वन हैन्ड क्लैपिंग। क्योंकि परमात्मा अद्वैत है, वहां दो नहीं हैं। इसलिए चोट तो हो नहीं सकती, आहत, ध्वनि तो हो नहीं सकती, अनाहत ही होगी। इसलिए नानक कहते हैं, एक ओंकार सतनाम। एक विशेषण जोड़ देते हैं क्योंकि वहां दो नहीं हैं।

उस ध्वनि को सुनने की सबसे आसान विधि है, कानों को दबा लो और गुदा को सिकोड़ लो। हमारी जो मेरुदण्ड है, इस मेरुदण्ड के दो छोर हैं। निचला छोर मूलाधार, जो कि गुदाद्वार के पास होता है और ऊपरी छोर सहस्रार, सिर के सबसे ऊपरी भाग में। सात चक्र हैं हमारे। सामान्यतः हमारी ऊर्जा अधोगामी होती है, निचले द्वारों की ओर बहती है। इस ऊर्जा को अगर ऊपर लाना है तो कपालभाति की प्रक्रिया, मूलबंध की प्रक्रिया से यह ऊर्जा ऊपर की ओर चढ़ने लगती है। गुदा को सिकोड़ना, मूलाधार पर बंध लगा देता है, इसी को

मूलबंध कहते हैं। जैसे किसी नदी में हमने बांध बना दिया हो, पीछे पानी रुकता जाए, रुकता जाए और इस पानी को हम नहर के द्वारा कहीं और ले जा सकें। खेतों में सिंचाई के लिए या बिजली पैदा करने के लिए। ठीक इसी प्रकार अगर मूलबंध लग जाए, तब हमारी ऊर्जा सहस्रार की ओर बहने लगती है, एक नई नहर खुल जाती है। ऊपर के चक्रों की ओर ऊर्जा की गति होने लगती है और तब कानों को बंद करके, भीतर की ध्वनि को सुनना बहुत ही आसान है। सुनने के लिए अपने आप को प्रशिक्षित करना होगा।

सामान्यतः हम बिल्कुल सुनते ही नहीं, करीब-करीब बहरे जैसे हैं, बस काम चलाऊ सुनते हैं। उसमें भी बड़ी मुश्किल से काम चलता है। मैंने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन की प्रेमिका उससे पूछ रही थीं। क्या मेरी शादी के बाद भी तुम मुझसे इतना ही प्यार करोगे? नसरुद्दीन ने कहा अरे! जरूर, जरूर, निश्चय ही। जल्दी बताओ तुम कब और किससे शादी करने जा रही हो? एक और घटना सुनी है मैंने, नसरुद्दीन का बेटा फजलू स्कूल से आया, परीक्षा की असफलता का कार्ड उसने घर में दिखाया, नसरुद्दीन बहुत नाराज हुआ, उसने कहा कि अरे! देखा टीचर ने तुम्हें कितने कम नंबर दिए? दिल होता है कि दो झापड़ लगाऊं। फजलू ने कहा, जरूर पापा जरूर, चलो मेरे साथ, मैने उस टीचर का घर भी देख रखा है। हम सुनते ही नहीं, कौन क्या कह रहा है? परमात्मा की तो दूर, हम मनुष्यों की आवाज भी नहीं सुनते। इसके पहले कि ध्यान की विधि में गहराई पकड़ो, बाहर की ध्वनियां सुनना शुरू करो। एक दिन तुम्हें भीतर ओम की ध्वनि भी सुनाई देगी। सुनो ये प्यारा गीत--

सबसे पहले स्वयं में रमो, शून्य में थिर होकर जमो।
फिर छोड़ो सुधि तन-मन की, और सुनो धुन कीर्तन की-
जो भीतर गूंज रही अविराम, सुमिरन रखो ओम् का नाम।
बहिर्मुखी है दुनिया सारी, अंतर्मुखता हरि को प्यारी।
धारा पलट, हुई जब राधा, रचा रास, मिट गई हर बाधा।।
मिल गए वेणु बजाते श्याम, भज लो प्यारे ओम् का नाम।
ओम् है ब्रह्मा-विष्णु-महेश, ओम् के बाहर कुछ भी न शेष।
सुने सो शिष्य, सुनाए सो गुरु, ओम् के साक्षातरूप- सदगुरु।।
इसी से जन्मे धर्म तमाम, सुमिरन रहे ओम् का नाम।
ओम् का वेदों में गुणगान, यह अक्षर है ब्रह्म समान।
यही है जीवन, यही है प्राण, इसमें बसते हैं भगवान।।

ओम् को सिमरो आठों याम, भज लो प्यारे ओम् का नाम।

अपने भीतर रमो, रमने की बड़ी प्यारी विधि शिव दे रहे हैं। गुदा द्वार को सिकोड़ो और कानों को दबाकर बंद करो। ऊर्जा का उर्ध्वगामी प्रवाह शुरू होगा और भीतर एक शक्ति का वर्तुल बन जाएगा, एक सर्किल बन जाएगा और तब कोई ध्वनि बाहर नहीं जाती। जैसे मंदिर में गुंबद होती, गोलाकर, वर्तुलाकार उसके भीतर ध्वनि गूंजती है, ठीक ऐसे ही हमारी खोपड़ी का ऊपरी हिस्सा भी गुंबद के समान है, ध्वनि उसमें गूंजती है। लेकिन मलद्वार सिकोड़ने के पश्चात ध्वनि को सुनना बहुत आसान होता है। यूं कठिन भी है, अगर तुम संवेदनशील न हुए तो। सरल है, अगर तुम सरल, सहज और संवेदनशील हुए तो।

मैने सुना है एक चुटकुला, एक लंबा–चौड़ा पहलवान शराबघर में आया, जम के उसने शराब पी, फिर उसने जेब से हजार रुपए का नोट निकालकर बाहर रखा। एक नींबू उठाया और नींबू को जोर से दबाया ताकत लगाकर और उसने कहा कि अगर इस नींबू में से कोई एक बूंद भी रस और निकाल दे तो ये हजार रुपए उसको मैं इनाम दूंगा। किसी की हिम्मत न पड़ी, पहलवान के रंग–ढंग देखकर, उसका लंबा–तगड़ा शरीर देखकर। उसमें नींबू जो निचोड़ा था बिल्कुल निचुड़ ही चुका था, उसमें बिल्कुल कुछ और बचा न था। एक दुबला–पतला आदमी उठा, उसने कहा कि मैं इसमें से रस निचोड़ सकता हूं। वो आया उसने नींबू उठाया और एक नहीं, पांच बूंद रस उसमें से निकाल दिया। सब लोग हैरान हुए, तालियां पिट गई। पहलवान ने कहा हद कर दी, आज तक कोई मेरी चुनौती को स्वीकार नहीं पाया, तुम किस अखाड़े में रियाज करते हो? उस दुबले–पतले सज्जन ने कहा कि मैं किसी अखाड़े–वखाड़े में रियाज नहीं करता, अरे मैं इनकमटेक्स आफीसर हूं। बड़े–बड़े मारवाड़ियों में से धन निचोड़ लेता हूं, ये नींबू क्या खाक चीज है। साधक को इससे भी कठिन कार्य करना है। इनकमटैक्स आफीसर से भी ज्यादा शून्य में से ध्वनि को निचोड़ना है, सन्नाटे में से संगीत को निचोड़ना है।

बड़ी अद्भुत है यह विधि, जब करोगे तब इसके रहस्य को जानोगे। ओशो ने इस विधि को समझाते हुए कहा, अगर तुम अपने कानों को बंद कर लो और गुदा को ऊपर की ओर सिकोड़ो तो तुम्हारे लिए सबकुछ ठहर जाएगा, ऐसा लगेगा कि सारा संसार रुक गया, सब थम गया। गतिविधियां ही नहीं, तुम्हें लगेगा कि समय भी ठहर गया। जब तुम गुदा को ऊपर की ओर सिकोड़ लेते हो और इसके साथ ही दोनो कान बंद कर लिए जाएं तो बंद कानों से तुम अपने भीतर एक ध्वनि सुनोगे, वह ध्वनि अत्यंत सूक्ष्म है। गुदा को ऊपर खींचकर सिकोड़ कर, दोनो कानों को बंद कर लेने से, तुम्हारे भीतर संगीत का एक स्तंभ निर्मित होगा और वह ध्वनि मौन की ध्वनि होगी, उस मौन की ध्वनि को ही संतों ने अनहद नाद कहा है, एक ओंकार सतनाम कहा है। आओ इस ध्वनि को सुनने के लिए हम प्रयोग करते हैं। धन्यवाद।

माँ प्रिया–

आज की ध्यान विधि में आपका बहुत–बहुत स्वागत है। वज्रासन में बैठ जाएं। दोनो हथेलियों से कानों को दबाएं, आंखें बंद कर लें। बाहर जाती सांसों के साथ पेट को भीतर सिकोड़ें और बाहर सांस रोककर अंतर्ध्वनि सुनें। लेट जाएं, शवासन में लेट जाएं। भीतर एक ध्वनि गूंज रही है, इस अंतर्ध्वनि को सुनते–सुनते इसमें विश्राम करें, विश्राम, विश्राम। धीरे–धीरे दो–चार गहरी सांसें लें और ध्यान से वापस आएं। आज का ध्यान पूरा हुआ। हरि ओम् तत्सत्।

अपने ही नाम में डूबो

अपने नाम की ध्वनि में प्रवेश करो, और उस ध्वनि के द्वारा सभी ध्वनियों में।

बहुत से साधक मित्र आकर अक्सर पूछते हैं कि मंत्र जाप के लिए हम किस मंत्र का उपयोग करें। सभी धर्मों के अपने-अपने मंत्र हैं, सभी मंत्र सांप्रदायिक हैं। किसका नाम जपें, ईश्वर के इतने नाम हैं। इस सवाल का जवाव आज विधि नंबर 47 में भगवान शिव देते हैं। कहते हैं पार्वती से, अपने नाम की ध्वनि में प्रवेश करो और उस ध्वनि के द्वारा सभी ध्वनियों में। अपने ही नाम को जपो, किसी और नाम की क्या जरूरत। और अपने नाम की कई खूबियां हैं। एक तो हमारा खुद का नाम हमारे सर्वाधिक अचेतन में प्रविष्ट हो गया होता है। जब हम कोई भाषा भी नहीं जानते थे। तब माता-पिता, भाई-बहन, परिवार के जन नाम लेकर पुकारते थे। वो पहला शब्द है, जो हमारे मन में प्रवेश किया। सबसे गहरा बैठा हुआ है। इतना गहरा बैठा है, अगर आप लोग सभी सो जाएं और मैं किसी एक व्यक्ति का नाम लेकर पुकारूं तो वह व्यक्ति उठकर बैठ जएगा। आश्चर्य! इतनी गहरी नींद में, जहां वह खर्राटे भर रहा था, फिर भी उसने अपना नाम सुन लिया। इसका मतलब यह हुआ कि हमारा खुद का नाम, हमारे गहनतम अचेतन में बैठा हुआ है, क्यों न इसी का उपयोग किया जाए। अनाहत नाद सुनने की आज हम अंतिम विधि की चर्चा कर रहे हैं।

भज लो अपना खुद का नाम। सुन लोगे तुम खुदा का नाम।।
शब्द को सुनकर लगे समाधि, दूर होय सब मन की व्याधि।
महा-औषधि है ओंकार, नष्ट हो पल में अहंकार।।

कोटि–कोटि इसे प्रणाम, सुमिरन रहे खुदा का नाम।
ओंकार जपते–जपते, जब भाव में डुबकी लगती;
तब एक हाथ की ताली, अंतर्ध्वनि सुनाई पड़ती।
स्रोतरहित संगीत का जाम, पीते रहो सुबहो–शाम!
कहो रहीम, चाहे रहमान, अल्ला–खुदा, गॉड या राम।
वंशी बजा रहा घनश्याम, स्वर ही है ईश्वर का धाम।।
जग में करो कोई भी काम, याद रहे प्रभु का नाम।
ओम् है अंतर्घट का वासी, क्या जाना अब काबा–काशी!
खुद के भीतर होश जगाओ, आत्मतीर्थ में स्वयं नहाओ।।
चंचल मन को मिले लगाम, भज लो हरि–ओम् का नाम।
भज लो अपना खुद का नाम, सुन लोगे तुम खुदा का नाम।।

अपने ही नाम में डुबकी लगाओ और इस अस्तित्व के नाम ओंकार को अपने भीतर सुनो। बड़ी अद्भुत और क्रांतिकारी है यह विधि। किसी धर्म, किसी संप्रदाय से संबंधित नहीं। एक अंग्रेज कवि हुआ टेनीसन। उसने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि ना जाने बचपन में कैसी उसकी आदत पड़ गई थी, अपना ही नाम लेने की। कभी माता–पिता घर में नहीं होते, अकेला छोटा बच्चा, उसे डर लगता, वो अपना ही नाम दोहराता और अपना नाम दोहराने से विश्वस्त हो जाता, आश्वस्त हो जाता, रिलैक्स हो जाता। धीरे–धीरे यह विधि उसके मन में भीतर समा गई, अंजाने में। बड़े होकर भी उसने इसका उपयोग किया। जब भी कोई चिंता घेरती, कभी मन बेचैन होता, अशांत होता, तब वो बैठकर अपना ही नाम दोहराता। टेनीसन, टेनीसन, टेनीसन और दो–तीन मिनट के भीतर ही मन शांत होने लगता, मौन उतरने लगता, बेचैनी समाप्त हो जाती। अंजाने में टेनीसन ने भगवान शिव की इस विधि को पकड़ लिया। अतः अपना ही नाम जपते–जपते परम शांति में हम डूब सकते हैं।

साधक के जीवन की, भक्त के जीवन की, सबसे बड़ी तकलीफ क्या है? परमात्मा का कोई स्पर्श उसे नहीं हो रहा, प्रभु की तरफ से कुछ सुनाई नहीं पड़ रहा। भक्त स्वयं तो प्रार्थना कर रहा है, किंतु भगवान कोई उत्तर दे रहा कि नहीं, उस तरफ से कोई प्रतिध्वनि उसे नहीं आ रही, वही उसकी सबसे बड़ी तकलीफ है। मैने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन ने अपने मित्र चंदूलाल से कहा कि कल मैने अपनी बीबी को बहुत परेशान किया। चंदूलाल ने पूछा कैसे? नसरुद्दीन ने कहा कि मैने उसे नए कपड़े लाकर दिए और घर के सारे आइने छुपा के रख

दिए। इससे बड़ी तकलीफ स्त्री की क्या हो सकती है? नए कपड़े और घर में आइना न हो देखने के लिए। साधक की सबसे बड़ी तकलीफ यहीं है, उसके भीतर क्या छुपा है? ब्रह्म का वह नाद, ओम की वह ध्वनि, वह उसे सुनाई नहीं पड़ रही, उसी की खोज सारी साधना का लक्ष्य है। भगवान शिव आज जो विधि दे रहे हैं, उसी से संबंधित है।

ओशो ने इस विधि को समझाते हुए कहा, तुम कभी अपना नाम नहीं लेते हो, हमेशा दूसरे ही तुम्हारा नाम लेते हैं। तुम उसे दूसरों के मुंह से सुनते भर हो, लेकिन अपना नाम अचेतन में गहरा उतर जाता है, अत्यंत गहरा, तीर की तरह भीतर चुभ जाता है। इस जगह तुम अपने ही नाम का उपयोग करो तो वह मंत्र बन जाएगा और दो कारणों से अपना नाम सहयोगी होता है। एक कि जब तुम अपना नाम लेते हो, मानलो कि तुम्हारा नाम राम है और तुम राम–राम कहे जाते हो तो कभी तुम्हें अचानक महसूस होगा कि मैं किसी दूसरे का नाम ले रहा हूं, कि यह मेरा नाम नहीं है। और अगर तुम यह भी समझो कि यह मेरा ही नाम है तो भी तुम्हें लगेगा कि तुम्हारे भीतर कोई दूसरा व्यक्ति मौजूद है, जो इस नाम का उपयोग कर रहा है। यह नाम शरीर का हो सकता है, मन का हो सकता है, लेकिन जो राम–राम कह रहा है, वह इस नाम का साक्षी भर है। तुमने दूसरों के नाम पुकारे हैं। इसलिए जब तुम अपना ही नाम पुकारते हो तो तुम्हें ऐसा लगता है कि यह नाम किसी और का है, मेरा नहीं। और यह घटना बहुत कुछ बताती है। तुम अपने ही नाम के साक्षी बड़े आराम से हो सकते हो। और इस नाम के साथ तुम्हारा समस्त जीवन जुड़ा है। नाम से पृथक होते ही तुम अपने पूरे जीवन से पृथक हो जाते हो। और यह नाम तुम्हारे गहरे अचेतन में चला गया है, क्योंकि तुम्हारे जन्म से ही लोग तुम्हें इस नाम से पुकारते हैं। तुम सदा–सदा इसे सुनते आए हो, तो इस नाम का उपयोग करो, इस नाम के साथ तुम उस गहराइयों को छू लोगे, जहां तक यह नाम प्रवेश कर गया है।

पुराने दिनों में हम सबको परमात्मा के नाम दिया करते थे। कोई राम, कोई नारायण, कोई कृष्ण, कोई विष्णु कहलाता था। मुसलमानों के सभी नाम भी परमात्मा के ही नाम हैं। और पूरी धरती पर यही रिवाज था कि परमात्मा के नाम के आधार पर हम लोगों के नाम रखते थे। और इसके पीछे बड़ा अच्छा कारण था। एक कारण तो यही विधि थी, अगर तुम अपने नाम को मंत्र की तरह उपयोग करते हो तो इसके दोहरे लाभ हो सकते हैं। एक तो यह तुम्हारा अपना नाम होगा, जिसको तुमने इतनी बार सुना है, जीवन भर सुना है जो तुम्हारे गहन अचेतन मन में प्रवेश कर गया है। फिर यही नाम परमात्मा का भी है और जब तुम उसको दोहराओगे तो कभी अचानक तुम्हें बोध होगा कि यह नाम मुझसे पृथक है और फिर धीरे–धीरे उस नाम की अलग पवित्रता निर्मित होगी, एक महिमा निर्मित होगी, किसी दिन तुम्हें स्मरण आएगा कि अरे! यह तो परमात्मा का नाम है और यह मेरा भी नाम है, अहम् ब्रह्मास्मि। तब तुम्हारा नाम, तुम्हारे लिए मंत्र बन गया। तो इसका उपयोग करो, यह विधि बहुत ही अच्छी विधि है। बड़ी आसान भी। कोई भी कर सकता है, छोटा बच्चा भी कर सकता है।

कभी एक छोटा सा प्रयोग करके देखना। समझो तुम्हें सुबह पांच बजे उठना है। रात सोने के पहले पांच बार अपना खुद का नाम लो और कहो कि मुझे पांच बजे सुबह उठना है। और यह कहकर सो जाओ, तुरंत सो जाओ। आश्चर्य की बात, किसी अलार्म घड़ी की जरूरत न पड़ेगी, ठीक पांच बजे तुम्हारी नींद खुल जाएगी। ये छोटी सी तरकीब कैसे काम करती है? क्योंकि तुमने पांच बजे उठने के भाव को अपने नाम के साथ जोड़ दिया और तुम्हारा नाम गहन अचेतन में समाया हुआ है। अलार्म घड़ी से भी ज्यादा एक्युरेट, ठीक पांच बजे उठ जाओगे। मुसलमानों की, सूफियों की एक किताब है, अल्लाह के सौ नाम। उस लिस्ट को पढ़ो तो उसमें सिर्फ 99वें ही मिलते हैं, एक नाम गायब। तुम्हें लगेगा कि शायद कुछ मिसप्रिंटिंग हो गई, छापने की भूल हो गई। नहीं, भूल नहीं हुई है। 99वें नाम तो वे नाम हैं जिन्हें हम पुकार सकते हैं, एक नाम ऐसा है जिसे हम पुकार नहीं सकते, वह अनाहत ध्वनि ही परमात्मा का असली नाम है। शेष सारे नाम हमारे दिए गए हैं। ठीक इसी प्रकार हिन्दुओं की किताब है, विष्णुसहस्रनाम। लेकिन असली नाम भाषा के पार है, इसलिए हिन्दुओं ने ओम को भाषा का हिस्सा नहीं बनाया। उसे अलग ही एक प्रतीक चिन्ह दिया। ताकि स्मरण रहे, हमारे दिए गए नामों से वह भिन्न है।

मैने सुना है, एक मनचले ट्रक ड्राइवर ने अपने ट्रक के पीछे लिख रखा था– सावन को आने दो। इस ट्रक का एक्सीडेंट हुआ, पीछे से एक दूसरे ट्रक वाले ने आके चोट मारी और उस ट्रक के सामने लिखा हुआ था, आया सावन झूम के। दूसरे ट्रक वाले का नाम सरदार सावन सिंह था। नाम के कोई अर्थ नहीं होते, हमारे दिए हुए अर्थ हैं। मैने सुना है, एक शिक्षक ने स्कूल में, एक विद्यार्थी से पूछा कि तुम अपना नाम और अपने पिताजी का नाम अंग्रेजी में बोलो। उस बच्चे ने कहा जी, मेरा नाम लाइफ–रैड और मेरे पिताजी का नाम ब्यूटीफुल रैड अंडरवियर। शिक्षक ने कहा बड़ा विचित्र नाम है। ये कैसा नाम है? लड़के ने कहा आपने अंग्रेजी में बोलने को कहा इसलिए मैने ट्रांसलेट करके कहा है। मेरा नाम जीवनलाल है और मेरे पिताजी का नाम सुंदरलाल चड्ढा है। ब्यूटीफुल रेड अंडरवियर, सुंदरलाल चड्ढा। भाषा में तो हर शब्द का कोई अर्थ है। इसलिए ओम अर्थातीत है, उसका कोई भी अर्थ नहीं। वह अस्तित्व की ध्वनि है, उसका कोई मीनिंग नहीं है। यद्यपि सारी महिमा उसमें छुपी हुई है। वह भाषा के पार है। कहते हैं कि ऋषि वाल्मीकि भूल गए थे राम–राम का मंत्र और मरा–मरा जपने लगे, एक अर्थहीन ध्वनि में प्रवेश कर गए। और वहां से उन्होंने परमात्मा को पा लिया। तो कोई भी ध्वनि काम करेगी, कोई भी ध्वनि मंत्र बन जाएगी।

ठीक कहते हैं शिव कि अपने ही नाम का उपयोग कर लो। भारतीय मनीषा की गहनतम खोज है, कि सारा अस्तित्व ध्वनि से निर्मित है। आपने सुना होगा कभी–कभी फौज के गुजरने से, उनके लेफ्ट राइट के आवाज से, नदी के ऊपर बने ब्रिज, पुल टूट जाते हैं। यहूदी इतिहास में कहानी है, जैरिको नगर की सुरक्षित दीवारें विशेष ध्वनियों से तोड़ी गई थीं। बैजूबाबरा और तानसेन के बारे में कहा जाता था, विशेष संगीत के द्वारा वे दीपक जला

सकते थे। अनुमान है कि पिरामिड के बड़े–बड़े पत्थर ध्वनि के माध्यम से ढोए गए। अशोक की लाट जिसमें हजारों साल में जंग नहीं लगी, विशेष मंत्रों से सुरक्षित है, विशेष ध्वनियों से सुरक्षित है। ध्वनि के अपने प्रभाव हैं, हर ध्वनि के अपने प्रभाव हैं, अलग–अलग। अपने नाम की ध्वनि से हम सर्वव्यापी ध्वनि, ओंकार में प्रवेश कर सकते हैं। जरा सुनने की कला सीखनी होगी। मैंने सुना है, मुल्ला एक दिन कह रहा था कि मुझे पहले बहुत कम सुनाई पड़ता था, किन्तु जबसे डॉ. शर्मा से कान की मंहगी मशीन मंगाई है तब से बिल्कुल ठीक सुनाई पड़ने लगा। चंदूलाल ने पूछा मशीन की क्या कीमत है? मुल्ला ने कहा, अभी साढ़े सात बजा होगा। चंदूलाल ने पूछा, मैं पूछ रहा हूं कि मशीन का दाम क्या है? मुल्ला बोला, नाम क्या है? मैने बताया तो, डॉ. शर्मा। चंदूलाल ने कहा, अरे यार कितने में मशीन खरीदी? कितने में मशीन खरीदी? नसरुद्दीन ने बोला, क्या कहा? तीन बीवियां, अरे तीनों प्रसन्न हैं, अब उनकी बातें ठीक से सुन जो पाता हूं। बाहर की चाहे तुम सुन पाओ, चाहे न सुन पाओ, भीतर परमात्मा की ध्वनि सुनने की कोशिश करो। और अपने नाम की विधि बड़ी उपयोगी होगी। आओ अब हम सब लोग इस विधि का प्रयोग करते हैं।

सब लोग खड़े हो जाएं और बचपन में आपकी माँ जिस नाम से आपको पुकारती थी, अपना वह नाम जपना शुरू करें। खुद का नाम ऐसे लें जैसे आपकी माँ आपको पुकारती थी। जोर–जोर से बोलें। नाम जपना बंद करें, आराम से बैठ जाएं, मन ही मन जाप करें। भाव करें आपकी माँ आपको पुकार रही हैं, बड़ी धीमी आवाज में। इस आवाज के साथ ममता का भाव, प्रेम का भाव जोड़ें, मन ही मन अपना नाम जपें। आखिरी चरण– आराम से लेट जाएं, शरीर को शिथिल छोड़ दें, श्वांस को धीमे, मन आपका शांत हो रहा है। अब भीतर नाम जपना भी छोड़ दें। सुनें, गौर से सुनें, परम मां, परमात्मा आपको पुकार रही, परम पिता परमात्मा की आवाज गूंज रही। पहले हमने जोर से आवाज की शरीर से, फिर मन ही मन, अब कुछ भी न करें। सुनें, केवल सुनें, होश पूर्वक सुनें। खुद का नाम जपते–जपते खुदा के नाम में प्रवेश हो गया। सुनते जाएं, सुनते जाएं, सुनते जाएं। सुनते–सुनते समाधि में डूब जाएं।

धन्यवाद।

तंत्र संबंधी प्रथम प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता– सदगुरू ओशो शैलेन्द्र जी, आपके चरणों में नमन करता हूं। आजकल विज्ञान भैरव तंत्र पर जो चर्चा चल रही है, उससे संबंधित कुछ प्रश्न आए हैं। कृपया समाधान देने की कृपा करें।

प्रश्न–1: योग और तंत्र में क्या भेद है?

मार्ग के हिसाब से तो अलग–अलग हैं, उनमें भेद है, एक–दूसरे के विपरीत हैं, किंतु मंजिल के हिसाब से दोनों एक हैं। जैसे एवरेस्ट पर कोई भारत की तरफ से चढ़े तो उत्तर की ओर मुंह करके चढ़ेगा, चीन के तरफ से कोई एवरेस्ट पर चढ़े तो दक्षिण की ओर उसका मुंह होगा, किंतु दोनो की मंजिल एक है। ठीक इसी प्रकार योग और तंत्र अध्यात्म के दो मार्ग हैं। ये दोनो ही दार्शनिक ऊहापोह में नहीं उलझते, बुद्धि और विचार केन्द्रित नहीं हैं, सोच विचार की इनमें कोई जगह नहीं है। कुछ समानताएं हैं, दोनो ही विधि केंद्रित हैं। कुछ फर्क है इसमें, योग में होशपूर्वक प्रकृति का दमन है, द्वैतभाव से वह आरंभ होता है, कुछ पुरुष प्रधान है। बहिर्मुखी गुणवत्ता वाला है और प्रकृति के प्रति एक निषेधात्मक रूख लेकर चलता है। जबकि तंत्र में इसके ठीक विपरीत है, इसमें बोधपूर्वक भोग करना है, अद्वैत भाव से ही साधना का आरंभ होता है, स्त्रैण ग्राहकता का गुणधर्म इसमें है, अंतर्मुखी होना शुरूआत से ही इसमें उपयोगी है और तंत्र की जीवन दृष्टि प्रकृति के साथ संघर्ष करने की नहीं, बल्कि सहयोग करने की है। योग जहां संघर्ष करके पहुंचता है, तंत्र वहां सहयोग करके पहुंच जाता है। तो योग और तंत्र की दृष्टि में काफी भेद हैं। योग साधारण चित्त के विपरीत है इसलिए

अहंकार के लिए आकर्षक है। तंत्र का अभी तक आकर्षण नहीं रहा, क्योंकि यह प्रकृति के खिलाफ नहीं है, लेकिन भविष्य में तंत्र के दिन आएंगे।

प्रश्न–2– समर्पण के मार्ग पर चलने वाला साधक 112 में से अपने लिए सही विधि कैसे चुने?

पहली बात तो ख्याल रखना, योग और तंत्र दोनो में ही संकल्प का उपयोग है। योग में पुरुष जैसे एक्टिव संकल्प का प्रयोग है और तंत्र में स्त्रैण प्रकृति के पैसिव संकल्प का प्रयोग है। सारी विधियां संकल्प पर ही आधारित हैं, समर्पण की कोई विधि नहीं होती। समर्पण एक बाईप्रोडक्ट है। जब तुम संकल्प करते–करते, विधि करते–करते थक जाते हो, ऊब जाते हो, जब उसकी व्यर्थता को तुम जान लेते हो, तब समर्पण स्वतः घटित होता है। समर्पण किया नहीं जा सकता, वह हमारा कृत्य नहीं। अगर हमने समर्पण किया तब तो उसके पीछे भी कर्ताभाव और अहंकार आ जाएगा फिर वह समर्पण नहीं होगा। इसलिए समर्पण किया नहीं जा सकता। मत पूछो कि समर्पण का साधक क्या करे। क्या करे जैसे ही आया, वहां विधि आ गई, कर्ताभाव आ गया, संकल्प आ गया। चींन में महान संत लाओत्सु हुए। उनकी देशना जिसे ताओवाद कहा जाता है, वह तंत्र से बहुत कुछ मिलती–जुलती है, जो लोग द्वंद्वात्मक भाषा में सोचने के आदी हैं, उन्हें ताओ और तंत्र की बात समझ में नहीं आएगी। चीन का महान दार्शनिक कनफ्यूसियस, लाओत्सु से मिलने आया था, उसे लाओत्सु की कोई भी बात समझ न आई। ताओ और तंत्र को समझना साधारण मन के लिए बड़ा विपरीत है। इसलिए मत पूछो कि समर्पण की विधि क्या होगी? समर्पण विधियों के पार है।

प्रश्न–3– किस संकेत से पहचानें कि जिस विधि का प्रयोग हम कर रहे हैं वह परम लक्ष्य तक पहुंचा देगी?

जो विधि तुम्हें रास आ गई, उसके संबंध में दो–चार बातें ख्याल रखना। तुम्हारे भीतर शांति का, आनंद का, कृतज्ञताभाव का, अहोभाव का विकास होगा। तुम पहले से ज्यादा प्रसन्न और प्रफुल्लित रहने लगोगे, तो जानना कि वह विधि तुम्हें रास आ रही है। अच्छा हो एक विधि को तीन–चार दिन खेल पूर्वक करो, गैरगंभीर तरीके से। अगर वह विधि तुम्हें रास आई, तुम्हारे भीतर कुछ क्लिक होगा। लगेगा कि बात जम रही है। तब उसी विधि को लगातार कम से कम तीन महीने तक करना। अगर तीन दिन के भीतर तुम्हारे भीतर कुछ क्लिक नहीं होता, उस विधि को छोड़ो, दूसरी विधि करो। याद रखना ये सारी विधियां सभी साधकों के लिए नहीं हैं। हमारे व्यक्तित्व अलग–अलग प्रकार के हैं और भिन्न–भिन्न प्रकार की विधियां हमारे काम आएंगी। जब कोई विधि तुम्हें जमेगी, तुम्हें एक प्रकार का नयापन लगेगा, कुछ अजीब सा लगेगा, संसार के साथ असमायोजित होने लगोगे। संसार नहीं बदल रहा, किंतु तुम्हें लगेगा कि दुनिया बदल रही है। वास्तव में स्वयं तुम बदल रहे हो। कभी–कभी ऐसा भी हो सकता है, निर्विचार जागरूकता घटने पर, तुम्हारे भीतर एक प्रकार की अराजकता,

अशांति और भय भी पैदा हो। किसी भी नई चीज में प्रवेश करने से हमारा मन घबराता है। थोड़ा सा धीरज रखना, जल्दी ही निर्द्वंदिता, निर्भारता, निर्बैरता, निश्चिंतता का अनुभव होगा। एक नई जीवंतता और प्राणशक्ति का उदय होगा। अस्तित्व से एक लयबद्धता आएगी, एक संगीत तुम्हारे भीतर जन्मेगा, इन लक्षणों के आधार पर तय किया जा सकता है कि साधक को विधि जम रही है या नहीं।

प्रश्न–4– ऐसी आसान विधियों से क्या परमज्ञान की उपलब्धि संभव है?

पहली बात याद रखना, परमज्ञान कोई उपलब्धि नहीं है, अनावरण है। इट इज ए डिस्कवरी, नाट एन इन्वेंशन, इसलिए कठिन तो हो ही नहीं सकता। जैसे कोई आदमी रात सपने में सो गया और सपने में कहीं दूर चला गया, उसे वापिस लौटाना क्या कठिन होगा, जरा भी कठिन नहीं। मुंह में पानी छिड़क दो, वापिस लौट आएगा। वो पूछने लगे, मैं कैसे वापिस लौट सकता हूं, मैं तो इतनी दूर चला गया। हिन्दुस्तान छोड़ के कैलीफोर्निया पहुंच गया। पानी की चार बूंदें क्या मुझे वापिस लौटा देंगी। ये जरा सा झकझोरना, ये छोटी सी अलार्म घड़ी, इतना पर्याप्त है नींद तोड़ने के लिए, क्योंकि वास्तव में वह कहीं गया नहीं। तंत्र की सारी विधियां बस झकझोरने जैसी हैं, पानी छिड़कने जैसी हैं। तुम कभी ये नहीं पूछते कि जरा सा पोटेशियम सायनाइट चखने से ये 70–80 किलो का आदमी कैसे मरेगा? जरा सा पोटेशियम सायनाइट पर्याप्त है। ठीक इसी प्रकार ये सरल–सरल विधियां भी पर्याप्त हैं। दूसरी बात स्मरण रखना, हमारे अहंकार को रस होता है, कठिन में, जटिल में जिसे दूसरे न कर सकें, मैं कुछ करके दिखाऊं। अध्यात्म की सारी विधियां सरल ही होंगी, क्योंकि ये अहंकार के विपरीत हैं।

प्रश्न–5– सांस के प्रति होश साधूं तो काम करने में कठिनाई आती है। कार्य करूं तो सांस भूल जाती है। क्या करूं?

स्वीकार लो, शुरूआत में ऐसा ही होगा, एक चीज साधोगे दूसरी छूट जाएगी। ये ठीक वैसा ही है जैसे कोई नया–नया व्यक्ति कार चलाना सीखता है। अगर ब्रेक में ध्यान दो, स्टेरिंग घुमाना भूल जाते, स्टेरिंग घुमाओ तो बैक मिरर दिखाई नहीं पड़ता, बैक मिरर देखो तो सामने का ट्रैफिक देखना विस्मृत हो जाता है, क्लच दबाओ तो ब्रेक नहीं लगता, ब्रेक लगाओ तो सामने कुछ दिखाई नहीं पड़ता, अगर किसी से बातचीत करो ड्राइविंग छूट जाती है। लेकिन जब एक व्यक्ति अभ्यस्त हो जाता है ड्राइविंग में, तब सब चीजों का ध्यान बना रहता है। टेपरिकार्ड से कैसिट भी सुनता जाता है, मोबाइल फोन में अपने मित्र से बातचीत भी करता जाता है और गाड़ी भी चलती जाती है। ठीक इसी प्रकार नए साधक के लिए कठिनाई है शुरू में। श्वांस का ख्याल रखोगे, काम का ध्यान नहीं रहेगा, जो कार्य कर रहा हो उसमें ध्यान ले जाओगे, श्वांस विस्मरण हो जाएगी। थोड़ा सा धीरज रखना, जल्दी ही वह दिन

आएगा, अपने कामकाज के संग श्वांस का भी ध्यान बना रहेगा।

प्रश्न–6– सपने में बोधपूर्ण होने के उपाय बताएं।

सबसे पहले तो ये जानो कि सपने केवल रात को नहीं, दिन को भी चलते रहते हैं। कभी भी आंख बंद करो और तुम पाओगे कुछ चित्र तुम्हारे भीतर तैर रहे हैं, कुछ कल्पना तुम्हारे भीतर दौड़ रही है। सपने निरंतर ही मौजूद हैं, खुली आंख भी, बंद आंख भी। लेकिन खुली आंख से हम बाहर के दृश्य को देखते हैं तो भीतर के सपने दब जाते हैं, लेकिन वह पर्त भीतर मौजूद है। तो सबसे पहले तो यही तथ्य जानो कि सपने निरंतर मौजूद हैं। दूसरी बात, दो प्रकार की विधियां काम आ सकेंगी। एक विधि जो भगवान शिव ने प्रस्तावित की विज्ञान भैरव तंत्र में, संसार को माया जानो, स्वप्नवत जानो। आदि शंकराचार्य ने भी इसी विधि को प्रस्तावित किया। और दूसरी विधि रूस के संत जार्ज गुरजिएफ ने प्रस्तावित की, स्वयं के होने का बोध रखो। 'मैं हूं', इस भाव में जियो। ये दोनो अलग–अलग बिंदु से एक ही काम करती हैं। अगर तुम संसार को असत्य मानो तो तुम्हारी जो ऊर्जा है स्वयं पर आ जाती है अथवा तुम मैं हूं के भाव में, अपने उपस्थिति के प्रति जागरूक हो तो संसार से तुम्हारी ऊर्जा मुड़ जाती है। इन दो में से कोई एक विधि चुन लो। सबसे पहले दिवास्वप्न टूटेंगे, धीरे–धीरे रात्रि के स्वप्न भी टूटने लगेंगे। एक दिन रात अचानक तुम स्वयं के प्रति बोध से भर जाओगे।

प्रश्न–7– यदि हमारे जीवन के नाटक की कथा पहले से ही निश्चितरूप से लिखी हुई है तो हम ध्यान करने का प्रयास भी क्यों करें? जब लिखा होगा भाग्य में तब आत्मरूपांतरण हो जाएगा।

जैसे मैने अभी कहा कि आदि शंकराचार्य का माया का सिद्धांत कोई तथ्यात्मक सिद्धांत नहीं है, ध्यान की एक विधि है। ठीक इसी प्रकार भाग्य का सिद्धांत भी कोई बौद्धिक सिद्धांत नहीं है, वह भी एक विधि है। अगर तुम भाग्य को मान सको तो तुम्हारे जीवन में समर्पण घटित हो सकेगा। इसी प्रकार अन्य सारी चीजों को लेना। पश्चिम के देशों में हजरत मोहम्मद और हजरत ईसामसीह ने एक जन्म की धारणा दी, क्योंकि वे गरीब समाजों में काम कर रहे थे। लोगों को धर्म में, अध्यात्म की विधियों में उत्सुक करने के लिए उन्होंने कहा, सिर्फ एक ही जन्म होता है। समय न गंवाओ, क्योंकि गरीब आदमी घर बनाने में, धन कमाने में व्यस्त होता है, वो कहेगा बाद में देखेंगे कभी, ध्यान समाधि वगैरह। तो ईसामसीह ने, हजरत मोहम्मद ने कहा कि एक ही जन्म है। भारत में स्थिति भिन्न थी, भारत सोने की चिड़िया था। यहां के ऋषियों ने दूसरी बात कही, उन्होंने कहा जन्म–जन्मान्तर, बार–बार, बार–बार धरती पर आना होगा और इस विधि से उन्होंने ऊब की धारणा पैदा की, बोरियत। कब तक यही जीवन भोगोगे। यहां अमीर समाज था, यहां एक जन्म की धारणा काम न करती। उन्होंने एक दूसरी धारणा दी, बार–बार, बार–बार लौटना होगा। यही भोग विलास कब तक, मोक्ष को प्राप्त करो, ध्यान में डूबो। याद रखना, न एक जन्म की धारणा सही है, न जन्म–जन्मान्तर की

धारणा सही है। न माया का सिद्धांत सही है, न भाग्य का सिद्धांत सही है। ये सब विधियां हैं। अगर तुम भाग्य में विश्वास करते हो तो मैं तुमसे कहूंगा, तुम्हारे भाग्य में जरूर लिखा होगा ध्यान करना, तभी तो तुम्हारे भीतर ये प्रश्न पैदा हुआ। अब भागना मत, ध्यान में डूबना।

प्रश्न–8– तंत्र में मन के शुद्धिकरण से क्या तात्पर्य है?

तंत्र के हिसाब से शुभ और अशुभ का द्वन्द ही अशुद्धि है, अविभाज्य ढंग से जीना ही शुद्धि है। बच्चा अज्ञानपूर्ण, निर्दोषता में होता है। साधक को फिर शिशुवत हो जाना है। आदम और ईव की कहानी बाइबिल में आपने सुनी होगी, उन्होंने ज्ञान के वृक्ष का फल खाया तो उन्हें स्वर्ग से निष्कासित कर दिया गया। जीसस पुनः शिशुवत हो गए, स्वर्ग के राज्य में प्रवेश कर गए। ज्ञान का फल खाना एक आवश्यक बुराई है। हर बच्चे को उससे गुजरना ही होगा, लेकिन फिर ज्ञान के इस फल का वमन भी कर देना। जब तुम प्रौढ़ हो जाओ, मैच्योर हो जाओ फिर इसके बाहर आ जाना। तब नीति–अनीति के पार, शुभ–अशुभ के पार, तंत्र और ताओ की साधना है। इसलिए तंत्र और ताओ की साधना सामान्य बुद्धि वाले व्यक्ति को समझ में नहीं आती, उसके सिर के ऊपर से निकल जाती है।

प्रश्न–9– क्या सेल्फ एक्चुआलाइजेशन मनुष्य की बुनियादी आवश्यकता है?

अब्राहम मैस्लो जिसे सेल्फ एक्चुआलाइजेशन कह रहा है, वह एक प्रकार की आंशिक खिलावट है। कोई व्यक्ति कवि बन गया, संगीतकार बन गया, नाटककार बन गया, वैज्ञानिक बन गया, यह आंशिक खिलावट है और इससे आंशिक तृप्ति ही होगी, इससे कोई व्यक्ति आप्तकाम नहीं हो सकता। पूरब के मनीषी कहते हैं, सेल्फ एक्चुलाइजेशन नहीं बल्कि सेल्फ रियलाइजेशन, स्वयं का विकास नहीं बल्कि स्वयं का ज्ञान, आत्मज्ञान, बुद्धत्व, उसको पाकर ही व्यक्ति पूर्णरूपेण संतुष्ट होता है। इसलिए वह सर्वाधिक बुनियादी आवश्यकता है।

प्रश्न–10– मनन, एकाग्रता व ध्यान पर प्रकाश डालें।

हमारा सामान्य मन अनियंत्रित, दिशाहीन विचारों की भीड़ है। मनन का अर्थ है, एक दिशा में नियंत्रित विचार। एकाग्रता का अर्थ है, विचारना भी नहीं बल्कि मन का ठहरना और ध्यान का अर्थ है, संपूर्ण रूपेण जागरूकता। एकाग्रता के विपरीत उसे हम कह सकते हैं, समग्रता, होश मात्र रह जाए। किसी विषय का होश नहीं, सिर्फ होश। तब वह होश स्वयं पर लौट आता है और आत्मज्ञान घटित होता है।

प्रश्न–11– नाभि केन्द्र का विकास मन व हृदय के विकास से किस प्रकार भिन्न है?

मन और हृदय, दिल और दिमाग के विकास करने पड़ते हैं। विचार और भाव विकसित करने होते हैं, तभी उनका विकास होता है। नाभिकेन्द्र विकसित नहीं करना पड़ता, नाभिकेन्द्र

को केवल जानना होता है, सिर्फ उघाड़ना होता है। जीवन का केन्द्र है नाभिकेन्द्र, निष्क्रिय जागरूकता के द्वारा, ध्यान के द्वारा उसका उद्घाटन होता है, उसकी डिस्कवरी होती है। तो हृदय और मस्तिष्क का विकास शिक्षा के द्वारा किया जाता है। कोई व्यक्ति कला सीखता है, कोई व्यक्ति वैज्ञानिक बनता है, कोई व्यक्ति कवि हो जाता है, संगीतकार हो जाता है, कोई व्यक्ति गणितज्ञ हो जाता है, जीवन का केन्द्र नाभि केवल जानना होता है।

प्रश्न–12– क्या कृष्णमूर्ति या रामकृष्ण भी नाभि केन्द्रित हैं?

हां, अनुभव तो सभी ज्ञानियों के एक ही हैं, स्वयं के भीतर जड़ें जमाने के, नाभिकेन्द्रित होने के, किन्तु उनकी अभिव्यक्ति अलग–अलग होती है। कृष्णमूर्ति मस्तिष्क के माध्यम से अपने ज्ञान को लोगों को बांटते हैं और रामकृष्ण परमहंस हृदय के मार्ग से अपने ज्ञान को लोगों को बांटते हैं।

प्रश्न–13– नाभि केन्द्र, तीसरी आंख व मेरुदंड में कहां केन्द्रित होना ज्यादा जरूरी है?

अस्तित्वगत रूप से तो बुनियादी केन्द्र नाभि है, किन्तु क्रियात्मक केन्द्र कहीं भी हो सकता है। तीसरा नेत्र भी, सहस्रार भी, मेरुदण्ड भी। हिन्दू सात केन्द्रों की बात करते हैं, बौद्ध नौ केन्द्रों की, तिब्बत के साधक तेरह केन्द्रों की बात करते हैं। तुम किसी भी बिन्दु पर केन्द्रित हो सकते हो, तुम स्वयं अपना केन्द्र खोज सकते हो। और तुम जहां भी केन्द्रित होओगे, अंततः तुम नाभिकेन्द्रित हो जाओगे। हां, एक फर्क को समझना, जिस चीज में समग्रता आए, लीनता आए, वहां केन्द्रीकरण घटित होता है। अगर कोई व्यक्ति पूर्णरूपेण श्रद्धा कर सके, वह हृदय के माध्यम से नाभिकेन्द्रित हो जाएगा। मस्तिष्क के द्वारा कठिन है, क्योंकि संदेह सौ प्रतिशत कभी हो नहीं सकता, पूर्णरूपेण संदेहशील तुम हो नहीं सकते, क्योंकि कम से कम संदेह में तो श्रद्धा करनी होगी, इसलिए मस्तिष्क के माध्यम से यात्रा कठिन है।

प्रश्न–14– क्या मध्यमार्ग के प्रस्तोता बुद्ध का संन्यास अति पर जाना नहीं था?

नहीं, बुद्ध का मार्ग मध्य में है। वे कह रहे हैं न जीवन को पकड़ो, न मृत्यु से डरो। न सुख की ओर दौड़ो, न दुख से पलायन करो, मध्य में रहो। राग और विराग के ठीक मध्य में है गौतमबुद्ध का मार्ग। शेष प्रश्नों की चर्चा हम कल और परसों करेंगे। बहुत–बहुत धन्यवाद।

तंत्र संबंधी द्वितीय प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता– सदगुरू ओशो शैलेन्द्र जी के चरणों में नमन करता हूं। विज्ञान भैरव तंत्र में प्रश्नों के इस क्रम में कुछ सवाल हैं कृपया मार्गदर्शन करें।

प्रश्न–15– हृदय केन्द्र विकसित करने के व्यावहारिक उपाय बताएं।

उत्तरः– भगवान शिव ने जो विधि दी है उसको समझाते हुए ओशो कहते हैं, स्वयं को बिना सिर का महसूस करो। अच्छा हो किसी फोटो ग्राफर से अपनी एक तस्वीर बनवा लो, जिसमें तुम्हारा धड़ तो हो, सिर न हो। उसे अपने घर में लगा लेना, अपने आफिस में लगा लेना, बार–बार उस पर नजर पड़ेगी। धीरे–धीरे भाव करो कि तुम बिना सिर के हो। तब मस्तिष्क में जाने वाली ऊर्जा, धीरे–धीरे हृदय में केन्द्रित होने लगेगी। और कुछ उपाय हैं जैसे, न केवल व्यक्तियों के प्रति बल्कि वस्तुओं के प्रति भी प्रेमपूर्ण एवं अहिंसक बनो, ज्यादा करुणावान बनो। इंद्रियों की संवेदनशीलता को बढ़ाओ, सौंदर्य प्रेमी और काव्यपूर्ण बनो। छोटी–छोटी चीजों के प्रति कृतज्ञता, धन्यवाद भाव से भरो। शिकायत छोड़ो, अहोभाव तुम्हारे जीवन की शैली बने। विश्लेषण न करो, चीजों को खण्डों में न तोड़ो, जैसी हैं तथाता भाव से वैसी ही देखो। तुम्हारा हृदय विकसित होने लगेगा।

प्रश्न–16– प्रेम में भी मध्यमार्ग पकड़ना चाहिए अथवा प्रेम–घृणा की अति छूना चाहिए?

उत्तरः– सामान्यतः हम जिसे प्रेम कहते हैं, उसमें प्रेम घृणा का खेल चलेगा। अगर तुमने उससे बचने की कोशिश की तो तुम पाखण्डी और बेईमान हो जाओगे। नहीं, प्रेम, घृणा

की अतियों पर डोलो, उसके दुख को झेलो, वह दुख ही तुम्हें जगाने वाला होगा और तब तुम एक दिन अतिक्रमण कर पाओगे। और बुद्ध जिस प्रेम की बात करते हैं, जीसस जिस प्रेम की बात करते हैं, ओशो जिस प्रेम की बात करते हैं उस निर्द्वंद, सच्चे प्रेम को जान पाओगे।

प्रश्न–17– सर्वव्यापी चैतन्य की अवस्था यानी समाधि को केन्द्रित होना क्यों कहते हैं?

उत्तरः– केन्द्रित होना साधन है, साध्य नहीं, केन्द्रित होना मार्ग है, मंजिल नहीं। शुरूआत में केन्द्रित होना होगा, अंत में सर्वव्यापी चैतन्य का विस्फोट होगा। ऐसा समझो एक माली बीज बोता है, जमीन में नीचे बीज को गड़ाता है लेकिन अंततः वृक्ष ऊपर आता है और फूल ऊपर आकाश में खिलते हैं। भगवान शिव तंत्रसूत्र में जो विधियां दे रहे हैं, वे बीज के समान हैं। इसलिए मंत्र को मंत्रबीज कहा जाता है। बीज को दबाओ, बीज में पानी सींचो, बस इतनी ही चर्चा करते हैं। फूल की बात ही नहीं करते, बात करने की जरूरत ही नहीं। फूल तो अपने ही आप आएंगे, स्वयं आएंगे। कितनी ही विधियों में तो शिव इतना ही कह के छोड़ देते हैं, तब, वह, आनंद, वाक्य को अधूरा छोड़ देते हैं। फूल की क्या चर्चा करनी, सुवास की क्या चर्चा करनी? वह तो स्वयमेव आएगी।

प्रश्न–18– आपने कहा कि प्रेम वाले व्यक्ति को ध्यान की जरूरत नहीं है। मैं सच्चा प्रेम करता हूं फिर भी ध्यान में बड़ा रस आता है। ध्यान के बिना प्रेम कैसे पर्याप्त है?

उत्तरः– प्रेम के तीन सच्चे लक्षण हैं– पहला, पूर्ण संतोष का घटना, दूसरा भविष्य का ख्याल न बचना और तीसरा, तुम्हारे मैं भाव, अहंकार का मिट जाना। तुम्हारे भीतर ये तीनो ही घटनाएं नहीं घटी है, अगर अहंकार मिट गया तो फिर कौन सोचेगा कि ध्यान करना है, क्यों करना। पहले तो भलीभांति पहचानो कि तुम प्रेमी किस्म के नहीं, ध्यानी किस्म के हो। अपनी वस्तु स्थिति से परिचित हो, किसी वैज्ञानिक विधि के द्वारा तुम चलो। तुम हार्दिक किस्म के व्यक्ति नहीं हो, हार्दिक लोग प्रश्न नहीं पूछते, प्रश्न सदा विचारशील लोग ही पूछते हैं। हां, अपने प्रेमपात्र के संग रहने का जो समय है, उसे ज्यादा से ज्यादा ध्यानपूर्ण बनाने की कोशिश करो। माल्कियत न करो, स्वतंत्रता दो, मौन और निर्विचार में डूबो, प्रेम के क्षणों में मैत्री भाव और अकलह भाव तुम्हारे भीतर सधे। दूसरे को स्वतंत्रता और सम्मान का भाव हो, दूसरे में परमात्मा का भाव हो, संबंधों में धार्मिकता हो, कामों में पवित्रता हो और अपराध भाव से मुक्ति हो।

प्रश्न–19– मनुष्य इतना संवेदनहीन क्यों है?

उत्तरः– हर बच्चा संवेदन शील जन्मता है, किन्तु संवेदनहीन बन जाता है, क्योंकि समाज और परिवार के साथ उसे समझौता करना पड़ता है। छोटी–छोटी चीजों पर नियंत्रण

करना उसे सिखाते हैं। उसे जरा सी तकलीफ होती, भूख लगती, कपड़े गीले हो गए, वो रोता है, माँ कहती है, रोओ मत। उसे भूख लगी है, परिवार वाले कहते हैं अभी भोजन का समय नहीं, चुप रहो। उसे गाना गाने का मन है, उछलने कूदने का मन है, उसे कहते हैं शांत बैठो, घर में मेहमान आए हैं। धीरे-धीरे हम उसे नियंत्रण सिखाते हैं। सभ्य बनाने की इस कोशिश में आवश्यक बुराई के रूप से वह कठोर होता जाता है और संवेदनहीन बन जाता है। प्रौढ़ होने के पश्चात उसे वापिस अपनी संवेदनशीलता को खोजना होगा। हां, समाज के साथ जो बिल्कुल जरूरी औपचारिकताएं हैं, उन्हें अभिनय की तरह निभाना सीखो।

प्रश्न-20- आप कहते हैं कि भावों को दूसरों पर आरोपित न करो, आत्म केन्द्रित रहो। क्या इससे दमन नहीं हो जाएगा?

उत्तरः- नहीं, अभिव्यक्ति और दमन, एक्सप्रेस करना और सप्रैस करना, दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। मैं आपको तीसरी ही बात कह रहा हूं, ऊर्जा को स्वयं पर लौटाओ। अभिव्यक्ति में भी पर-केंद्रित हो जाता है व्यक्ति और दमन करने में भी। जब तुम ध्यान में डूबते हो, तुम्हारी ऊर्जा अंतर्गामी होती है, जब तुम अभिव्यक्त करते हो, तुम्हारी भावना बहिर्गामी होती है और जब तुम दमन करते हो, तुम्हारी ऊर्जा त्रिशंकु की भांति अधर में लटकी रह जाती है। तो अंतर्यात्रा सीखो।

प्रश्न-21- पश्चिमी मनोविश्लेषण द्वारा मन के निर्ग्रंथन में सफलता क्यों नहीं मिली?

उत्तरः- निर्ग्रंथन करना उनका लक्ष्य ही नहीं है, वे ज्यादा से ज्यादा समाज के साथ व्यक्ति को समायोजित करना चाहते हैं। वे कहते हैं प्रकृति में वापिस लौट जाओ। इसी कारण पश्चिम में पाशविकता बढ़ी है, प्रामाणिकता के साथ-साथ। लोग पशु के समान हो गए हैं, नहीं। भारत के ऋषियों ने एक तीसरी बात कही थी। उन्होनें कहा था पशु हमारा अतीत है, मनुष्य होना हमारा वर्तमान है और बुद्ध होना, संत होना हमारा भविष्य है। ऐसा समझो नदी का एक किनारा पशु है, दूसरा किनारा बुद्ध हैं और बीच में है मनुष्य। मनुष्य तो तनाव में होगा ही। या तो वापिस लौट जाए जानवरों के जगत में, शराब पी ले बेहोश हो जाए, तब वह तृप्ति महसूस करेगा क्षणिक रूप से या वह बुद्ध, परमहंसों के लोक में चला जाए, पूर्ण होश से भर जाए, तब वह संतुष्ट अनुभव करेगा, बीच में तनाव होगा। हां, एक विधायक गंतव्य चाहिए दूसरे पार जाने का, मनुष्यता का, मन का अतिक्रमण करने का, तभी जाके परम संतोष घटित होगा। अतिक्रमण करने पर निर्ग्रंथन होगा, निर्ग्रंथन करने से अतिक्रमण नहीं होगा।

प्रश्न-22- क्या कोई विधि तभी कारगर होती है जब उसमें दीक्षा ली जाए?

उत्तरः- हां, अभी मैं सामूहिक रूप से जो विधियां आपको बता रहा हूं, वो केवल

बौद्धिक ज्ञान के लिए हैं, इससे कोई क्रांति घटित नहीं होने वाली। इनका विज्ञान समझ लो, इनकी तरकीब समझ लो। जब तक तुम किसी गुरू से दीक्षित न होओ तब तक इनका गोपनीय तत्व तुम्हारी पकड़ में नहीं आएगा। ठीक क्षणों की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। यहां मैं जो सिखा रहा हूं, वह केवल इंन्ट्रॉडक्शन है, विधि का परिचय है। तुम्हारे भीतर जिज्ञासा पैदा हो, याद रखना, ये प्रवचन दीक्षा नहीं हैं, दीक्षा तो समर्पण भाव से घटित होती है। दीक्षा में गुरू शिष्य का जीवंत संबंध बनता है और तभी ये विधियां कारगर होती हैं।

प्रश्न–23– आप तादात्म्य को एकमात्र पाप कहते हैं, फिर अनेक विधियों में एकात्म होने को क्यों कहते हैं?

उत्तरः– मूर्छा में किए गए तादात्म्य पाप हैं। उदाहरण के लिए तुम्हारा नाम और रूप, तुम्हारा देश, तुम्हारा धर्म ये तादात्म्य तुम्हारे अचेतन रूप से हुए हैं। वास्तव में मूर्छा पाप है। जब तंत्रसूत्र की विधियों में भगवान शिव कहते हैं, भाव करो कि तुम विराट अस्तित्व के साथ एक हो या कल्पना करो एक गुलाब के फूल को देखते हुए कि तुम एकदम गुलाब के फूल ही हो गए। यह एक सचेतन तादात्म्य है, इसमें चैतन्यता का गुण है और वही ध्यान है। तो अचेतनता पाप है, सचेतनता पुण्य है। तादात्म्य के दो प्रकार हो सकते हैं इसलिए सचेतन तादात्म्य ध्यान की विधि के रूप में काम आता है।

प्रश्न–24– क्या पश्चिम में अभिव्यक्ति की छूट प्रामाणिक होने की दिशा में एक कदम है?

उत्तरः– नहीं, प्रामाणिकता के नाम पर, लोग पाशविकता के गढ्ढे में गिर रहे हैं, पाशविकता से बचना है। भारत में आदर्शवाद के नाम पर नकलीपन और पाखण्ड उत्पन्न हुआ है, उससे भी बचना है। इन दोनो के पार एक तीसरी अवस्था, संतत्व की है, बुद्धत्व की है, उस तीसरे विकल्प को पकड़ना है। अपने यथार्थ को देखो, गौर से देखो जीवन के तथ्यों को, विमर्श करो, उसके प्रति जागरूक बनो फिर अपने आप जो हो उसे होने दो। कुछ चीजें बच जाएंगी प्रामाणिक रूप से, कुछ चीजें तुम्हारे जीवन से विदा हो जाएंगी। तो न तो पूरब में जो दमन सिखाया गया है, आदर्शवाद सिखाया गया है, उसको मानना और न ही पश्चिम में जो प्रामाणिकता के नाम पर पाशविकता चल रही है उसको मानना। दोनो के मध्य में है मार्ग।

प्रश्न–25– काम–क्रोध आदि पर ध्यान देने से बेचैनी क्यों होती है?

उत्तरः– जागरूक जब बनोगे, बीमारी के प्रति ज्यादा संवेदनशील बनोगे तो स्वाभाविकरूप से बेचैनी उत्पन्न होगी, उसका कारण समझो। तुम उससे मुक्त होने के ख्याल से उस पर ध्यान दे रहे हो। यह ठीक विमर्श नहीं है, यह सम्यक ध्यान नहीं है। उदाहरण से समझो, राम ने और कृष्ण ने जागरूकता साधी और तब उन्होंने जीवन की प्रकृति को

स्वीकार कर लिया, तब उसके साथ वे सहज हो गए। इसके ठीक विपरीत बुद्ध और महावीर ने भी जागरूकता साधी और उनके जीवन से प्रकृति विदा ही हो गई। काम, क्रोध, लोभ, मोह समाप्त हो गए। तो ये दो ढंग सही हैं, या तो प्रकृति को पूरा का पूरा स्वीकार लो जागरूकता सहित या पूरा इंकार कर दो जागरूकता सहित। तुम बीच में खिचड़ी पका रहे हो, तुम जागने की कोशिश कर रहे हो इसलिए कि इनसे मुक्त हो जाओ, छोड़ने की भावना तुम्हारे भीतर पहले से आ गई, उससे बेचैनी उत्पन्न होती है।

प्रश्न–26– भावावेग में मूर्च्छा पकड़े तो कैसे रुकें?

उत्तरः– जागने की शुरूआत छोटी–छोटी आदतों से करो, अपनी मूर्छा को छोटी–छोटी चीजों से तोड़ना शुरू करो। उदाहरण के लिए सड़क पर चलते हुए साइनबोर्ड न पढ़ना, चलते हुए हाथ न हिलाना, किसी की बात सुनते हुए सिर न हिलाना, बिस्तर में से उतरते हुए एक खास पैर जमीन पर पहले मत रखना। छोटी–छोटी आदतें हैं तुम्हारी, उनसे शुरू करो। फिर गहरे पानी में भी तैरना सीख पाओगे, पहले उथले पानी में तो सीख लो। भावावेश बहुत गहरा पानी है। समुद्र में कूदकर तैरना सीखने की कोशिश नहीं करना, डुबकी खा जाओगे। स्वीमिंग पुल में, उथली नदी में, कमर तक पानी में तैरना सीखो जब उसमें हाथ–पैर चलाना आ जाए, निश्चित रूप से फिर गहरे पानी में भी जा सकोगे।

प्रश्न–27– क्या दीक्षा व गुरुकृपा विधियों से ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है?

उत्तरः– शब्द बदलने से कुछ न होगा, गुरूकृपा, गुरू के प्रति समर्पण, दीक्षा का भाव यह भी एक विधि है, यह एक अल्टिमेट विधि है। जो व्यक्ति अन्य सारी विधियां कर चुका, थक चुका और देख चुका उनकी असफलता को, वही समर्पण कर पाता है।

प्रश्न–28– प्रेम सतत् रूप से करना कठिन जान पड़ता है। प्रेम भक्ति कब बनता है?

उत्तरः– अगर प्रेम को तुम कृत्य समझोगे, कर्म समझोगे तो थक ही जाओगे, ऊब ही जाओगे और वह सतत नहीं हो पाएगा। नहीं, प्रेम कृत्य नहीं है, भावदशा है, प्रेम श्वांस लेने जैसा है। जब तुम शत्रु के पास होते हो तब भी तुम्हारी श्वांस तो चलती है न। बस वैसा ही तुम्हारा प्रेम होना चाहिए। घृणा का कारण समझो, घृणा का कारण है भय। जब तक तुम्हें लग रहा है कि तुम मर सकते हो, मिट सकते हो, तुमसे कुछ छीना जा सकता है तब तक तुम भयभीत रहोगे, तुम्हारा प्रेम सतत नहीं हो सकता। जिस व्यक्ति ने अपने भीतर के अमृत स्वरूप को पहचान लिया केवल वही भयमुक्त होता है, और केवल वही सतत् प्रेम में जीता है, ऐसा सतत् प्रेम भक्ति बन जाता है।

प्रश्न–29– तंत्र शरीर को इतना महत्व क्यों देता है?

उत्तरः– क्योंकि अभी तुम शरीर ही हो, आत्मा–परमात्मा सिर्फ बातचीत है और धर्म की यात्रा वहीं से शुरू हो सकती है, जहां तुम खड़े हो। किसी कल्पना से शुरू नहीं हो सकती इसलिए देह का उपयोग करो। तंत्र और ताओ द्वैत भाव नहीं सिखाते। परमात्मा पदार्थ का ही सूक्ष्म रूप है और पदार्थ परमात्मा का स्थूल रूप है। दोनों में कोई द्वंद न देखो, काम से राम तक ऊर्जा का उर्ध्वगमन होने दो, शरीर का ठीक ढंग से उपयोग करो।

प्रश्न–30– आसक्ति व स्वतंत्रता के बारे में कुछ कहें।

उत्तरः– सामान्यतः हमारा प्रेम बड़ा आसक्ति पूर्ण होता है, दूसरे के ऊपर हम माल्कियत जमाने की कोशिश करते हैं। एक पारस्परिक माल्कियत जमाने का कुरूप खेल प्रेम के नाम पर चलता है, यह तभी समाप्त हो सकता है जब सच्चा प्रेम जागे। ध्यान के माध्यम से स्वबोध से भरो, तब साहस और स्वतंत्रता उत्पन्न होगी और तब तुम्हारा प्रेम आंतरिक आनंद का अतिरेक प्रवाह होगा, ओव्हर फ्लोइंग ब्लिस। दुखी आदमी कभी सच्चा प्रेम कर ही नहीं सकता, उसकी नजर दूसरे के शोषण पर होती है। केवल आनंदित व्यक्ति ही प्रेम दे सकता है, बांट सकता है और तब वह आसक्त नहीं होता।

प्रश्न–31– देखने की विधियां तीसरी आंख को कैसे प्रभावित करती हैं?

उत्तरः– जब तुम्हारी दोनो आंखों की पुतलियां ठहर जाती और अपलक तुम देखते हो तो बाहर जाने वाली ऊर्जा भीतर की ओर मुड़ती है। दो आंखों से बाहर जाने वाली शक्ति भीतर तीसरे नेत्र पर इकट्ठी होने लगती है और इस प्रकार वह रूपान्तरण में उपयोगी होती है। इस संबंध में एक सावधानी का ख्याल रखना, जो लोग तीसरे नेत्र की साधना करते हैं अगर उन्हें लगे कि बहुत तीव्र गर्मी आज्ञा चक्र पर उत्पन्न हो रही है या जैसे किसी मशीन से कोई छेद कर रहा है आज्ञा चक्र पर, जब ऐसा अनुभव होने लगे, वहां पर तीसरे नेत्र की साधना को छोड़ देना चाहिए।

प्रश्न–32– सम्मोहनविदों की आंखें डरावनी क्यों हो जाती हैं?

उत्तरः– क्योंकि वे जरूरत से ज्यादा शक्ति आंखों में इकट्ठी कर लेते हैं, जिसे झेलने की क्षमता आंखों में नहीं होती। शिकारिओं के साथ भी अक्सर ऐसा हो जाता है, लेकिन धार्मिक व्यक्ति इसमें रस नहीं लेते। क्योंकि दूसरे पर प्रभुता जमाना, दूसरे को सम्मोहित करना, दूसरे को सुझाव देना बड़ा हिंसात्मक है, वह अध्यात्म का हिस्सा नहीं है। इसलिए अनायास अगर कोई शक्ति मिल भी जाए तो उसका उपयोग मत करना। शेष प्रश्न कल लेंगे धन्यवाद।

तंत्र संबंधी तंत्र संबंधी
तृतीय प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता– सदगुरू ओशो शैलेन्द्र जी के चरणों में नमन करता हूं। पिछले सत्र में कुछ प्रश्न शेष रह गए थे आज उन पर प्रकाश डालने की कृपा करें।

प्रश्न–33– आंख की गति रोकने या पट्टी बांधने से मानसिक तनाव क्यों होता है?

उत्तरः– तन और मन एक संयुक्त इकाई है। तन, मन का स्थूल हिस्सा है, मन, तन का सूक्ष्म हिस्सा है। यदि हम एक पर कोई क्रिया करते हैं तो उसका प्रभाव दूसरे पर भी पड़ता है। जब हम आंख की गति रोकते हैं तो मानसिक तनाव पैदा होता है, क्यों? क्योंकि वह ऊर्जा जो आंखों के द्वारा बाहर जा रही थीं, हमने उसको रोक लिया। यह तनाव कैसे विदा होगा, जब हम इस ऊर्जा का आंतरिक उपयोग सीख जाएं। जब हम भीतर के अंतराकाश को निहारने लगें, भीतर के आलोक से परिचित हो जाएं, तब वह शक्ति जो बाहर देखने में व्यय हो रही थी वह भीतर देखने में उपयोग में आने लगेगी, तब मानसिक तनाव पैदा नहीं होगा।

प्रश्न–34– क्या मुझ जैसे भावुक व बौद्धिक, दोनों प्रकार के मिश्रित साधक को दो अलग–अलग तरह की विधियां करनी चाहिए?

उत्तरः– नहीं, अपने आप को भलीभांति पहचानो, तुम भावुक किस्म के नहीं हो। तुम्हारा प्रश्न संदेह से भरा है, विश्लेषणात्मक है, तर्कयुक्त है। तुम एक विचारक किस्म के व्यक्ति हो। इसलिए ऐसी विधि चुनो जो वैज्ञानिक प्रकार की हो, जिसमें कल्पना या भाव का

प्रयोग न हो। तुम एक बौद्धिक किस्म के व्यक्ति हो। दुनिया में इतने लोग अधार्मिक हैं, उसका कारण यहीं कि धर्म जन्म से बंधा हुआ है। काश, धर्म मुक्त हो। जरा सोचो, अगर रामकृष्ण परमहंस जैन धर्म में पैदा हुए होते और भगवान महावीर किसी भक्त संप्रदाय के परिवार में पैदा हुए होते तो दोनो की बड़ी मुसीबत हो जातीं, वे अपनी मंजिल को न पा पाते। अपने–अपने ढंग से चलो, अपने आप को भलीभांति पहचानो, तुम किस किस्म के व्यक्ति हो और उस प्रकार की विधि को चुनो।

प्रश्न–35– जीवन स्वीकार की दृष्टि वाली तंत्र साधना में मृत्यु की विधियां क्यों हैं?

उत्तरः– क्योंकि अमृत जीवन की तलाश में मृत्यु बोध का उपयोग किया जा सकता है। द्वैत रहित है तंत्र की दृष्टि, इसलिए मृत्यु जीवन का विपरीत नहीं है। तंत्र की नजरों में मृत्यु जीवन का शिखर है और इसलिए उसका भी उपयोग किया जा सकता है, महाजीवन की तलाश में।

प्रश्न–36– शरीर के मृतवत होने से मन का रूपांतरण कैसे होगा?

उत्तरः– जब हमारा शरीर सक्रिय होता है तब हमारी ऊर्जा बहिर्मुखी होतीं है, व्यस्त होतीं है और ध्यान का अर्थ है अनअक्यूपाइड कांशसनेस। अगर शरीर मृतवत पड़ा हो, बिल्कुल निष्क्रिय हो तब भीतर के होश का क्या होगा? सामान्यतः ऐसी अवस्था गहन सुषुप्ति में बनती है। किन्तु अगर हम भीतर जागे हुए हों और कर कुछ भी न रहे हों, न कोई शारीरिक क्रिया, न कोई मानसिक क्रिया तब वह भीतर की चैतन्यता ही विस्फोटक हो जाती है। वह भीतर इकट्ठी हुई शक्ति महाचैतन्य बन जाती है और उससे रूपान्तरण होता है। महर्षि रमण ने इसी प्रकार परम ज्ञान को पाया, स्वयं ओशो ने निष्क्रियता के द्वारा मृतवत पड़े होकर ही सात वर्ष और चौदह वर्ष की उम्र में सतोरी की झलक पाई और 21 वर्ष की उम्र में परम ज्ञान को उपलब्ध किया।

प्रश्न–37– क्या हम सचेतन रूप से अपनी अचेतन वृत्तियों का संयमन करें?

उत्तरः– ठीक वैसा संभव नहीं, क्योंकि चेतन मन तुम्हारे अंग का एक हिस्सा है, तुम्हारे मन का 99 प्रतिशत हिस्सा अचेतन है, अनकांसस है। एक छोटा सा अंश बड़े से हिस्से में कभी भी विजय नहीं प्राप्त कर सकता। नहीं, संयम करने की कोशिश न करो, समझने की कोशिश करो। बोधपूर्ण बनो, पाशविकता हमारे जड़ों में समाई हुई है। इसका विरोध करने से केवल अंतर्संघर्ष पैदा होगा, विजय हासिल नहीं होगी, तुम बुरी तरह हारोगे। समझो, जानो–पहचानो। जैसे विज्ञान ने प्राकृतिक नियम को समझा। तो प्रकृति पर विजय हासिल

हुई, इसी प्रकार अपनी प्रकृति, अपने भीतर के पाशविकता के प्रति जागो, चैतन्य बनो, वह जागरूकता ही रूपांतरणकारी होगी। बोध ही असली कुंजी है अध्यात्म की।

प्रश्न–38– शहरों के अराजक शोरगुल को विधायक ध्वनि में कैसे बदलें?

उत्तरः– पहले तो भलीभांति यह जानो कि नकारात्मकता बाहर नहीं है, नकारात्मकता तुम्हारे भीतर है। तुम्हें विधायकों से रूपांतरित नहीं करना है। मेरी बात सुनके तुम्हें अजीब लगेगा। बाहर जो हम देखते हैं विधायक या नकारात्मक, वो तुम्हारे भीतर का ही प्रोजेक्शन है। इसलिए अपने प्रश्न को बदलो, तुम जीवन के प्रति नकार से भरे हो और उस नकार के कारण समझो। पहला कारण अहंकार, अहंकार को लड़ने में मजा आता है। इसलिए हम बाहर की निगेटीविटी को प्रोजेक्ट करते हैं, फिर उससे हम संघर्ष शुरू कर देते हैं। दूसरा, हमारा मन अज्ञात से डरता है और जीवन न केवल अज्ञात है बल्कि अज्ञेय भी और तीसरा जीवन द्वैत पर निर्भर है, यहां सुख और दुख जुड़े हुए हैं, जन्म और मृत्यु जुड़े हुए हैं। हम सिक्के के एक पहलू को तो बचाना चाहते हैं, दूसरे को हटाना चाहते हैं जो कि नामुमकिन है, असंभव है। इसलिए हमारे मन में निगेटीविटी होती है। तंत्र की दृष्टि को समझो, सिक्के के दोनो पहलुओं को स्वीकारो। और तब तुम विधायक और नकारात्मक दोनो के पार चले जाओगे। दोनो के भीतर और बाहर तुम्हें वैसा ही नजर आएगा, समग्र जीवन का स्वीकार हो जाएगा। वह स्वीकार तुम्हें रूपान्तरित करता है।

प्रश्न–39– दमन इतना अधिक हो गया है कि अपना झूठा और सच्चा चेहरा कैसे पहचानें?

उत्तरः– एक बात तुम स्मरण रखो, जितने चेहरों को तुम पहचानते हो वे सब नकली और झूठे हैं। जापान के झेन संत जिस ओरिजनल फेस, मौलिक चेहरे की बात करते हैं, वो इन चेहरों में से कोई भी नहीं। जब तक तुम समाज के द्वारा दिए गए सारे शिक्षा संस्कारों के प्रति जागरूक न हो जाओ, जब तक तुम निर्विचार जागरूकता में, ध्यान की स्थिति में जड़ें न जमा लो तब तक तुम अपने निराकार स्वरूप को न जान सकोगे, वह निराकार स्वरूप ही तुम्हारा वास्तविक मौलिक चेहरा है। समाज ने जो चेहरे तुम्हें सिखाए हैं, वो सभी नकली हैं। असली चेहरा वह है जो जन्म के पहले तुम्हारे पास था, मृत्यु के बाद भी तुम्हारे साथ होगा।

प्रश्न–40– मंत्र दीक्षा की प्रक्रिया और उसे गुप्त रखने के कारण बताएं।

उत्तरः– मंत्र दीक्षा की प्रक्रिया गहन प्रेम जैसी है। प्रेम बाजार में, सड़क पर नहीं किया जाता, उसके लिए एकांत चाहिए, गोपनीयता चाहिए। ठीक इसी प्रकार गुरू और शिष्य का संबंध और भी ज्यादा गोपनीय है। कोई डॉ. तुम्हें प्रिसक्रिपशन देता है, वे प्रिसक्रिपशन केवल

तुम्हारे लिए है, वो सार्वजनिक नहीं है। हो सकता है जो दवाई तुम्हारे बहुत काम की हो, वो दूसरों के लिए हानिप्रद हो। किसी को उससे एलर्जी हो सकती है, जो किसी के प्राण बचा सकती है, वही किसी के प्राण ले भी सकती है। तो गुरू जब तुम्हें मंत्र देता है, तुम्हें देखकर, परखकर, तुम्हें जानकर, तुम्हारी गहराइयों में उतर कर वह विशेष विधि तुम्हें देता है, वो सबके लिए नहीं है, वह कोई सार्वजनिक बात नहीं है, वो केवल निजी रूप से तुम्हें दी गई है। इसलिए मंत्र को गोपनीय रखा जाता है। दूसरी बात, जिस चीज को हम कह देते हैं, वह सुपरफिसियल हो जाती है, उथली हो जाती है और खो जाती है। अपने दिल का भार कहके आदमी निर्भार हो जाता है, अपने मन की बात कहके हल्के हो जाते हैं, वो बात बाहर निकल जाती है। जिस चीज को तुम छुपाते हो, गुप्त बनाते हो, वो तुम्हारे आत्मा में जड़ें जमा लेती है। चूंकि मंत्र को तुम्हारी आत्मा में गहरे उतारना है इसलिए उसकी गोपनीयता पर विशेष जोर है।

प्रश्न–41– सक्रिय ध्यान के अराजक संगीत और पश्चिमी रॉक संगीत में क्या अंतर है?

उत्तरः– रॉक संगीत केवल तुम्हारे दमन को उघाड़ता है जबकि ध्यान का संगीत न केवल दमन को उघाड़ता है बल्कि उसका निष्कासन भी करता है। ऐसा समझो तुम्हारे घर में धूल–धमास भरी हुई है, तुमने खिड़की दरवाजे बंद करके झाड़ू लगाई तो धूल–धमास और भी पूरे कमरे में फैल जाएगी। भीतर ही भीतर उड़ती रहेगी और एक दूसरा उपाय है, झाड़ू से धूल धमास को बाहर ले जाएं, बाहर निकालें तब तुम्हारा घर स्वच्छ हो जाएगा। वही फर्क है, आधुनिक संगीत में और ध्यान में प्रयोग किए गए संगीत में।

प्रश्न–42– मध्यमार्ग की साधना में भोग व दमन के भेद को कैसे समझें?

उत्तरः– भोग में भी ऊर्जा खर्च होती है और दमन में भी। भोग में ऊर्जा बहिर्गामी हो जाती है इसलिए खर्च होती है और दमन में अतर्संघर्ष में लग जाती है इसलिए खर्च होती है। इन दोनो के पार है अतिक्रमण। तंत्र का लक्ष्य वही है। न तो बाहर अपनी ऊर्जा को नष्ट करना और न ही भीतर स्वयं से लड़ने में नष्ट करना। तब तुम्हारे भीतर ऊर्जा का एक भंडार बनता जाएगा। वो जो शक्ति संरक्षण है, वही तुम्हारे भीतर महाचैतन्य को, सुपर कांशसनेस को जन्म देगा, वही ऊर्जा से लबालब साधक अंतर्यात्रा पर जा सकेगा। भीतर यात्रा के लिए शक्ति चाहिए तब निर्दोषता और वास्तविक ब्रम्हचर्य घटित होते हैं, भोग और दमन दोनो के पार।

प्रश्न–43– क्या गुरु के प्रति खुले होने और प्रेम के प्रति खुले होने में कोई संबंध है? मैं समर्पण कैसे करूं?

उत्तरः– निश्चित रूप से दोनों चीजों में संबंध है। जब तुम एक साधारण व्यक्ति के प्रेम में पड़ते हो, तुम उसके प्रति अपने हृदय को खोलते हो। तुम ग्रहणशील बन जाते हो, निर्भय हो जाते हो। जिससे तुम्हारा प्रेम है उसके प्रति तुम्हारा डर समाप्त हो जाता है। तुम उसे अपने भीतर प्रवेश देने को राजी होते हो। दोनो की सीमाएं घुलने और पिघलने लगती हैं, एक–दूसरे में मिलन होने लगता है। एक अपार्थिव ऊर्जा मात्र रह जाती है। अचाह की स्थिति, विश्राम पूर्ण स्थिति बनती है अपने प्रेमपात्र के साथ। गुरू के साथ इससे भी ज्यादा बड़ा प्रेम का संबंध निर्मित होता है। गुरू तुम्हारी आत्मा की गहराइयों में उतरेगा, गुरू शिष्य का संबंध गहन ऊर्जा का हस्तांतरण है। गुरू अपनी सारी जीवन ऊर्जा तुम में उलीच देगा। तुम्हें ग्राहक होना पड़ेगा। तो साधारण प्रेम से भी कई गुना ज्यादा ग्रहणशील तुम्हें बनना होगा। प्रेम एक व्यक्ति के प्रति समर्पण है, श्रद्धा गुरू के प्रति उससे भी बड़ा समर्पण है और भक्ति सारे अस्तित्व के प्रति समर्पण है। वो महानतम प्रेम है, प्रेम की पराकाष्ठा है। समाधि अस्तित्वगत समर्पण है। पूछते हो कि मैं समर्पण कैसे करूं? समर्पण किया नहीं जा सकता, समर्पण घटित होता है। अगर तुमने किया तो तुम उसके कर्ता बन गए, फिर अहंकार आ जाएगा, समर्पण न हो पाएगा। अपने कर्ताभाव की, अहंकार की असफलता को देखो, समर्पण अपने आप घटित होगा।

प्रश्न–44– तंत्र और योग की विधियों की विषय वस्तु में क्या अंतर है?

उत्तरः– कोई भी अंतर नहीं। दोनो की विषय वस्तु आप ही हैं, योग की भी तंत्र की भी। उनकी विधियां अलग हैं, योग बोधपूर्वक दमन सिखाता है, तंत्र बोधपूर्वक भोग सिखाता है। लेकिन लक्ष्य एक ही है, वो है बोध।

प्रश्न–45– क्या किसी विशेष आसन के प्रयोग से भोग को ध्यान बनाया जा सकता है?

उत्तरः– नहीं, तन की स्थिति बदलने से नहीं, मनःस्थिति बदलने से ध्यान घटित होगा। हां, तुम अपने मन को अहंकार से मुक्त करो, समर्पण, प्रेमभाव, करूणा भाव से भरो, तनाव रहित बनो, विश्राम पूर्ण बनो, प्रतीक्षा और गहरे भाव में गहरे डूबो, वर्तमान के क्षण में जीना सीखो, अतीत और भविष्य से मुक्त होना सीखो, गहन जागरूकता और प्रेम से भरो। हां, मनःस्थिति के बदलने से हो सकता है तन की स्थिति भी बदले। वह अपने आप जो भी हो उसे स्वीकारना, उसे नियोजित करने की जरूरत नहीं है।

प्रश्न–46– अनाहत नाद कोई ध्वनि है या निर्ध्वनि?

उत्तरः– दोनो ही कह सकते हैं। परमात्मा के सभी रूप कंट्रडिक्ट्री में कहे जाते हैं इसलिए वह साउंडलेस साउंड है, वह ध्वनिरहित ध्वनि है, वह अनाहत नाद है। ऐसा समझो मैं

अभी यहां बैठा हूं, तुम मेरी उपस्थिति को महसूस कर रहे हो, जब मैं यहां से उठकर चला जाउंगा तब तुम मेरी गैरमौजूदगी को भी महसूस कर सकोगे। ठीक इसी प्रकार जब कोई भी ध्वनियां नहीं रह जातीं तब भी एक ध्वनि रह जाती है, ध्वनि की अनुपस्थिति। उसे निर्ध्वनि भी कह सकते हैं, शून्य की ध्वनि कह सकते हैं, मौन संगीत कह सकते हैं या उसको पूर्ण ध्वनि कह सकते हैं। विरोधाभाषी शब्दों में ही परमात्मा के अनुभव को व्यक्त किया जा सकता है।

प्रश्न–47– तंत्र साधना में काम संबंधी कौन–कौन सी विधियां हैं?

उत्तरः– भगवान शिव ने तीन विधियां 48, 49 और 50 नंबर की विज्ञान भैरव तंत्र में काम संबंधी कहीं हैं। इस संबंध में विस्तार से चर्चा नहीं कर रहा हूं क्योंकि अभी परिपक्व समय नहीं आया है। लोग इतने दमन से भरे हुए हैं कि वे सहज, स्वाभाविक और प्राकृतिक को समझ नहीं पाते। एक दूसरा खतरा और भी है, तंत्र के नाम पर जो लोग आकर्षित होते हैं, अक्सर देखा गया है वे गांजा, भांग, अफीम, मादक द्रव्य और वासना में लिप्त हो जाते हैं। उनका आकर्षण गलत है, वे गलत कारण से आए। वे तंत्र का केवल बहाना कर रहे हैं, कह रहे हैं कि मैं तांत्रिक हूं और उनकी वासना क्षुद्र में अटकी हुई है। ऐसा व्यक्ति तंत्र के लक्ष्य को, आत्मरूपान्तरण को न पा सकेगा। उससे सिर्फ हानि ही होगी, तंत्र की बदनामी होगी। इसलिए जानबूझकर मैंने उन तीन विधियों को, विज्ञान भैरव तंत्र की, छोड़ दिया है। हां, सामूहिक रूप से उसकी चर्चा करने की कोई जरूरत नहीं, अगर कोई मुझे लगेंगे योग्य साधक तो उस संबंध में विस्तार से बात करेंगे। जैसे आधुनिक विज्ञान को चिंता हो गई है कि वैज्ञानिक जो खोजें कर रहे हैं उन्हें गुप्त रखा जाए, क्योंकि राजनीतिज्ञ उनका दुरुपयोग कर रहे है, हिंसा के लिए, युद्ध के लिए, ठीक वैसे ही तंत्र, योग, ताओ ये मनुष्य की चेतना के विज्ञान हैं। देखते हैं, भगवान शिव की इस किताब का नाम है विज्ञान भैरव तंत्र। ये गहनतम विज्ञान है। जब परमाणु की खोज इतनी घातक सिद्ध हो सकती है तो भीतर चेतना की खोज, परमात्मा की खोज भी खतरनाक हो सकती है। मूढ़ लोगों से बचाना होगा, कुछ चीजों को गुप्त रखना होगा। केवल योग्य साधक को ही वे विधियां दी जा सकती हैं। आज प्रश्नोत्तर चर्चा को यहीं समाप्त करते हैं। धन्यवाद।

हर्ष में लीन हो जाओ

बहुत समय के बाद किसी मित्र के मिलने पर जो हर्ष होता है, उस हर्ष में लीन होओ।

आधुनिक बौद्धिक और शिक्षित मनुष्य प्रेम, श्रद्धा और भक्ति से वंचित होता जा रहा है। जैसे-जैसे शिक्षा का प्रसार हुआ, विज्ञान का विकास हुआ, तर्क और संदेह पर जोर हुआ, वैसे-वैसे हृदय के भाव खोने लगे, क्षीण पड़ने लगे हैं। एक हाथ में हमने कुछ पाया है और दूसरे हाथ से हमने कुछ बहुत महत्वपूर्ण गवां दिया है। आज के आधुनिक मनुष्य को ईश्वर में श्रद्धा नहीं है, सद्भावनाओं में श्रद्धा नहीं है, 'सत्यम शिवम सुंदरम' में भरोसा नहीं है, आनंद में भरोसा नहीं है। नकारात्मक चीजों में हमारी बड़ी श्रद्धा है। दुनिया से मित्रता खोती जा रही है, दोस्ती खोती जा रही है, प्रेम खोता जा रहा है। पिछले सौ साल का इतिहास देखें, धीरे-धीरे पश्चिम में करीब-करीब काव्य खो ही गया है। प्रेम की उड़ान खो गई है। आकाश में जो पंख फैलते थे, वे जैसे कट गए हैं और मनुष्य धड़ाम से जमीन में गिर गया है। ये कोई शुभ घटना नहीं है, अध्यात्म के हिसाब से हमारा पतन हुआ है। जो व्यक्ति प्रेम नहीं कर सकता, मित्रता नहीं कर सकता वो गुरू की श्रद्धा भी नहीं कर सकेगा। जो गुरू की श्रद्धा नहीं कर सकता, वो भगवान का भक्त भी नहीं हो सकेगा।

प्रेम, श्रद्धा, भक्ति, मित्रता, स्नेह, करुणा ये सब एक ही तत्व के विविध–विविध रूप हैं, अलग–अलग रंग हैं। आज के सूत्र में भगवान शिव कहते हैं, बहुत समय के बाद किसी मित्र से मिलने पर जो हर्ष होता है, उस हर्ष में लीन हो जाओ। जो खुशी होती है, उस खुशी में डूब जाओ। याद रखना, यह खुशी मित्र से नहीं आ रही, तुम्हारे भीतर से आ रही है, आत्मश्रद्धा से भरो। इस खुशी की तरंग को पकड़कर अपने भीतर डुबकी लगाओ और भीतर तुम्हारे सच्चिदानंद का स्रोत है। ये हर्ष या खुशी की तरंग उस विराट आनंद के सागर में उठी एक छोटी सी लहर है। किसी शायर का एक बहुत सुंदर गीत पढ़ रहा था,

आंख की आंख से जो बात हुआ करती है
इक कहानी की शुरुआत हुआ करती है।
कैसी मदहोशी है ये कैसा नशा है इसमें
जुल्फ की छांव से जो रात हुआ करती है।
दिल के तारों पे थिरकती है गज़ल की जो धुन
आप के होठों से बरसात हुआ करती है।
कौन सा राज नहीं आंखों में उतर आता है
आपसे यूं जो कभी बात हुआ करती है।
कितना पुरनूर हो उठता है सफर मंजिल का
यूं अचानक जो मुलाकात हुआ करती है।

यह अचानक मुलाकात, किसी प्रिय मित्र से तुम्हें आनंद के स्रोत में डुबा देती है। न केवल तुम्हारा हृदय अपितु तुम्हारा मन भी प्रसन्न हो जाता है, यहां तक कि खुशी की तरंगे तुम्हारे शरीर तक में प्रकट हो जाती हैं। इस परिस्थिति का उपयोग कर लो ध्यान में जाने के लिए। कबीर साहब ने कहा है–

दुख में सुमिरन सब करें सुख में करे न कोय,
जो सुख में सुमिरन करे तो दुख काहे को होय।

लोग अक्सर उदासी में, परेशानी में, चिंता में, दुख में ईश्वर को याद करते हैं, उस समय याद करना बहुत कठिन है, करीब–करीब असंभव। काश, हम सुख के क्षणों में, खुशी और हर्ष के क्षणों में, अहलाद् के क्षणों में परमात्मा का स्मरण करें। तब स्मरण बहुत आसान है, क्योंकि परमात्मा सच्चिदानंद स्वरूप है। हमारी छोटी सी खुशी कहीं उसी का एक अंश है, यहां से ही रास्ता बनेगा। अगर सूरज तक जाना है तो सूरज की किरण को पकड़ना। माना किरण बहुत छोटी सी है लेकिन ये सूरज से ही आती है। ठीक इसी प्रकार हमारे जीवन में जो

भी खुशहाली आती है, जो भी प्रसन्नता आती है, वह भीतर सच्चिदानंद के उद्गम से ही आती है। उस किरण को पकड़कर हम सूरज तक पहुंच सकते हैं। शिव कह रहे हैं, कोई मित्र अचानक मिल गया अभी समय का उपयोग कर लो, गवांओ मत इस समय को। अपने भीतर डुबकी लगाओ, ये खुशी की तरंग कहां से आ रही? वे लोग जो प्रेम करने में सक्षम हैं, वे ही परमात्मा को पाने में भी सफल हो सकते हैं। जिन्होंने कभी प्रेम नहीं जाना, जिन्होंने गहरी मित्रता नहीं जानी, उनके जीवन से परमात्मा विदा हो जाता है। आश्चर्य नहीं, आज के शिक्षित, आधुनिक, वैज्ञानिक प्रवृत्ति के संदेहशील मनुष्य के जीवन से परमात्मा विदा हो गया है।

आधी दुनिया करीब–करीब नास्तिक हो चुकी है और बाकी आधी दुनिया भी नाममात्र को ही धार्मिक है, ऊपर–ऊपर की औपचारिकताएं हैं बस, भीतर से धर्म खो गया। प्रेम की प्रतिष्ठा चाहिए, और प्रेम, क्यों शिव कहते हैं पुराना कोई मित्र, बचपन का कोई मित्र अचानक मिल जाने से जो खुशी होती है, क्योंकि बचपन में मित्रता जितनी गहरी होती है, उतनी गहरी मित्रता फिर कभी भी नहीं होती। आप अपने जीवन में जरा टटोलना, सात–आठ साल की उम्र के पहले जो आपकी दोस्ती थी, उसमें जितनी गहराई आपको मिली, वैसी फिर किसी दोस्ती में न मिली। बाद में फिर चालाक बुद्धि उत्पन्न हो गई, विचार पैदा हो गए, फिर हम दोस्ती भी करते हैं तो किसी कारण से करते हैं। व्यावसायिक हो जाती है दोस्ती, बाजार का हिस्सा हो जाती है, लेकिन बचपन में जो मित्रता थी, वो शुद्ध मित्रता थी, वह प्रेम शुद्ध प्रेम था।

मैंने सुना है सेठ चंदू लाल के बारे में। वे नसरुद्दीन को बता रहे थे कि यार बड़ी दुर्घटना घट गई, मेरे बचपन का लंगोटिया यार विचित्तर सिंह मेरी बीबी को लेकर भाग गया, मैं बहुत परेशान, बहुत दुखी हूं। नसरुद्दीन ने सांत्वना देते हुए कहा, तब तो बड़ी याद आती होगी। चंदूलाल ने कहा हां, विचित्तर सिंह की बड़ी याद आती है, मेरा बचपन का लंगोटिया यार था। नसरुद्दीन सोच रहे थे कि बीबी की याद आती होगी। किसको बीबी की याद आती है? किस स्त्री को अपने पति की याद आती है, ऐसे स्त्री पुरुष खोजने बड़े मुश्किल हैं, अगर मिल जाएं तो समझना अद्भुत लोग हैं। एक दूसरे को सचमुच में प्रेम करते हैं, हजारों में शायद कोई एकाध जोड़ा ऐसा होगा। लेकिन बचपन का लंगोटिया यार ज्यादा गहरे भाव से हृदय से जुड़ा हुआ है। चंदूलाल ठीक ही कह रहा है, हंसना मत उस पर, औपचारिकता वाली दोस्ती नहीं होती बचपन की, बाद की दोस्ती तो बस यूं हीं नाममात्र की होती है।

मैने सुनी है एक दूसरी कहानी, एक कंजूस मालिक ने अपने नौकर को समझाया कि सुनो अगर मेरे कोई मित्र मुझसे मिलने आए हों, बैठक खाने में बैठे हों और तुम्हें भीतर किसी काम से मुझे बुलाना है, जैसे समझो कि चाय के लिए बुलाना है तो ऐसा मत कहना कि चाय पीने के लिए भीतर आइए, कुछ दूसरा शब्द इस्तेमाल करना, क्योंकि चाय कहोगे तो फिर दोस्तों को भी चाय पिलानी पड़ेगी। तुम कहना कि आपका फोन आया है, भीतर आकर फोन

अटेंण्ड कर लीजिए। मैं समझ जाऊंगा कि चाय पीने को बुला रहे हो। नौकर ने कहा जी हुजूर ऐसा ही करूंगा। थोड़ी देर बाद ही चार पांच दोस्त आए, मालिक उनसे बातचीत कर रहा था, नौकर ने आकर कहा, 'मालिक आपका फोन आया है जल्दी चलिए।' लेकिन मालिक गपशप में तल्लीन थे, उनको तो पता था कि चाय के लिए बुला रहा है, सचमुच में तो कोई फोन है नहीं। वो बातचीत करते रहे दो मिनट बाद आकर नौकर ने फिर से कहा कि मालिक, मैंने कहा न कि आपका फोन आया हुआ है, जल्दी चलिए नहीं तो फोन ठण्डा हो जाएगा और फोन में एक मक्खी भी गिर गई है। ये दोस्ती, दोस्ती नहीं है।

शिव जिस दोस्ती की बात कर रहे हैं, जिससे सच्चिदानंद में जाया जा सकता है, वो गहरी दोस्ती है। मित्र से ध्यान को हटाकर, खुशी की तरंग से ध्यान को हटाकर, उस स्रोत पर जाना, ये हर्ष की लहर आई कहां से? वह तुम्हारे भीतर से आई है और यह तो केवल एक उदाहरण है कि मित्र के मिलने पर जो खुशी हुई। किसी भी खुशी में, तुम सूर्यास्त देख रहे हो शाम को तुम्हारा हृदय प्रसन्न हो गया, इस प्रसन्नता का उपयोग कर लो। तुम कोई स्वादिष्ट भोजन कर रहे हो और अचानक भीतर निर्विचार आ गया, तुम स्वाद में तल्लीन हो गए, इस तल्लीनता का उपयोग कर लो। किसी छोटे बच्चे को मुस्कुराते देखकर तुम्हारे हृदय में खुशी का भाव आ गया, इस खुशी का उपयोग कर लो। किसी जानवर को देखकर या किसी वृक्ष को या फूल को देखकर या कि बादल के किसी रंगीन टुकड़े को देखकर, तुम स्तब्ध रह गए, प्रसन्नता का भाव छा गया, इस प्रसन्नता का उपयोग कर लो। तो मित्र से मिलना तो सिर्फ एक उदाहरण मात्र है, किसी भी चीज से काम चलेगा।

इस विधि को समझाते हुए परम गुरू ओशो कहते हैं– ऐसे बहुत थोड़े क्षण होते हैं जब तुम हर्ष और आह्लाद का अनुभव करते हो, सुख और आनंद से भरते हो, किन्तु तुम उन्हें चूक जाते हो, क्योंकि तुम विषय केंद्रित, 'फोकस आन आब्जेक्ट' हो जाते हो। जब भी प्रसन्नता आती है, सुख आता है तुम समझते हो कि वह कहीं बाहर से आ रहा है। किसी मित्र से मिलते ही स्वभावतः लगता है कि आनंद उस मित्र की वजह से आ रहा है, मित्र से मिलने के कारण आ रहा है, किंतु हकीकत ऐसी नहीं है। सुख हमेशा तुम्हारे भीतर है, मित्र तो केवल परिस्थिति निर्मित करता है। मित्र ने सुख को बाहर आने का अवसर दिया और उसने तुम्हें उस सुख को देखने में हाथ बंटाया। और स्मरण रखना यह नियम केवल सुख के लिए नहीं, सभी चीजों के लिए है। क्रोध, शोक, संताप, दुख सब पर लागू होता है। चाहे विधायक भाव हों, चाहे नकारात्मक तुम्हारी सारी मनःस्थितियां जो किन्हीं खास परिस्थिति में प्रकट होती हैं, उसमें परिस्थिति केवल सहायक होती है, तुम्हारे भीतर छिपे भाव को प्रकट करने में। वे भाव वास्तव में तुम्हारे भीतर ही मौजूद होते हैं। अपने इन भावों को पकड़ो और एक और महत्वपूर्ण बात स्मरण रखना, जब तुम नकारात्मक भाव के प्रति सजग होते हो तो नकारात्मक भाव से मुक्त हो जाते हो। अगर तुम क्रोध के प्रति जागोगे, क्रोध विदा हो जाएगा और अगर तुम खुशी के प्रति जागोगे, खुशी प्रगाढ़ हो जाएगी, तुम उसमें तल्लीन हो जाओगे, तुम सच्चिदानंद को जान

लोगे। अगर तुम उदासी के प्रति जागरूक होगे, उदासी तिरोहित हो जाएगी और अगर प्रसन्नता के प्रति जागरूक होगे, प्रसन्नता कई गुनी बढ़ जाएगी। यह पहचान है कि कोई भाव नकारात्मक है कि सकारात्मक, निगेटिव फीलिंग्स होश में टिक नहीं पाती। पाजिटिव फीलिंग्स होश के साथ कई गुनी ज्यादा बढ़ जाती हैं। तो आओ पांच मिनट छोटा सा प्रयोग करते हैं। माँ ओशो प्रिया के साथ, खुशी की तरंग में डूबने का। धन्यवाद।

खड़े होकर अपने बाजू वाले मित्र से ऐसे मिलें, जैसे कि वह बचपन का बिछड़ा हुआ घनिष्ठ मित्र है। उत्साह, उमंग, प्रेमभाव, मैत्रीभाव और हर्ष में डूबें, गले लगाएं। अब अकेले आंख बंद करके बैठ जाएं। बाहरी खुशी की तरंगे भीतर प्रवेश कर चुकी हैं। अब इन आनंद लहरों को महसूस करें और इसमें डूबें। शवासन में लेट जाएं। सारी उत्तेजनाएं विदा हो गई, अद्भुत मौन अवतरित हो आया। आंतरिक आनंद में सराबोर हो जाएं। स्थूल से सूक्ष्म की यात्रा हुई, कारण से अकारण की यात्रा हुई, इस अकारण के आनंद के सागर में प्रवेश करें और गहरे, और गहरे, और गहरे। दो चार गहरी-गहरी सांसें लें। धीरे-धीरे ध्यान से वापिस लौटें, दोनो हाथ जोड़कर धन्यवाद भाव से भर जाएं। आज का ध्यान पूरा हुआ। हरिं ओम तत्सत्।

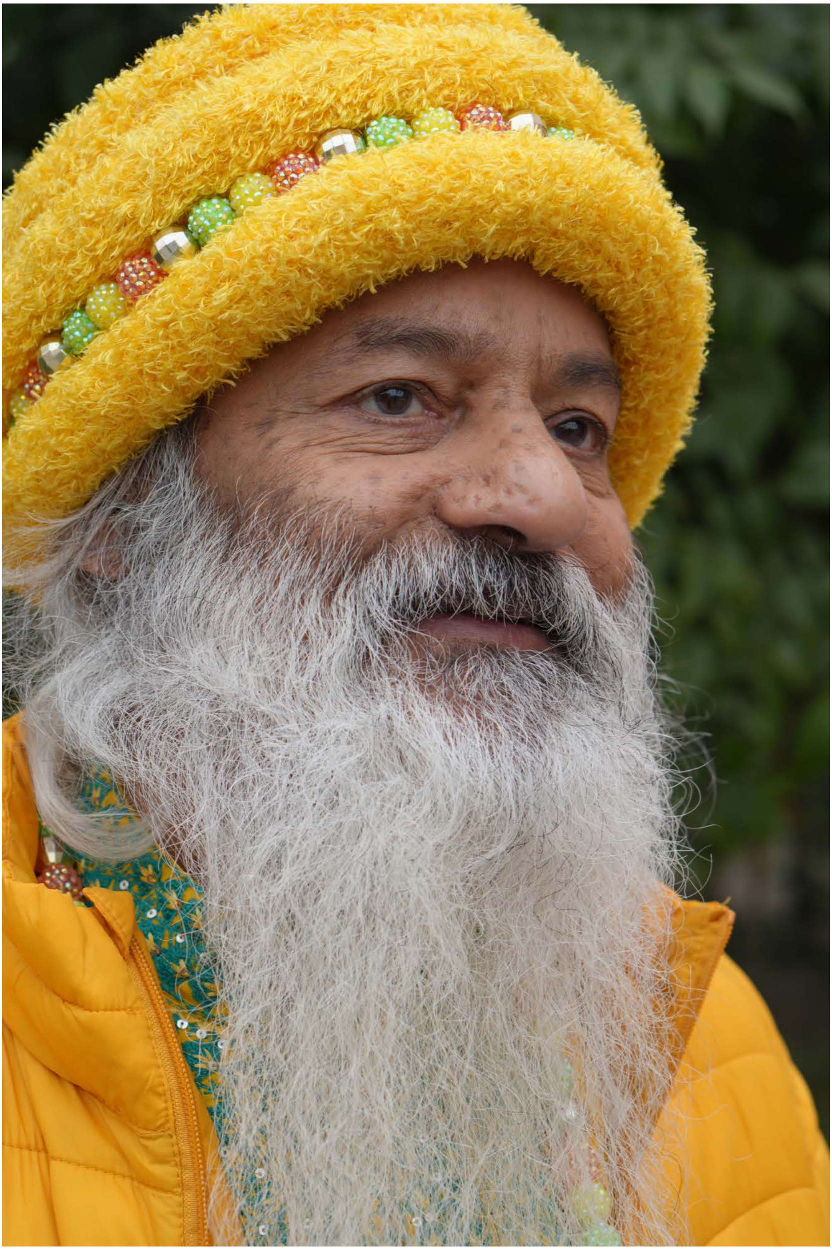

स्वाद ही बन जाओ

भगवान शिव कहते हैं– हे देवी, भोजन करते हुए या पानी पीते हुए, भोजन या पानी का स्वाद ही बन जाओ, और उससे भर जाओ।

विधि के पूर्व थोड़ी सी भूमिका की बात– हमारा मन सदा ही रूढ़िवादी है, वह कभी भी प्रगतिशील नहीं होता। क्योंकि मन बना है अतीत के संस्कारों से, अतीत की शिक्षाओं से, हमारे संग्रहित ज्ञान के भण्डार से, हमारे अनुभवों से। वह कभी भी वर्तमान के साथ जुड़ नहीं पाता। मन यानि अतीत की धूल, मन यानि पुराने विचार, मन यानि पुराने अनुभव, इसलिए वह संस्कारजन्य ही होगा। वह शिक्षा और समाज के द्वारा जन्मा है। यहां तक कि वे लोग जो अपने आप को बड़ा प्रगतिशील समझते हैं, उदाहरण के लिए साम्यवादी या वैज्ञानिक, वे भी अपने अतीत से बंधे होते हैं। एक कम्युनिस्ट से कम्यूनिज्म के खिलाफ कुछ कहो या किसी एलोपैथिक डॉक्टर से एलोपैथी के खिलाफ कुछ कहो, वो उतना ही नाराज होगा जितना किसी कट्टरपंथी ईसाई या जैन को उसके धर्म के विपरीत कहो। विज्ञान के साथ भी उसने अंधविश्वास जोड़ लिए हैं, उसके अपने पक्षपात

और पूर्वाग्रह बन गए हैं। वह खुद कट्टरपंथी हो गया है। किंतु मन तो मन ही है, उस मन में हमने क्या भरा, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। याद रखना, मन रूपी कंटेनर हम लेकर जन्मे हैं। और मन के कंटेन्ट्स समाज, शिक्षा और परिवार ने हमको दिए हैं। तो मन शब्द को हम दो भांति से प्रयोग करते हैं। एक तो मन यानि संभावना, सीखने की क्षमता और एक मन यानि सीखे हुए विचारों का संग्रह। यह विचारों का संग्रह सदा ही वर्तमान के साथ द्वंद में रहता है, क्योंकि यह अतीत से आता है। तंत्र की विधियां कंटेन्ट्स से मुक्त होकर कंटेनर में डूबने के प्रयोग हैं। अतीत–भंडार को छोड़कर वर्तमान–क्षण में आने के उपाय हैं।

अगर एक जैन पुरुष, एक मुसलमान स्त्री से अगर विवाह कर ले तो इनका साथ–साथ जीना बहुत मुश्किल होगा। उनका दांपत्य जीवन बहुत दुखी होगा, क्योंकि दोनों के संस्कार, दोनों की आदतें, दोनों की शिक्षाएं बड़ी भिन्न–भिन्न हैं। ये संग–साथ रह नहीं पाएंगे। पश्चिम में जहां बदलाहट बड़ी तेजी से हो रही है, वहां आदमी ज्यादा अशांत हो गया है। पूरब में बदलाहटें तेजी से नहीं होती, चीजें धीरे–धीरे गति से चल रही हैं, इसलिए आदमी ज्यादा शांत है। पश्चिम में जब तक आप नए के साथ एडजेस्ट हो पाएं, तब तक वह नया 'आउट आफ डेट' हो चुका, पुराना हो चुका। अब और नया आ गया– लेटेस्ट! उसके साथ फिर से समायोजन करो। ये समायोजन की प्रक्रिया में आदमी विक्षिप्त हुआ जा रहा है। भारत के ऋषियों ने ठहराव के प्रति रुचि दिखाई है। छोटी–छोटी चीजों में, उन चीजों में रस लो जो रुकी हुई हैं। अब उदाहरण के लिए, बुद्ध कहते हैं अपनी आती–जाती श्वास को देखो। विज्ञान भैरव तंत्र की शुरूआत ही श्वास की विधियों से होती है। श्वास सदा एक सी ही है, सदा चल रही है। काश, हम रुकी हुई, ठहरी हुई चीजों में रस लेने लगें तो हम शांत होते जाएंगे। और जितना ही हम बदलती हुई, परिवर्तनशील चीजों में रस लेंगे, हम उतने ही बेचैन और उद्विग्न होंगे।

आज की विधि में भगवान शिव कहते हैं पार्वती से, हे देवी! भोजन करते हुए अथवा पानी पीते हुए, भोजन या पानी के स्वाद से ही भर जाओ। बड़ी प्यारी और अदभुत विधि है। पानी का स्वाद, हममें तो शायद किसी ने पानी का स्वाद चखा ही न होगा। हम तो बस यूं ही गुटक जाते हैं, भोजन को भी हम बस यूं ही निगल जाते हैं। काश, थोड़े संवेदनशील होकर, सेंस्टिव होकर, अगर रूखा–सूखा भी भोजन करें, उससे इतना स्वाद आएगा जिसकी कोई तुलना नहीं की जा सकती है। भोजन की तो छोड़ें, आप हैरान होंगे कि क्या पानी पीना भी इतना सुखदायक हो सकता है? जब आप ध्यानपूर्ण, सजग होकर, संवेदनशील होकर पानी पिएंगे तब अदभुत रस भीतर झरेगा। न केवल जीभ में, पूरे शरीर में लहरों की भांति वह रस फैल जाएगा। लेकिन हम तो अगर भोजन की तारीफ भी कभी करते हैं तो सिर्फ औपचारिकता के तौर पर ही करते हैं। मैने सुना है, एक कवि महोदय की पत्नी रूठ कर मायके चली गई, उन्होनें उसको पत्र लिखा। कवि की कल्पनाएं तो बड़ी ऊंची होती हैं, लंबी–चौड़ी बात कहते हैं। कवि महोदय ने लिखा–

एक तुम हो कि कितनी सुंदर हो, सौंदर्य की समुंदर हो,
चौदहवीं का चांद हो या आफताब हो।
कितनी भोली–भाली व प्यारी हो, लाजवाब हो,
गजब की ईमानदार हो, कितनी मेहनती और वफादार हो।
अकलमंद व सयानी हो, पढ़ी–लिखी ज्ञानी हो,
कितना स्वादिष्ट भोजन पकाती हो
कितने तरीके से परिवार चलाती हो।
और एक हम हैं नालायक जो कवि हैं और शराबी हैं,
ऊपर से झूठ पर झूठ बोलने के आदी हैं।

कवि झूठ से भरा हुआ है। उसकी तारीफ कि 'तुम स्वादिष्ट भोजन पकाती हो', झूठी है। शब्दों पर नहीं जाना, हो सकता है कि श्रीमानजी ने कभी ठीक से भोजन का स्वाद लिया हीं न हो। बस झूठ बोलने के आदी हैं। मैने सुना है, एक भिखारी सेठ चंदूलाल जी से बोला कि सेठजी, चार दिन से भूखा हूं, कम से कम पचास पैसे दे दीजिए ताकि भरपेट खाना खा सकूं। सेठ चंदूलाल ने आश्चर्य से उसकी तरफ देखा और कहा कि पचास पैसे नहीं पांच रुपए दूंगा, पहले ये बता कि पचास पैसे में भोजन कहां मिलता है? कल से मैं भी तेरे साथ वहीं जाकर भोजन करूंगा। कंजूस मारवाड़ी, अद्भुत सूत्र हाथ लग गया, पचास पैसे में भोजन!!

भोजन में रस लेना, भोजन में स्वाद लेना एक कला है। अधिकांश लोगों को मैं देखता हूं, भोजन भी इतने जल्दी–जल्दी करते हैं और दुनिया भर की बातें करते रहते हैं। अखबार भी बगल में पड़ा है, पढ़ते जा रहे हैं उसे, डिस्कशन भी चल रहा है लोगों से, टीवी भी ऑन है, सीरियल भी देखते जा रहे हैं, भोजन भी करते जा रहे हैं। इनको भगवान शिव की यह बात समझ में न आएगी, कि भोजन करना ध्यान बन सकता है, कि पानी पीना ध्यान बन सकता है।

झगड़कर आफिस गए हुए मुल्ला नसरुद्दीन ने, फोन पर अपनी पत्नी से पूछा कि जानेमन, आज खाने में क्या बना रही हो? उनकी पत्नी गुलजान गुस्से में जली–भुनी थी, बोली, जहर का सूप, चूहामार दवा की चटनी और पोटेशियम सायनाइड का हलवा। मुल्ला बोला बहुत सुंदर, बहुत सुंदर। अच्छा एक बात सुनो जानेमन, तुम खाना खाके सो जाना मैं आफिस की एक जरूरी पार्टी में हूं, आज बाहर से ही खाना खाकर देर से घर आ पाऊंगा।

लोग क्रोध में, तनाव में, गुस्से में खाना खाते हैं। अक्सर पत्नियां उसी समय अपने

सारे दुख सुनाती हैं जब पति को खाना खिला रही हैं। जबकि ध्यान बनाया जा सकता है भोजन करने को भी। जापान में झेन फकीरों ने चाय पीने को भी ध्यान बना लिया। वे सब बैठते हैं आग जलाकर गोल घेरे में, चूल्हे पर केतली रखी, गुरू ने उसमें पानी डाला, पानी के खौलने की आवाज सारे शिष्य हाथ जोड़कर बैठे हुए हैं, पानी की बुदबुदाहट सुन रहे हैं। पानी खौलने लगा, भाप बनने लगा, उसमें चाय की पत्ती डाली, पत्ती की खुशबू फैलने लगी। सब लोग संवेदनशील होकर, धीमी गहरी श्वास लेते हुए, चाय की खुशबू का एहसास कर रहे हैं। फिर सदगुरू अपने हाथ से केतली के द्वारा उनके कपों में चाय डालेगा, वे दोनो हाथ से कप को इस प्रकार से पकड़ेंगे जैसे प्रसाद ग्रहण कर रहे हों। कप की गर्मी को महसूस करेंगे, नाक के पास लाकर चाय को सूंघेंगे, फिर एक–एक घूंट, एक–एक घूंट करके चाय पिएंगे। कोई एक घंटा लगता है, उनको चाय पीने में। उनका चाय पीना एक प्रार्थना है, एक ध्यान विधि है। छोटी–छोटी चीजों को ध्यान में बदला जा सकता है।

मैंने सुना है एक आदमी ने पूछा कि ऐ मुल्ला जी, इतनी तेजी से कहां जा रहे हैं? मुल्ला ने कहा कि बड़ी जोर से भूख लगी है, डोसा खाने जा रहा हूं। और सेठजी आप किधर जा रहे हैं? सेठ चंदूलाल ने कहा कि मैं तो कारखाने जा रहा हूं। मुल्ला ने कहा 'कार' खाने, आपको इतनी जोर से भूख लगी है कि कार–खाने जा रहे हैं, आश्चर्य कि इतनी बड़ी कार कैसे खाएंगे?

सवाल यह नहीं कि तुम क्या खाओ? बड़ी चीज या छोटी साधारण चीज, सस्ती चीज कि मंहगी चीज, छप्पन प्रकार के भोजन कि साधारण रूखी–सूखी रोटी, अगर तुम्हें भोजन करने की कला आ गई तो छोटी सी छोटी चीज में भी तुम परमात्मा को जान सकोगे। ओशो ने एक प्रवचन में कहा है कि रामकृष्ण परमहंस ने स्वाद के माध्यम से परमात्मा को जाना। ये बात कभी किसी ने कही नहीं, ओशो ने पहली बार इस रहस्य को खोला है। रामकृष्ण परमहंस भोजन के बड़े शौकीन थे। ब्रह्मचर्चा चलती रहती शिष्यों के साथ और अचानक उठकर चले जाते किचन में और पूछते अपनी पत्नी से कि शारदे, आज भोजन में क्या बना है? उनके लिए खुद भोजन लेना भगवान को भोग लगाने बराबर है। कबीर साहब ने कहा है– 'खाऊं पिऊं सो पूजा।'

उपनिषद के ऋषियों ने परमात्मा की परिभाषा की है– 'अन्नं ब्रह्म', परमात्मा अन्न है, भोजन है। हिंदुओं के पास एक अद्भुत ग्रंथ है विष्णुसहस्रनाम, उसमें भगवान के एक हजार नाम हैं, याद रखना, उसमें एक नाम अन्न भी है। भोजन भी परमात्मा है। ऐसा समझो रामकृष्ण परमहंस उपनिषद के ऋषियों की इस परिभाषा के जीते जागते स्वरूप थे। इस सूत्र पर बोलते हुए परमगुरू ओशो ने कहा–

'भोजन करते या पानी पीते हुए, भोजन या पानी का स्वाद ही बन जाओ और उससे भर जाओ। धीरे–धीरे भोजन करना, स्वाद लेकर करना और स्वाद के प्रति सजग रहना। स्वाद के प्रति सजग होने के लिए धीरे–धीरे भोजन करना बहुत जरूरी है। तुम भोजन को बस निगलते मत जाना, आहिस्ते–आहिस्ते, एक–एक कौर का स्वाद लेना और स्वाद ही बन

जाना। जब तुम मिठास अनुभव करो तो बस मिठास ही बन जाओ और तब वह मिठास सिर्फ मुंह में नहीं, सिर्फ जीभ में नहीं, पूरे शरीर में अनुभव की जा सकेगी, वह पूरे शरीर पर फैल जाएगी। तुम्हें लगेगा कि मिठास या कोई अन्य चीज लहर की तरह फैलती जा रही है। इसलिए तुम जो कुछ भी खाओ, उसे स्वाद लेकर खाओ और स्वाद ही बन जाओ। तंत्र कहता है जीवन्त बनो, क्योंकि जीवन ही परमात्मा है। जीवन के अतिरिक्त कोई परमात्मा नहीं है। तुम जितने जीवन्त होओगे, उतने ही परमात्मा होओगे। और जब समग्रतः जीवन्त होओगे तब तुम्हारे लिए फिर कोई मृत्यु नहीं रहेगी।'

अदभुत हैं ये वचन! आओ, आज हम भोजनशाला में चलकर इस प्रयोग को करें।

भोजन करते हुए, स्वाद लेते हुए, धीरे-धीरे चबाकर, आंख बंद करके, खूब संवेदनशील होकर स्वाद को लेना। जब चाय पियो तो चाय की गर्माहट, उसकी खुशबू, उसकी मिठास, उसका कसैलापन, विस्तार से पूरे स्वाद को लेना। सुगंध का मजा लेना। भूल जाना सारे संसार को, बस चाय ही सब कुछ हो जाए। जब पानी पी रहे हो... एक-एक घूंट, जरा आहिस्ते-आहिस्ते गटकना, ऐसे समझो कि परमात्मा को ही पी रहे हो। तुम पाओगे, भगवान शिव का यह सूत्र तुम्हारे लिए साकार हो गया। भर जाओ स्वाद से, रोम-रोम में स्वाद को फैल जाने दो, अद्भुत प्रतीति होगी। छोटी-छोटी घटनाएं कितना कुछ दे सकती हैं, हमने कभी ख्याल भी नहीं किया।

भोजन-पानी के पश्चात् अपनी जीभ की नोक को नीचे के दांतों के पिछले हिस्से में लगाना, आहिस्ता से मुंह को बंद कर लेना। जीभ बिल्कुल रिलैक्स्ड, अपनी स्वाभाविक स्थिति में और भीतर ही भीतर मंद से मंदतर होते जा रहे स्वाद का अनुभव करो। अब भोजन तो नहीं है, चाय तो नहीं है, पानी तो नहीं है, लेकिन एक सूक्ष्म स्वाद रह गया, इस सूक्ष्म स्वाद को अनुभव करो। आंख बंद करके इस सूक्ष्म स्वाद-बिंदु का ख्याल करो। भोजन या चाय से मिली हुई उत्तेजना समाप्त हुई, एक और अद्भुत स्वाद भीतर आने लगा, वह दिव्य स्वाद है।

जब आप ओशोधारा के कार्यक्रम दिव्य समाधि में आएंगे, तब दिव्य रस से परिचित होंगे। उपनिषद के ऋषि कहते हैं परमात्मा की परिभाषा- 'रसो वै सः' अर्थात् वह रस-रूप है। एक आंतरिक रस, एक आंतरिक स्वाद, एक अतीन्द्रिय स्वाद भीतर आने लगा। अब आंख बंद कर लो और अपने भीतर के स्वाद में लवलीन हो जाओ। भाव करो, यह दिव्य स्वाद तुम्हारी पूरी चेतना में फैल रहा है। रोम-रोम इस स्वाद से आप्लावित हो रहा है।

डूब जाएं, इस अनूठे स्वाद में डूब जाएं। संवेदनशीलता को और बढ़ने दें, चैतन्यता को और बढ़ने दें, जितनी ही उत्तेजना कम, उतनी ही चेतना ज्यादा। सामान्यतः हम उत्तेजक भोजन करके अपनी चेतना को मंद कर लेते हैं। सूक्ष्म स्वादों में डूबो, पानी का स्वाद। और अब तो पानी का स्वाद भी न रहा, सूक्ष्मातिसूक्ष्म दिव्य-स्वाद आ रहा है। यह केवल जीभ पर ही नहीं, सिर्फ मुंह पर ही नहीं, पूरी चेतना में व्याप्त है। इस दिव्य स्वाद में डूबते-डूबते समाधि लग जाएगी, एक दिन तुम भी कह सकोगे 'अन्नं ब्रह्म'। भोजन के माध्यम से भगवान को जान लिया। ओम नमो शिवाय।

बोध बना रहे कि मैं हूं!

हे कमलाक्षी, हे सुभगे, गाते हुए, देखते हुए, स्वाद लेते हुए, यह बोध बना रहे कि मैं हूं, और शाश्वत आविर्भूत होता है।

कहां थे आप जमाने के बाद आए हैं,
मेरी तलाश भी जाने के बाद आए हैं।
जहान भर में जिन्हें खोजा दर-बदर ढूंढ़ा,
जब हम थके रुके हारे तब आज आए हैं,
मेरी तलाश भी जाने के बाद आए हैं।
हमारे पास वो आए तो कुछ इस तरह आए,
कि जैसे हमको हमीं से मिलाने आए हैं।
मेरी तलाश भी जाने के बाद आए हैं।
तमाम रात कटी उनकी इंतजारी में,
सुबह को होश में आने के बाद आए हैं।

मिले तो ऐसे कि अब है जुदाई नामुमकिन,
मिले तो ऐसे कि अब है जुदाई नामुमकिन,
मेरे ही रूह समाए थे याद आए हैं।
मेरी तलाश भी जाने के बाद आए हैं।

अध्यात्म की खोज बड़ी विचित्र है, हम जिस परमात्मा को खोज रहे हैं, वह हम स्वयं ही हैं। हम खुद ही को ढूंढ़ रहे इसलिए खोज बड़ी कठिन है और बड़ी सरल भी। सरल से सरल अगर ठीक दिशा में चल पड़ो तो, और कठिन से कठिन अगर जरा सी दिशा भटक गए तो। अगर तुमने स्वयं से दूर खोजा, प्रभु को कभी न पा सकोगे। अपने भीतर ढूढ़ा, अपने स्वरूप में तलाशा तो तुरंत पा लोगे। हम जिसे खोज रहे हैं वह हमसे दूर नहीं है। परमात्मा शब्द का अर्थ समझना, परम आत्मा, अर्थात् 'दि अल्टिमेट सेल्फ', जो परम शब्द है, उसका अर्थ पराया नहीं, दूसरा नहीं, वो परम है, दि अल्टिमेट, आत्मा यानि स्वयं का होना, परमात्मा अर्थात आत्मा का शुद्धतम रूप, आत्मा की परम अवस्था। स्वयं से दूर न खोजना वरना बुरी तरह भटकोगे। भीतर मुड़ो, सारे संत कहते हैं अंतर्यात्रा करो। किसी शायर ने लिखा है–

खुद के बगैर जिंदगी जिए जा रहा था मैं,
कि जैसे कोई गुनाह किए जा रहा था मैं।

हमारा स्वयं का होना आविर्भूत होता है, जब हमारी दृष्टि स्वयं पर पड़ती है। सामान्यतः हम दृश्य में उलझे हुए हैं। बाहर के जगत में इंद्रियों के द्वारा जो ज्ञान हमें मिल रहा है, हम उसमें खो जाते हैं और जिसे ज्ञान हो रहा है, उसको भूल जाते हैं। दृश्य में खो जाते, द्रष्टा भूल जाता है। 'नोन' और 'नोअर' का डिफरेंस याद रखना। हम ज्ञात में खो गए और ज्ञाता को भूल गए, ये हमारी सारी तकलीफ है। अध्यात्म की कला बस इतनी ही है, ज्ञेय से ज्ञाता की तरफ, दृश्य से द्रष्टा की तरफ, दूसरों से स्वयं की ओर चलो। आज भगवान शिव कहते हैं विधि नंबर 53 में, हे कमलाक्षी, हे सुभगे, गाते हुए, देखते हुए, स्वाद लेते हुए यह बोध बना रहे कि 'मैं हूं' और शाश्वत आविर्भूत होता है। बड़ी ही अद्भुत, बड़ी ही सरल और बड़ी ही कठिन विधि है, करोगे तब पता चलेगा। इसके लिए कभी एक हाथ–घड़ी को अपने पास रखके बैठ जाना, सेकेण्ड के कांटे को देखना और स्मरण रखना कि घड़ी को देखते हुए मैं स्वयं के बोध से भरा रहूंगा। तीन सेकण्ड भी न बीत पाएंगे और तुम भूल जाओगे खुद को। पता नहीं किन विचारों में, कल्पनाओं में, स्मृतियों में चले जाओगे। लेकिन अगर तुमने साधना जारी रखी, धीरे–धीरे–धीरे स्वयं के होने का एहसास बना रहेगा। फिर कौन सी

क्रिया कर रहे वह बात महत्वपूर्ण नहीं है। इसलिए भगवान शिव ने तीन–चार क्रियाएं गिनाईं। कहा, गाते हुए, स्वाद लेते हुए, देखते हुए, बोध बना रहे कि मैं हूं।

मुख्य बात यह है कि स्वयं का बोध बना रहे। बाहर कौन सी क्रिया चल रही वह बात गौण है, तुम्हें गाने का शौक है, गाते हुए करना, भोजन करते हुए करना, स्नान करते हुए करना, बगीचे में टहलते हुए करना, बातचीत करते हुए करना। हां, कुछ चीजें हैं जो सरल हैं, कुछ चीजें हैं कठिन। उदाहरण के लिए, बातचीत करते हुए स्वयं का बोध निम्नतम हो जाता है, न्यूनतम पर पहुंच जाता है क्योंकि जिससे हम बात कर रहे हैं, हम उसके प्रति सजग हो जाते हैं, स्वयं को भूल जाते हैं। अगर आपको संगीत का शौक हो, आंख बंद करके चुपचाप गीत गाना, स्वयं का बोध बहुत आसान होगा। दूसरे की उपस्थिति में मामला कठिन हो जाता है। मौन में, एकांत में, कमरा बंद करके अपने ऊपर लौट आना बड़ा आसान है। मैने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन की दो बेटियां थीं। एक बेटी जब संगीत का रियाज करती तो उसकी छोटी बहन तुरंत घर के बाहर जाकर चौराहे पर खड़ी हो जाती। एक पड़ोसी ने पूछा कि जब भी तुम्हारी दीदी गाना गाती है तो तुम हमेशा यहां आकर चौराहे पर खड़ी क्यों हो जाती हो? उसने कहा ताकि लोग ये न समझें कि इतना बेसुरा और बेताला मैं गा रही हूं।

एक और लतीफा मैंने सुना है, सेठ चंदूलाल की प्रेमिका थी गुलाबो, शादी के पहले की बात है। चंदूलाल ने पूछा कि तुम्हें संगीत का शौक है? गुलाबो ने कहा हां, बचपन से ही बहुत शौक है। चंदूलाल ने पूछा तुम क्या–क्या बजाना जानती हो? गुलाबो ने कहा, मैं तो कई प्रकार के वाद्ययंत्र बजा लेती हूं। उदाहरण के लिए रेडियो, टेलीवीजन, चुटकी, सीटी, ताली, कॉलबेल, ग्रामोफोन, मंदिर का घंटा, घड़ी का एलार्म, टेलीफोन की घंटी, मोबाइल रिंगटोन सभी बजाना जानती हूं। एक और चीज मैं बजाना जानती हूं, पर वह कला मैं विवाह के बाद प्रदर्शित करूंगी। आप जानते हो वह कला कौन सी थी? गुलाबो ने शादी के बाद चंदूलाल के बारह बजा दिए। अगर आप गुलाबो की तरह नहीं हैं और संगीत का शौक रखते हैं तो जरूर भगवान शिव की इस अद्भुत विधि का प्रयोग करना। बहुत ही आसान है, गीत गाते हुए, अपने भीतर डूब जाना। अच्छा हो दूसरों की मौजूदगी में नहीं, एकांत में अकेले करना।

इस विधि को समझाते हुए परम गुरू ओशो ने कहा, तुम अपने चारों ओर की चीजों के प्रति तो सजग हो, परंतु केवल अपने होने के प्रति ही सजग नहीं हो। अगर तुम सारे संसार के प्रति जागे हो और अपने प्रति सोए हो तो तुम्हारी सजगता झूठी है। क्यों, क्योंकि तुम्हारा मन सब कुछ प्रतिबिंबित कर रहा है, सिर्फ तुमको छोड़कर। तुम्हारा मन दर्पण है, वह सारे संसार को रिफ्लैक्ट कर सकता है, किंतु तुम्हें रिफ्लैक्ट नहीं कर सकता। क्यों, क्योंकि तुम उसके सामने खड़े नहीं हो सकते, वह सदा पीछे है, तुम दर्पण के पीछे खड़े हो। इस प्रयोग को करना कठिन है किन्तु अगर तुम प्रयोग में लगन से लगे रहे तो यह घटित होगा। टहलते हुए स्मरण रखो कि 'मैं हूं', अपने होने को महसूस करो, ऐसे किसी विचार या धारणा को नहीं लाना है, बस महसूस करना है। मैं तुम्हारा हाथ छूता हूं या तुम्हारे सिर पर अपना हाथ रखता हूं, उस

स्पर्श को शब्द मत दो, केवल स्पर्श को अनुभव करो और इस अनुभव में इस स्पर्श में, स्पर्शित को भी अनुभव करो। तब तुम्हारी चेतना की तीर में दो फलक हो जाएंगे, 'डबल एरोड कांशसनेस'।

तुम वृक्षों की छाया में टहल रहे हो, वृक्ष हैं, हवा है, उगता हुआ सूरज है, चारों तरफ का सुंदर दृश्य तुम उसके प्रति सजग हो, अचानक ठिठक जाओ और क्षण भर के लिए स्मरण करो कि 'मैं हूं'। अपने होने को अनुभव करो, कोई शब्द न दो सिर्फ अनुभव करो कि 'मैं हूं'। यह शब्दहीन अनुभूति क्षण मात्र के लिए ही सही, तुम्हें सत्य की वह झलक दे जाएगी जो कोई एलएसडी नहीं दे सकती। क्षण भर के लिए तुम अपने अस्तित्व के केन्द्र पर फेंक दिए जाओगे। तब तुम दर्पण के पीछे, प्रतिबिंबों के जगत के पार चले गए, तुम मन के पार अस्तित्व में चले गए और यह प्रयोग तुम किसी भी समय कर सकते हो। इसके लिए न किसी खास जगह की जरूरत है और न ही खास समय की। अचानक स्मरण करो कि 'मैं हूं' और इस झलक को फिर जारी रखने की चेष्टा करो। बड़ी अद्भुत विधि है, सच पूछो तो जिन 112 विधियों की हम चर्चा कर रहे हैं, उसका सार–सूत्र इस विधि में समाया हुआ है। सोवियत रूस के संत जार्ज गुरजिएफ ने अपने शिष्यों को यह प्रयोग बार–बार करवाया। वे कहते थे तीन महीने के लिए एकांत वास करो, दूसरे को भूल जाओ, बस इतना ही स्मरण रखो कि 'मैं हूं'। बड़ा कठिन था यह प्रयोग, एक बार तीन महीने के लिए पचास लोगों ने इस प्रयोग को किया। अधिकांश लोग एक सप्ताह के बाद ही भाग खड़े हुए। एक महीना बीतते–बीतते आधे लोग जा चुके थे। तीन महीना समाप्त होने पर केवल तीन लोग रह गए थे। लेकिन इन तीन लोगों के जीवन में बड़ी क्रांति घट गई, स्वयं के होने का बोध। यही है असली ध्यान, यही है असली धर्म की यात्रा।

महर्षि रमण ने इसी प्रयोग को दूसरे ढंग से कराया। वे कहते थे, पूछो अपने भीतर मैं कौन हूं, हू एम आई? घटना वही घटेगी स्वयं का बोध आ जाएगा। मैं कौन हूं, इसका कोई दार्शनिक उत्तर नहीं खोजना है, कोई शास्त्रीय उत्तर नहीं ढूंढ़ना है कि तुम कहने लगो कि मैं ब्रह्म हूं, सच्चिदानंद स्वरूप हूं, मैं तो शुद्ध बुद्ध चैतन्य हूं। नहीं, कोई उत्तर नहीं खोजना। बस प्रश्न हो जाए 'मैं कौन हूं'? एक प्रश्न चिन्ह लग जाए और अचानक शाश्वत अविर्भूत होता है। तो किसी क्रिया को करते हुए या कभी निष्क्रिय चुपचाप बैठे हुए अपने होने के बोध से भरो। ओशो की एक किताब है– ध्यानयोग प्रथम एवं अंतिम मुक्ति, मेडिटेशन द फस्ट एण्ड लास्ट फ्रीडम। उसमें ओशो के द्वारा कही गई बहुत सी विधियां संकलित हैं। अगर आप मुझसे पूछें कि उसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण विधि कौन सी है, सारभूत विधि तो मैं यह कहूंगा, उसमें यही विधि मुख्य है कि 'मैं हूं' के भाव में डूबो, 'मैं हूं' ध्यान। सर्वाधिक सारभूत ध्यान है यह और समस्त ध्यान विधियां जो हम करते हैं, उन सबका मुख्य लक्ष्य यही है कि स्वयं का एहसास हो जाए, अपना ख्याल आ जाए। भारत के गांव में जब कोई बेटा जा रहा हो शहर तो बाप उससे कहता है, उसके बड़े बुजुर्ग उससे कहते हैं, बेटा अपना ख्याल रखना। ये बात बड़ी

महत्वपूर्ण है, ये सिर्फ इतना ही नहीं है कि सिर्फ अपनी देखभाल करना। अपना ख्याल रखना, इसमें तो एक आध्यात्मिक संदेश छुपा हुआ है। काश, हमें अपना ख्याल बना रहे, जिसे अपना ख्याल आ गया वह धन्य है। तो आओ, इस विधि का प्रयोग हम करते हैं। गीत गाते हुए, नाचते हुए, कीर्तन करते हुए अपने होने के बोध से भरते हैं।

आज के ध्यान में आपका बहुत–बहुत स्वागत है। सभी मित्र आज बैठकर कीर्तन करेंगे और जब कीर्तन गाएंगे तो गाते हुए गायक का भी ख्याल रखेंगें। यह बोध बना रहे कि मैं हूं। रामा रामा हरे हरे। हरे राम हरे राम, रामा राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्णा, कृष्णा कृष्णा हरे हरे। खड़े हो जाएं, अब कीर्तन गाते हुए नृत्य भी करें और ख्याल रखें कि नृत्य परिधि पर चलता है, केन्द्र पर सब कुछ थिर है, ठहरा हुआ है। हरे राम हरे राम, रामा राम हरे हरे। हरे कृष्णा हरे कृष्णा, कृष्णा कृष्णा हरे हरे। बिना केन्द्रित हुए देखें, देखते हुए अपने होने का बोध बना रहे, मैं हूं, मैं हूं। शवासन में लेट जाएं। नृत्य नहीं है मगर आप हैं, आंखें बंद हो गईं, दृश्य खो गया, फिर भी आप हैं, आप नहीं खोए। दो चार गहरी–लंबी श्वांसें, और धीरे–धीरे ध्यान से वापस लौटें। आज का ध्यान पूरा हुआ। हरि ओम् तत्सत्।

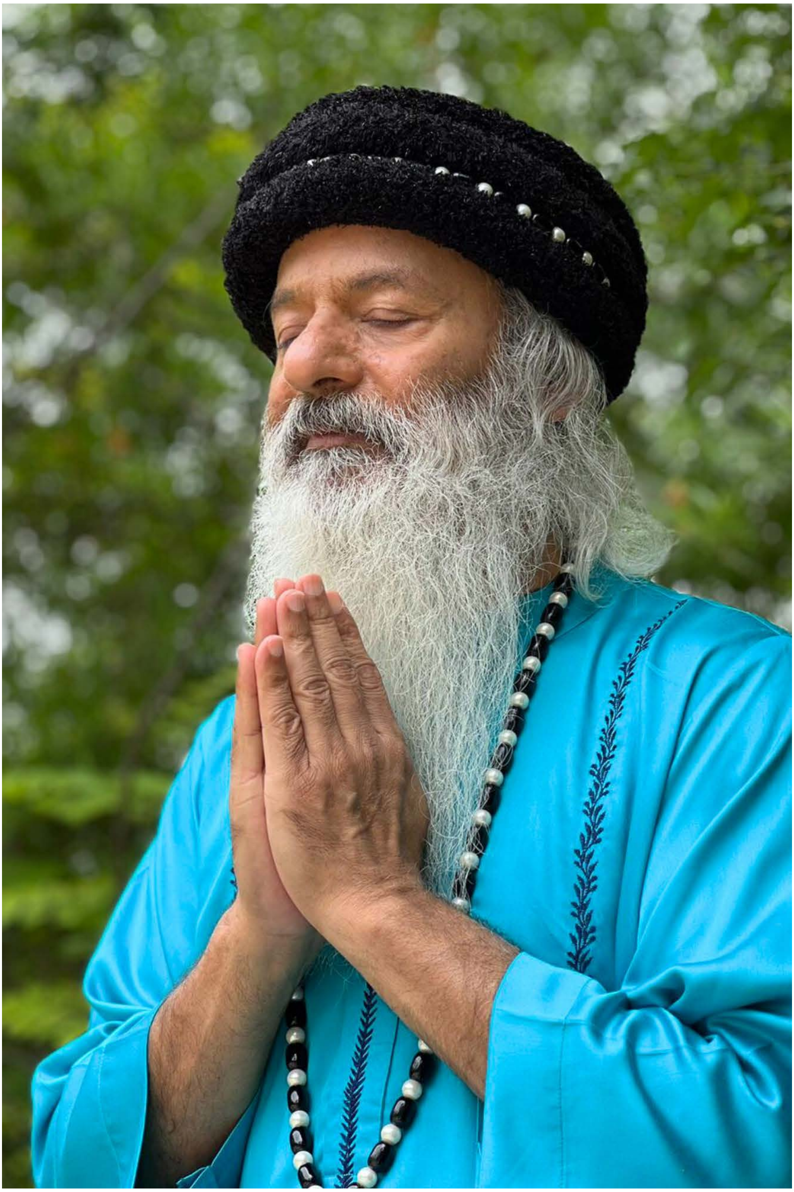

कृत्य में संतोष पाओ

जहां–जहां जिस कृत्य में सुख मिलता है,
उसे वास्तविक करो।

गम जुदा रंज जुदा दर्द जुदा देते हैं,
दिल लगाने की ये बुत खूब सजा देते हैं।

किसी शायर ने लिखा है–

आसमां से उतारा गया, जिंदगी देके मारा गया,
इश्क जिसने किया सोच ले, वो तो बेमौत मारा गया।
मेरी महफिल से वो क्या गए साथ में दिल हमारा गया,
आके रिंदों में सेखे हरम आज बेमौत मारा गया।
मुझको साहिल का देके फरेब मौत के घाट उतारा गया,
मौत से भी जो न मर सका उसको नजरों से मारा गया।

गम जुदा रंज जुदा दर्द जुदा देते हैं,
दिल लगाने की ये बुत खूब सजा देते हैं।

जिंदगी को अगर तुम सजा की दृष्टि से देखोगे तो वैसी ही लगने लगेगी, मजा की दृष्टि से देखोगे तो वैसी लगनी लगेगी। हमारे नजरिए पर, हमारे दृष्टिकोण पर सब कुछ निर्भर करता है। सामान्यतः हम दुख का चश्मा चढ़ाकर, उसके माध्यम से जगत को देखते हैं, सारा जगत नरक दिखाई पड़ता है। जापान के झेन फकीर बोकोजु से किसी ने पूछा, स्वर्ग और नरक के बारे में आप क्या कहते हैं? बोकोजु ने कहा कि हर व्यक्ति अपना स्वर्ग या नर्क अपने साथ लिए चलता है। ऐसा नहीं सोचना कि कहीं स्वर्ग में प्रवेश मिलेगा या नर्क में प्रवेश मिलेगा, हम आलरेडी उसमें प्रविष्ट हो चुके हैं। हमने अपने आस-पास स्वर्ग या नर्क बना लिया है। वह कोई भौगोलिक स्थान नहीं है, वो कोई परिस्थिति नहीं है, मनःस्थिति है। हमारे भीतर ही मौजूद है।

मैने सुना है सेठ चंदूलाल का बेटा नदी में बाढ़ आने से, डूब रहा था। एक अजनबी आदमी ने अपनी जान दांव पर लगाकर उसकी जान बचाई। बाद में सेठ चंदूलाल कहीं रास्ते में उस आदमी से मिले। उससे जाकर कहा कि क्या आप ही वह सज्जन हैं, जिसने मेरे बेटे की जान बचाई? वो कहने लगा कि हां, सेठ जी मैं ही हूं वह। लेकिन इस बात को भूल जाइए, यह तो मेरा फर्ज था, मेरा कर्तव्य था, इस बात को भूल जाइए। चंदूलाल ने कहा, अरे वाह! ऐसे कैसे भूल जाऊं, वो लड़के की चप्पलें कहां हैं? जो चीज खो गई उस पर हमारी नजर है, जो बच गया उस पर हमारी नजर नहीं है। ये हमारी सामान्य चित्त की अवस्था है। मुंह में बत्तीस दांत हैं, चौसठ साल तक रहे, कभी भी उनका पता न चला। जब एक दांत टूट गया तो जीभ बारम्बार वहीं जाती है। कहां है दांत, चप्पल कहां है? ये दांत सालों-सालों से था कभी जीभ ने इसकी फिक्र न की थी। आज नहीं है तो दिन में सौ बार स्मरण में आता है कि दांत नहीं बचा।

अभाव ग्रस्त दृष्टि है हमारी। अगर साधना में डूबना है तो इसके ठीक विपरीत मनःस्थिति पैदा करनी होगी। उसके बिना धर्म की कोई यात्रा संभव नहीं। जो चीज मौजूद है, उस पर तुम्हारी नजर हो, जो खो गया उस पर नहीं, जो मिल गया उस पर तुम्हारी नजर हो। सुखवादी बनो। सामान्यतः लोग समझते हैं कि धर्म दुखवादी है, नहीं, धर्म महासुखवादी है, आनंदवादी है। लेकिन आनंद में वही पहुंच पाएंगे, जिन्होंने सुख अर्जित करने की कला सीख ली, जीवन जीने की कला सीख ली। आज विधि नंबर 54 में भगवान शिव कहते हैं मां पार्वती से, हे देवी! जहां-जहां, जिस कृत्य में संतोष मिलता है, उसे वास्तविक करो। बड़ी अदभुत बात, जिसमें तुम्हें सुख मिलता है, शान्ति मिलती है, संतोष मिलता है उसमें डूबो, अक्सर हम इसका उल्टा करते हैं। लोग मेरे पास आते हैं अपने दुख का रोना सुनाने, अब हम धीरे-धीरे सुनना बंद कर दिए हैं, लोगों को पर्सनल अपॉइन्टमेंट देने बंद कर दिए हैं। वही की वही

कहानी, सास बहू की निंदा करेगी, बहू सास की निंदा करेगी, पति पत्नी की बुराई करेगा, पत्नी पति की आलोचना करेगी, बाप बेटे की शिकायत करेगा, बेटा अपने माँ बाप की शिकायत करेगा। सब शिकायत–शिकायत–शिकायत से भरे हुए हैं। अक्सर पत्नी आके कहेगी पती के बारे में।

अभी कल ही कोई मुझे चुटकुला सुना रहा था एक। व्हाट इज द सिमिलर्टी बिटवीन द ओसामा बिन लादेन एण्ड ए लॉयल हसबैण्ड। बोथ कैन नाट बी फाउण्ड। पत्नियों की यही शिकायत कि उनके पति वफादार नहीं हैं। पतियों की शिकायत उनकी पत्नी कटु वचन बोलती है, हमेशा कटाक्ष कहती रहती हैं, कभी मीठा नहीं बोलती। एक दूसरे के प्रति शिकायत–शिकायत से भरे हुए। मैं पूछता हूं अक्सर स्त्रियों से कि कभी बचपन में आपको कोई शौक रहा है? जिसमें आपको बहुत मजा आता था, कोई हॉबी। एक स्त्री ने कहा, 'हां मैं सितार बजाती थी।' उसके पति से पूछता हूं आपकी क्या हॉबी रही? वो कहते हैं कि फुटबाल खेलने में बहुत मजा आता था। मैंने पूछा कब से सितार नहीं बजाया आपने? महिला कहती है कि वो तो शादी के पहले बजाती थी। सितार लेके तो ससुराल में आई ही नहीं, वो तो मायके में ही छोड़ आई। पति से पूछता हूं आपने कब से फुटबाल नहीं खेली? कहते हैं वो तो स्कूल लाइफ में खेलते थे, फिर विवाह हो गया, घर गृहस्थी में फंस गए बस तब से फुटबाल नहीं खेली। जिस कृत्य में संतोष मिलता था, वह उन्होंने छोड़ दिया। अब ये लोग एक–दूसरे पर नाराज होंगे। इसमें दूसरे की कोई गलती नहीं, कोई भूल–चूक नहीं। जिस चीज में आपको मजा आता था वह आपने क्यों छोड़ दी? किसने आपको सितार बजाने से रोका, अब ये जो महिला सितार नहीं बजा पा रही है अब ये अपने पति के बारह बजाएगी, कुछ न कुछ तो बजाएगी। और ये पति देव अब फुटबाल में लात नहीं मार पा रहे हैं, अपनी लातें और घूंसे कहीं और चलाएंगे। पत्नी पर क्रोध प्रकट करेंगे, बच्चों को डांटेंगे–डपटेंगे, कहीं और नाराज होंगे, ऑफिस में गुस्सा निकालेंगे। अच्छा होता एक घंटा भर फुटबाल खेल लेते।

हर व्यक्ति की कुछ न कुछ हॉबी होती है, कुछ शौक होते हैं। अपने भीतर की उस सृजनात्मक ऊर्जा को बहने दो। किसी को गीत लिखने में मजा आता है, किसी को गाने में रस है। कोई जरूरी नहीं कि आप अच्छे गायक ही हों, दूसरों को सुनाने के लिए नहीं, अपने मजे के लिए गाओ। हो सकता है कि कोई आपकी कविता न सुने, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। कविता लिखने में अगर आपको रस आ रहा है, उस रस को लो। भगवान शिव यही कह रहे हैं जिस कृत्य में तुम्हें संतोष मिलता है, उसे करो। कौन तुम्हें रोक रहा है? और अगर फिर तुम असंतुष्ट रहते हो तो इसके लिए जिम्मेवार कौन है? तुम वह काम करते नहीं जो तुम करना चाहते हो। सिर्फ कर्तव्यरूपी, ड्यूटी के समान जिंदगी को जी रहे हो। ये किसने तुम्हारी ड्यूटी लगाई है जिंदगी जीने की। आश्चर्य नहीं कि कितने लोग आत्महत्या कर लेते हैं। अगर तुम सिर्फ बोझ के समान जिंदगी को ढो रहे हो, तुम्हारे पैरों में नृत्य नहीं है, आनंद नहीं है, तब सब कुछ भार हो जाएगा और इसके लिए जिम्मेवार केवल तुम और केवल तुम हो।

आज की इस विधि को समझाते हुए परम गुरू ओशो कहते हैं– दिन भर स्मरण रहे जब भी कुछ सुंदर और संतोषजनक घटित हो, कुछ आनंददायक घटे, उसके प्रति बोध पूर्ण बनो। चौबीस घंटों में ऐसे अनेक क्षण आते हैं, सौंदर्य, संतोष और सुख के क्षण। ऐसे क्षण आते हैं जब स्वर्ग तुम्हारे बिल्कुल निकट होता है। लेकिन तुम नरक से इतने आसक्त हो, इतने अंधे हो कि स्वर्ग के इन क्षणों को चूकते चले जाते हो। सूरज उगता है, फूल खिलते हैं, पक्षी चहचहाते हैं, वृक्षों से होकर हवा गुजरती है, वैसे अदभुत क्षण घटते हैं। एक निर्दोष बच्चा तुम्हें निहारता है, मुस्कुराता है और तुम्हारे भीतर एक सूक्ष्म सुख का भाव उदित होता है। या किसी की हंसी तुम्हें आह्लाद से भर जाती है। अपने चारों ओर देखो और उसे खोजो जो आनंद दायक है और उससे पूरित हो जाओ, भर जाओ। उसका स्वाद लो, अपने प्राणों पर उसे छा जाने दो, उसके साथ एक हो जाओ, उसकी सुगंध फिर तुम्हारे साथ रहेगी। यह अनुभूति दिनभर तुम्हारे भीतर गूंजती रहेगी और यह अनुगूंज तुम्हें ज्यादा विधायक होने में सहयोगी होगी। यह प्रक्रिया धीरे–धीरे बढ़ती जाती है। यदि सुबह शुरू करो, आनंद पूर्वक अपने कृत्यों को करो तो शाम तक सितारों के प्रति, चांद के प्रति, रात के प्रति, अंधेरे के प्रति भी ज्यादा ग्रहणशील हो जाओगे। चौबीस घंटे प्रयोग करो और देखो कैसा लगता है और एक बार तुमने जान लिया कि आनंद तुम्हारे भीतर है, उसका स्रोत तुमसे भिन्न नहीं तब वह सदा–सदा तुम्हारे संग होगा, तब तुम्हारा पूरा जीवन दृष्टिकोण नकार से हटकर विधायक हो जाएगा। तब तुम संसार को एक भिन्न दृष्टि से, एक नई दृष्टि से देखोगे।

एक विधायक भावदशा और दृष्टि पैदा करनी है। अपने भीतर देखो किस कार्य में संतोष मिलता है। वे कौन से क्षण हैं जब तुम प्रसन्न और पुलकित, फूल की तरह खिले हुए होते हो, उन क्षणों को दोहराओ, उनके स्मरण से भरो। हम तो केवल दुखदायी का स्मरण करते हैं, पुराने घावों को कुरेदते रहते हैं, फिर–फिर उन्हीं–उन्हीं की याद, उससे घाव फिर ताजा हो जाते हैं। इस प्रकार कभी भी ध्यान में डूबना न हो सकेगा। ध्यान में डूबने के पहले एक सुख की भूमिका बहुत अनिवार्य है। केवल सुखी व्यक्ति ही सच्चिदानंद की ओर जा सकता है। परमात्मा परमआनंद है, पर जीवन में पहले हम छोटे–छोटे आनंद को तो जानें। जीवन में उन कर्मों को खोजो जिनमें तुम्हें आनंद मिलता है। अगर तुम्हें नहीं समझ में आता तो प्रयोग कर–करके देखो। किसी को बगीचे में काम करना अच्छा लगता है, काम करके देखें। दो–चार दिन में समझ में आ जाएगा इसमें रस है कि नहीं। किसी को संगीत में रस है, साहित्य में रस है, उसमें डूब के देखे।

मैने अपनी जिंदगी में कितने–कितने प्रकार के काम किए? जो मैंने शिक्षा प्राप्त की डॉक्टरी की, उसका बहुत कम उपयोग हुआ है, उसके अलावा जिन–जिन चीजों का मुझे जब–जब शौक चढ़ा, मैने वही कार्य किया। मुझे जादूगरी का शौक था, मैजीशियन बन गया, मुझे आर्केस्ट्रा चलाने का शौक था, संगीत का शौक था, कई सालों तक मैने फिल्मों में आर्केस्ट्रा चलाया, टेलीवीजन सीरियल के लिए कहानी लिखी, आकाशवाणी रेडियो के लिए हास्य नाटिकाएं लिखीं। जो भी मुझे शौक चढ़ा वो सब मैंने पूरा किया। मैंने अपनी इस छोटी

सी जिंदगी में कम से कम चार आदमियों की जिंदगी जी ली। तृप्ति, संतोष, परितोष मुफ्त में नहीं मिलते, कमाना पड़ता है। मैं अन्य लोगों को देखता हूं, एक बंधी-बंधाई रूटीन में, ड्यूटी के समान जिंदगी को जी रहे हैं। थोड़ा भाव से, प्रेम से जियो। जिस चीज में तुम्हें संतोष मिलता है, उसे करो। भगवान शिव के इस अद्भुत वचन को याद रखना। जिस कृत्य में संतोष मिले, उसे वास्तविक करो और उसी के स्मरण में जिओ। आओ आज की इस विधि को करने के लिए हम बाहर बगीचे में चलते हैं। वहां जिस मित्र को जो कार्य सूझे, कहीं गमला सजाना है, कि पानी सींचना है, कि घास उखाड़नी है, जो भी काम आपको ठीक लगे वह करना। किचन के बगीचे में चल के आज हम यही करते हैं।

सभी मित्र बाहर चलें। जो भी आप कर रहे हैं, प्रेम से कर रहे हैं, याद रखना। ये कोई ड्यूटी नहीं है, इससे कुछ मिलने वाला नहीं। नानयूटेलिटेरियन ढंग से चीजों को देखना। थोड़े अनुपयोगी काम ही करो। अपने सुख के लिए करो। जरूरी नहीं कि उससे कोई आर्थिक लाभ हो तभी करोगे। तुम्हें आनंद मिले, संतोष मिले ये ज्यादा महत्वपूर्ण है। चौबीस घंटे में कम से कम एक घंटा तो ऐसा निकाल लो, अपनी मौज से अपनी क्रियेटीविटी को मौका दो। प्रसन्न, पुलकित, ऊर्जा से भरे हुए, अहोभाव से भरे हुए, इस क्षण का आनंद लो। आएं, बैठ जाएं। स्मरण करें उस आनंद का जो इस कृत्य से मिला। इसे अपने हृदय में संजोएं, बुद्ध इसे कहते थे सम्यक स्मृति, 'सम्मासती'। ओशो के अंतिम प्रवचन का अंतिम शब्द है भी यही है- 'सम्मा सती'। अपनी स्मृति में वह सम्हाल के रखो, जो सुंदर है, प्यारा है, सत्यम शिवम सुंदरम। जैसे अपने घर में हम झाड़ू लगाकर पूरा कचरा बाहर फेंक देते, सूखे हुए फूल गुलदस्ते से निकाल कर कचरे में फेंक देते और सुंदर नए ताजे फूल लगा लेते। काश, यही समझदारी हम अपनी स्मृति के साथ करें, अपने मन के साथ जो कूड़ा कचरा है, उसे बाहर हटाएं, जो सुंदर और प्यारा है उसे भीतर सजाएं। हम एक दूसरे ही आदमी हो जाएंगे। अपने मन को कबाड़खाना हमने बनाया है। हम चाहें तो उसे सुंदर उपवन बना सकते हैं। दुखद का स्मरण मत रखना, संताप का स्मरण मत रखना, उसे जाने भी दो। सुखदायी का स्मरण करना, प्रेमपूर्ण का स्मरण करना, बार-बार स्मरण करना। अहोभाव, हे प्रभु! तेरी कृपा अपरंपार है। हे प्रभु तेरी कृपा अपरंपार है। यह प्यारा जीवन हमें मिला, प्रकृति से सुंदर उपहार स्वरूप। धन्यवाद भाव में डूबें।

नींद–जागरण के मध्य में

जब नींद नहीं आई हो और बाह्य जागरण विदा हो गया हो, उस मध्य बिंदु पर बोधपूर्ण रहने से आत्मा प्रकाशित होती है।

मनुष्य की चेतना के चार आयाम हैं। जैसे किसी चौराहे से चार सड़कें गुजरती हैं, ठीक ऐसे ही चेतना के चार आयाम हैं– जागृति, स्वप्न, सुषुप्ति और समाधि। ये हमारी चेतना के चार रास्ते हैं। बीच में एक चौराहे का बिंदु है। जैसे किसी कार में चार गियर होते हैं और एक न्यूट्रल गियर। ठीक वैसे ही हमारी चेतना भी इन चारों गियर में जाने के लिए, किसी भी एक गियर से दूसरे गियर में जाने के लिए, न्यूट्रल गियर से गुजरती है। आज की विधि उसी न्यूट्रल गियर के बारे में है। भगवान शिव कहते है, जब नींद नहीं आई हो और बाह्य जागरण विदा हो गया हो, उस मध्य बिंदु पर बोधपूर्ण रहने से आत्मा प्रकाशित होती है। बड़ी ही सरल और अद्भुत विधि है यह। ऐसा समझें नींद, जागरण और स्वप्न ये पहाड़ी के समान हैं। इनके बीच में एक खाई है। एक पहाड़ी से दूसरी पहाड़ी में छलांग लगाते हुए, खाई के ऊपर से गुजरना होता है। यह विधि डरावनी भी हो सकती है और इसलिए सूफी साधना में वे अपने शिष्यों को पहले कल्पना करने की विधि देते हैं, कहते हैं कि कल्पना करो कि तुम किसी खाई में, किसी कुएं में गिर रहे हो। हो सकता है कि आपमें से कुछ मित्रों को इस प्रकार के सपने आते हों कि किसी अतल कुएं में गिरते जा रहे हैं, गिरते ही जा रहे हैं, गिरते ही जा रहे हैं। नीचे बस अंधकार, अंधकार, अंधकार। कहीं कोई थाह नहीं उसकी,

कोई अंत ही नहीं आ रहा। इस प्रकार का स्वप्न जब आता है, बहुत घबराहट पैदा करता है।

आज की इस विधि को करते हुए बेहतर हो कि इस प्रकार के सपनों का हम स्वयं ही अभ्यास करें। कल्पना करें कि किसी गढ्ढे में गिर रहे हैं। गिरते ही जा रहे, गिरते ही जा रहे। वह कल्पना बड़े काम की होगी। उस कल्पना के बाद ही इस विधि को करना आसान होगा। क्योंकि जब रात सोते हुए, जागरण से नींद में प्रवेश हो रहा है, उस समय, उसी प्रकार की खाई से गुजरना होगा। बड़ा भय लगेगा। लगेगा किसी गढ्ढे में गिरे। तो सूफी संतो ने इस विधि का खूब प्रयोग कराया है, अपने शिष्यों को। और पहले उन्होंने कहा कि कल्पना करो। कल्पना में डर नहीं लगता, क्योंकि हमें पता है कि हम कल्पना कर रहे हैं, यह कोई यथार्थ नहीं है। सचमुच में किसी गढ्ढे में नहीं गिर रहे। कल्पना करते–करते मन राजी हो जाता है, इस गढ्ढे के प्रति। फिर जब सचमुच में रात सोते समय उस गढ्ढे से गुजरोगे तब अचानक गहन जागरण घटित होगा और आत्मा प्रकाशित हो जाएगी।

इस विधि को समझाते हुए ओशो कहते हैं, इस अभ्यास के द्वारा तुम इस विधि के लिए तैयार होते हो। और फिर जब तुम जागरण और अंतराल में नींद के कुएं में गिरते हो तो वह कल्पना नहीं है, वह सचमुच में यथार्थ है। और यह कुंआ अतल है, अनंत है। इसीलिए बुद्ध ने उसे शून्य कहा है। उसका कहीं कोई अंत नहीं। और एक बार तुम इसे जान गए तो तुम भी अनंत हो गए। तुम्हें जागृत अवस्था में इस शून्य की झलक नहीं मिल सकती है और नींद में इस झलक को पाना तो बिल्कुल ही असंभव है। इन दोनों अवस्थाओं में शरीर की अवस्था सक्रिय रहती है, और उससे अपने को पृथक करना कठिन है किन्तु रात में एक क्षण ऐसा आता है और वैसा ही क्षण सुबह भी आता है। चौबीस घंटे में ये दो संध्या के क्षण हैं, तब ध्यान में डूबना बड़ा आसान है, लेकिन इसके लिए तुम्हें प्रतीक्षा करनी होगी।

शिव कहते हैं, जब नींद नहीं आई और बाह्य जागरण विदा हो गया, उस मध्य बिंदु पर बोधपूर्ण रहने से आत्मा प्रकाशित होती है। तब तुम जानते हो कि वास्तव में तुम कौन हो। मेरा सच्चा स्वाभाव क्या है, मेरा प्रामाणिक अस्तित्व क्या है? जागते हुए तो तुम झूठे हो, तुम्हारे दो झूठे चेहरे हैं, एक चेहरा तुम्हारे जागरण में प्रकट होता है और दूसरा तुम्हारी नींद में। इन दो झूठे चेहरों के बीच एक छोटा सा द्वार है, एक छोटा सा अंतराल है, उस अंतराल में तुम्हें अपने मौलिक चेहरे की, ओरिजनल फेस की झलक मिल सकती है, तुम स्वयं को जान सकते हो। यह विधि बड़ी प्यारी है, इसे करने के लिए अलग से कोई समय भी नहीं चाहिए। रात को जब सोने जा ही रहे हो, बस होशपूर्ण होना शुरू करो। या इसका विपरीत भी कर सकते हो। सुबह जब नींद खुली, अभी पूरी तरह खुली भी नहीं, कुछ–कुछ नींद टूटने लगी, कुछ–कुछ जागरण का आभास होने लगा, उस समय पुनः सचेत हो जाओ, बोधपूर्ण हो जाओ। अभी नींद की पहाड़ी से, जागरण की पहाड़ी में छलांग भरोगे। ये बहुत छोटा सा, एटॉमिक मूमेंट है। चूकना बड़ा आसान है, इसीलिए तो हम चूकते जाते हैं।

कोई आदमी अस्सी साल जीता है तो कम से कम पच्चीस साल सोता है। आश्चर्य की बात, पच्चीस साल हम सोते हैं और नींद के बारे में, सपनों के बारे में हमें कुछ भी नहीं मालूम।

बिल्कुल अंजाने में, अचेतन रूप से घटित होते हैं। यदि हम सोने के पहले जाग जाएं अथवा जब नींद टूट रही है, सुबह के क्षण में, उस समय जाग जाएं तब हम न्यूट्रल गियर में जाग जाएंगे और उस न्यूट्रल गियर में हमारी स्वयं से मुलाकात होगी। तब न जागरण होगा, न नींद होगी, न सपने होंगे। तब क्या होगा? वहां से तुरीय अवस्था का ज्ञान हो सकता है। हमारा जागरण सभ्यता ने झूठा कर दिया, मजबूरी है, मनुष्य को सभ्य बनाने के लिए, सुसंस्कृत बनाने के लिए, उसे एक नकली चेहरा ओढ़ाना पड़ता है। इसलिए जागरण तो हमारा बिल्कुल ही झूठा है। कोई मेहमान आपके घर आया, आप नमस्कार करके अभिवादन करते हैं, कहते हैं आइए बैठिए, बिराजिए, बड़ी खुशी हुई आपसे मिलकर, तरस गए थे आपकी शक्ल देखने के लिए। जरा आंख बंद करके भीतर देखना, भीतर तुम्हारे क्या चल रहा है। भीतर चल रहा है कि दुष्ट कहां से टपक आया। सुबह सुबह इनकी शक्ल देख ली आज का दिन खराब हो गया। ऊपर आप कुछ और कह रहे हैं, भीतर कुछ और है, लेकिन मजबूरी है, ऊपर–ऊपर औपचारिकता निभानी होगी, सामाजिकता निभानी होगी। हमारा जागरण इसीलिए झूठा हो गया है।

बचपन से ही हर माँ अपने बच्चे को झूठा होना सिखा रही है, पिता झूठा होना सिखा रहा है। पूरा परिवार उसे नकली मुखौटा ओढ़ने के लिए कह रहा है। जब बच्चे को रोना आता है, हम कहते हैं कि मत रोओ, चुपचाप बैठो। जब उसे हंसी आ रही है हम कहते हैं हंसो मत, ये कोई हंसने का समय नहीं है। जब उसका खेलने का मन है हम खेलने न देंगे, जब उसे भूख नहीं लगी है हम कहते हैं खाना खाओ और जब उसे खाना है तो हम कहते हैं, अभी समय नहीं हुआ है खाने का। हम हर भांति से उसे झूठा कर देते हैं। स्वाभाविक है, परिवार वालों के प्रति हर व्यक्ति के मन में इतना आक्रोश होता है। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि आदमी का जागरण तो झूठा है ही, उससे ज्यादा सत्य तो उसके सपने हैं। और मजे की बात अब नई वैज्ञानिक शोध कहती हैं कि आदमी सपनों तक में झूठा है। सपने भी बहुत सत्य नहीं हैं, कोई आदमी हो सकता है, ब्रम्हचारी हो, साधु–महात्मा हो लेकिन उसके सपनों का अगर विश्लेषण किया जा सके तब पता चलेगा कि कामुक स्वप्न उसके भीतर चल रहे हैं। कोई आदमी ऊपर–ऊपर से अहिंसा की साधना करता है, उसके सपने में झांक कर देखो, हो सकता है वो बहुत हिंसक व्यवहार करता हो। एक आदमी ऊपर से दान कर रहा है, हो सकता सपने में चोरी करता हो। हमारे सपने अक्सर उल्टे हैं। जो हम दिन में कर रहे हैं सपने उससे ठीक विपरीत हैं।

मनोवैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि सपने भी हमारे सौ प्रतिशत सत्य नहीं हैं, वहां भी झूठ प्रवेश कर गया है। समझो एक व्यक्ति अपने माँ के ऊपर नाराज है, वो रात सपना देखता है, उसने अपनी चाची की गर्दन दबा दी। चाची कहां से आ गई बीच में। माँ से नाराज था, लेकिन हमने सपने में उसे सिखाया है कि माँ की हत्या करना जघन्य अपराध है। सारी दुनिया के हर देश में, हर सभ्यता में, हर काल में यह सिखाया गया। क्यों सिखाया गया? माता–पिता की हत्या करना जघन्य अपराध है। जरूर लोगों के मन में ये विचार उठता होगा तभी तो सिखाना पड़ा। ये व्यक्ति रात को सपना भी अगर देखेगा, ये नहीं देखेगा कि इसने

माँ की हत्या कर दी, सपने में भी झूठ आ गया, सभ्यता आ गई। माँ से मिलती-जुलती इसकी चाची है या इसकी मौसी है, वो मौसी की भी गर्दन दबा देगा। पिता की गर्दन नहीं दबाएगा, संभव है चाचा की गर्दन दबा दे। सपने भी हमारे झूठे हो गए हैं, जागरण तो झूठा है ही। और नींद का तो हमें पता ही नहीं कि नींद में होता क्या है, उसमें तो हम मूर्छित हो जाते हैं। स्वयं को हम कैसे जाने, कहां पर जाने?

आज की विधि शिव की बड़ी अद्भुत है। नींद और जागरण के मध्य के अंतराल में सजग हो जाना। और इसलिए हर साधक को सिखाना जरूरी है, सम्यक निद्रा के बारे में। गौतम बुद्ध का बड़ा जोर था, सम्यक निद्रा पर। ओशो का भी बड़ा जोर है, सम्यक निद्रा पर। ठीक-ठीक सोना, हमारा सोना भी अस्त-व्यस्त हो गया है, जागरण तो अस्त-व्यस्त हो ही गया है। एक लड़का मंदिर में प्रार्थना कर रहा था, हे प्रभु दिन में चैन नहीं, रात में नींद नहीं, जिया न लागे कहीं, हे प्रभु! क्या यही प्यार है। परमात्मा की आवाज मंदिर में गूंजी, नहीं बेटा, मंहगाई के जमाने में अधिकांश भारतवासियों का यही हाल है। फजलू तीन दिन स्कूल नहीं आया। टीचर ने पूछा कि तीन दिन से कहां गायब थे? फजलू ने कहा कि सर आपको पता नहीं मैं बहुत जोर से गिर गया था और मुझे काफी जोर से लग गई। टीचर ने कहा, सॉरी मुझे पता नहीं था। तुम कैसे गिर गए, कहां गिर गए, कहां लगी? फजलू ने कहा सर बहुत थका-मांदा था धड़ाम से बिस्तर में गिर गया और जोर की नींद लग गई।

एक कहानी मैंने सुनी है मुल्ला नसरुद्दीन के बारे में, उसने कहा अपनी पत्नी से कि कल रात नींद में तुम मुझे गालियां बक रही थीं, मुझे भला-बुरा कह रही थीं। उसकी पत्नी गुलजान बोली यह तुम्हारी गलतफहमी है, मैने नींद में गालियां नहीं दीं। मुल्ला ने कहा मैंने खुद अपने कानों से सुनी हैं, कोई गलतफहमी नहीं है। गुलजान ने कहा, तुम्हारी गलतफहमी यही है कि मैं नींद में थी। मैं तो भली-भांति जागी हुई गालियां दे रही थी। अगर हम दिन में गालियां नहीं दे पाएंगे तो हम रात को गालियां देंगे। सपने हमारी अधूरी वासनाओं को पूरा करेंगे। इसलिए हमारे सपने भी झूठे हो गए। फिर सत्य का एहसास कहां होगा। भगवान शिव बड़े ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण से कह रहे हैं, नींद और जागने के बीच का जो मध्य बिंदु है, न्यूट्रल गियर वहां पर जागो, बोधपूर्ण बनो और अपने आप को जानो। आओ आज इस ध्यान विधि को हम करते हैं।

सभी मित्रों से निवेदन है, आराम से लेट जाएं। शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ दें। मैं सुझाव दूंगा, आप मेरे सुझाव का पालन करें। भाव करें शरीर शिथिल हो रहा है, शरीर शिथिल हो रहा है, शरीर शिथिल हो रहा है, एक-एक अंग शिथिल होता जा रहा, शिथिल होता जा रहा। भाव करें गहरी अंधेरी रात है। चारों ओर से अंधकार घिरता जा रहा है, शरीर शिथिल हो रहा। अब दूसरा भाव करें, श्वांस धीमी हो रही है, श्वांस धीमी हो रही है, श्वांस धीमी हो रही। योगनिद्रा, हिप्नोटिक स्लीप आपको घेर रही है। एक अतल खाई, एक बड़ा गढ्ढा बीच में है, जागें, बोधपूर्ण बने। अभी पूरे सोए नहीं, जागरण जाने-जाने को है, नींद आने-आने को है। बीच के इस क्षण में बोधपूर्ण हो जाएं। न इस पार, न उस पार। भगवान

शिव कहते हैं, इस मध्य बिंदु पर बोधपूर्ण रहने से आत्मा प्रकाशित होती है। होश, होश। जागरण की दुनिया खो गई, नींद और सपनों की दुनिया अभी शुरू नहीं हुई। चेतना के इस न्यूट्रल गियर में, स्वयं को जानें। यह प्रयोग फिलहाल मैंने अभ्यास के लिए कराया है, वास्तव में यह प्रयोग सोने के पूर्व आपको करना है। धन्यवाद।

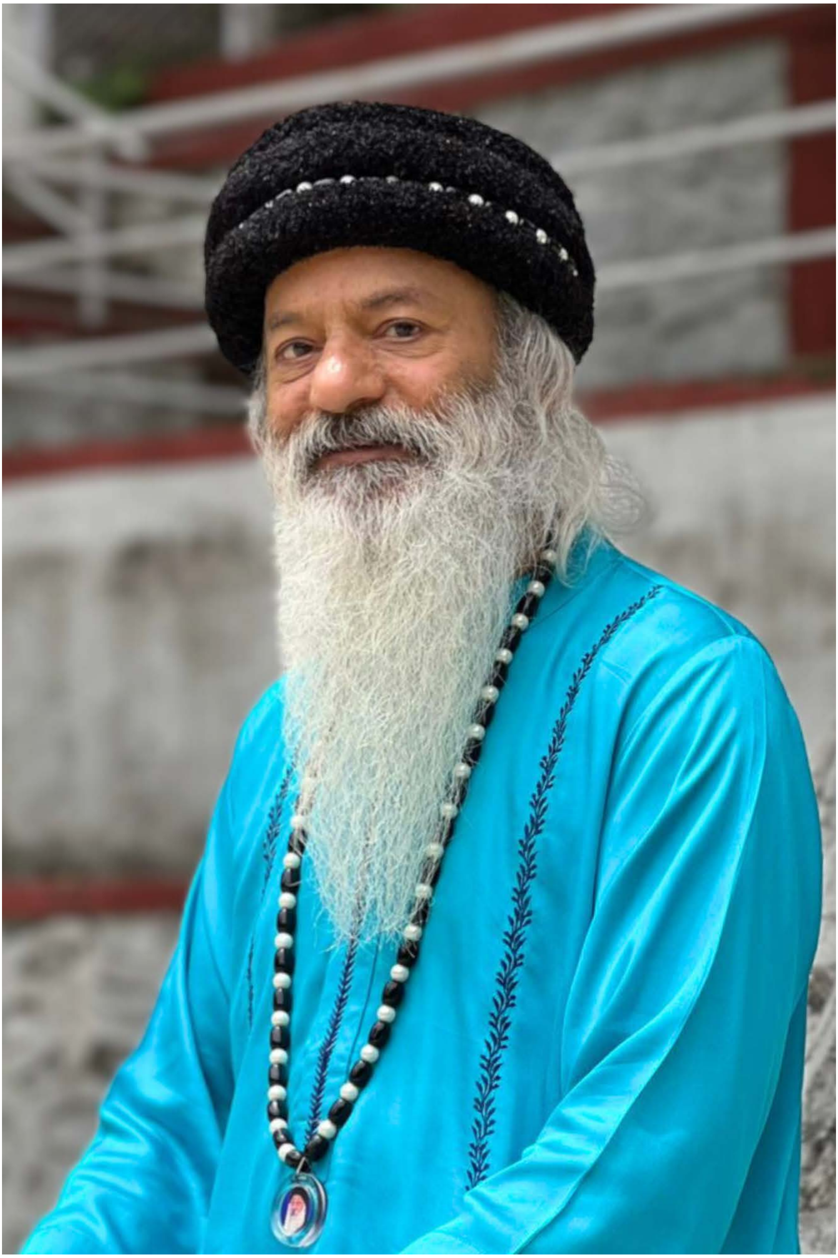

भ्रांतियां, सीमाएं, विभाजन

**भ्रांतियां छलती हैं, रंग सीमित करते हैं।
विभाज्य भी अविभाज्य है।**

किसी शायर ने लिखा है–

ठुकराओ या प्यार करो मैं नशे में हूं।
जो चाहो मेरे यार करो मैं नशे में हूं।
अब भी दिला रहा हूं यकीने वफा मगर,
चाहो तो एतबार करो मैं नशे में हूं।
गिरने दो तुम मुझे मेरा सागर संभाल लो,
इतना तो मेरे यार करो मैं नशे में हूं।
मुझको कदम कदम पे भटकने दो वाइज़ो,
तुम अपना कारोबार करो मैं नशे में हूं।

सारी दुनिया ही नशे में है। एक आध्यात्मिक मूर्छा हमें घेरे हुए है। निरंतर विचार, कल्पनाएं, स्मृतियां हमारी चेतना को ढंके हुए हैं। एक गहन मूर्छा, एक गहरा नशा हमारे भीतर छाया हुआ है। इस नशे को तोड़ना ही होगा। भगवान शिव उसी नशे को तोड़ने की बात कर रहे हैं। वे हमारे सच्चे दोस्त हैं। बुद्ध ने कहा कल्याणमित्र, सदगुरू कल्याणमित्र होता है। तुम कितना भी कहो कि मुझे कदम–कदम पर भटकने दो दोस्तो, तुम अपना कारोबार करो मैं नशे में हूं। सदगुरू अपना कारोबार ही कर रहे हैं, इस मूर्छा से जगाना उनका कार्य है। आज की विधि में भगवान शिव कहते हैं, भ्रांतियां छलती हैं, रंग सीमित करते हैं और विभाज्य भी अविभाज्य है। यह बहुत दुर्लभ विधि है, बहुत कम इसका प्रयोग हुआ है। आदि शंकराचार्य ने माया का दर्शन इसी विधि पर खड़ा किया। सब कुछ भ्रांतिपूर्ण है, जो हमें दिखाई पड़ रहा है, सुनाई पड़ रहा है, जो हमारे स्पर्श में आता, उसमें बड़ा छल हो रहा है। वास्तविकता से हम दूर रह जा रहे हैं। कुछ का कुछ देख रहे हैं, यही तो नशे का अर्थ होता है।

मैंने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन से एक सिक्खड़ पिअक्कड़ ने पूछा शराबघर में, कब तक शराब पीनी चाहिए? कब हम समझें कि घर जाने का समय आ गया? मुल्ला नसरुद्दीन पुराना, अनुभवी पिअक्कड़, उसने कहा बेटा ख्याल रखो जब एक आदमी के दो आदमी दिखाई देने लगे, जानना कि घर जाने का समय आ गया, बहुत तुमने पी ली। ठीक इसका उल्टा मैं आपसे कहूं, कब तक ध्यान करें, कब तक होश को साधें? शराब बेहोशी है, ध्यान होश है। होश तब तक साधना जब तक तुम्हें विभाजित चीजें अविभाज्य न दिखने लगे। जब तुम्हें दो के भीतर एक दिखने लगे, एक ओंकार सतनाम, अद्वैत फलित हो जाए तब जानना कि ध्यान पूरा हुआ। शिव कह रहे हैं विभाज्य भी अविभाज्य है। हम एक भ्रांतिपूर्ण जगत में जी रहे हैं। ये भ्रांति कैसे पैदा होती, कभी आपने इल्यूजन्स के चित्र देखे? स्थिर चित्र होता है लेकिन हिलता–डुलता नजर आता है, चलता–फिरता नजर आता है, उसमें कोई गति नहीं हो रही और गति नजर आती है। कभी इल्यूज़न्स के चित्र देखना। अभी कुछ चित्र मैं आपको दिखा रहा हूं। इनको देखते चलें और मेरी बात भी सुनते चलें। ठीक ऐसा ही जगत की माया में हम उलझे हुए हैं। माया का अर्थ है, चीजें अनिश्चित हैं। जैसी हम देख रहे, वैसी नहीं हैं। अब तो विज्ञान भी इस बात से राजी है। पहले विज्ञान बड़ी सर्टेनटी, निश्चितता से दावे किया करता था, अब विज्ञान के वो दावे छूट गए। अब विज्ञान भी प्रोबेबिलिटी, अन्सर्टेनटी, अनिश्चितता की बात करता है।

क्या आप जानते हैं जब सूर्योदय को उगते आप देखते हैं, उस समय सूरज नहीं उगता, सूरज तो उसके पहले करीब नौ मिनट पहले उग चुका होता है। सूरज से हम तक रोशनी की किरणों को आने में नौ मिनट लग जाते हैं। जब हम कहते हैं सूर्यास्त हो रहा, वास्तव में सूर्यास्त उसके नौ मिनट पहले हो चुका। और सूरज के बाद जो निकटतम तारा है वो हमसे चार प्रकाश वर्ष की दूरी पर है। चार साल में वहां से प्रकाश की किरणें हम तक पहुंचती हैं, इसका अर्थ हुआ, जहां वह हमें दिखाई देता है वहां वह चार साल पहले मौजूद था।

ये तो सबसे निकट का तारा है, उसके बाद दूर–दूर के तारे हैं, लाखों–करोड़ों प्रकाश वर्ष दूर। जब पृथ्वी बनी भी नहीं थी चार अरब वर्ष पहले, तब वहां से वे रोशनी की किरणें चली थीं, वे अब भी हम तक नहीं पहुंची हैं। रात जब आप देखते हैं चांद–तारे आकाश में, याद रखना, वैसा कुछ भी वहां नहीं है। कभी लाखों–करोड़ों वर्ष पहले वैसी स्थिति थी, अभी नहीं है। अभी क्या है उसे हम जान भी नहीं सकते, कोई उपाय नहीं जानने का।

वैज्ञानिकों ने बड़े उपकरण बनाए हैं, लेकिन वे हमारी ही इंद्रियों के एक्सटेंशन हैं, उन्हीं का विस्तार हैं। हमारी इंद्रियां ही हमें धोखा देती हैं। कभी आप एक प्रयोग करना, एक कांच के गिलास में आधा पानी भरना, एक चम्मच उसमें डुबा के रखना। आपको चम्मच तिरछी दिखाई पड़ने लगेगी, टूटी हुई लगेगी। यद्यपि आप भलीभांति जानते हैं चम्मच टूटी हुई नहीं है, चम्मच तिरछी नहीं है, निकाल के फिर एक बार तय कर लेना चम्मच सीधी है, लेकिन जैसे ही पानी में डालोगे वो तिरछी दिखने लगेगी। क्योंकि प्रकाश की किरणें पानी में से गुजरते हुए तिरछी हो जाती हैं। ठीक इसी प्रकार तारों से जो रोशनी हम तक आ रही है, बीच में जो दूसरे तारे पड़ रहे हैं, उनके गुरुत्वाकर्षण की वजह से तारों की किरणें भी तिरछी हो जाती हैं। जहां हमें दिखाई पड़ रहे, कभी भी वहां न थे। न आज वहां हैं, न कभी वहां होंगे। हम एक मायावी जगत में जी रहे हैं। जो अविभाज्य अस्तित्व है, हमें खण्डों में बंटा–बंटा दिखाई दे रहा है।

मैंने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन ने डॉ. से जाकर कहा कि डॉक्टर साहब, मेरी समस्या बड़ी विचित्र है, जब मैं किसी से बातचीत करता हूं तो कभी–कभी वो आदमी मुझे दिखाई नहीं देता। डॉक्टर भी हैरान हो गया, उसने कहा ऐसी बीमारी कभी सुनी नहीं। ऐसा कब होता है? नसरुद्दीन ने कहा प्रायः रोज ही होता है। डॉक्टर साहब ने कहा, थोड़ा विस्तार से कहो। नसरुद्दीन ने कहा अक्सर फोन करते वक्त ऐसा होता है कि आवाज तो सुनाई पड़ती है, आदमी दिखाई नहीं देता। नसरुद्दीन पर हम हंसेगे, लेकिन हमारी स्थिति इससे कोई भिन्न नहीं है। बरसात के दिनों में आपने कभी बादलों को गरजते हुए सुना, जब रोशनी दिखाई पड़ती है, बिजली चमकती है, उसके दस–पंद्रह सेंकण्ड बाद आवाज आती है। चीजें टूट गईं, विभाजित हो गईं, बिजली का चमकना और आवाज की गड़गड़ाहट एक साथ थी, युगपत, साइमलटेनस थी, लेकिन ध्वनि तरंगे चलती हैं बहुत धीरे, करीब तीन सौ, सवा तीन सौ मीटर प्रति सेकेंड और प्रकाशकिरणे चलती हैं बहुत तेज, तीन लाख किलोमीटर प्रति सेकेंड। तो बादल की चमक तो हमने लगभग तुरंत ही देख ली, लेकिन ध्वनि को आने में देर लगेगी। इस पर निर्भर करता है कि बादल कितने दूर हैं। आधा मिनट, एक मिनट बाद भी आवाज सुनाई पड़ सकती है अगर बादल बहुत दूर हों तो। चीजें टूट गई, सारी चीजें ऐसी ही टूट गई हैं और हम एक मायावी जगत में जी रहे हैं।

अपनी इंद्रियों से प्राप्त जानकारी को सत्य मत समझना। इंद्रियों की तो छोड़ो, गणित से प्राप्त निष्कर्ष भी सत्य नहीं होते। मैने सुना है, सरदार विचित्तर सिंह और उसकी पत्नी ने तीन बच्चे होने के बाद परिवार नियोजन आपरेशन करवाया। किसी ने पूछा कि क्यों, वे बोले

हमने आंकड़ों में पढ़ा है कि दुनिया में पैदा होने वाला हर चौथा बच्चा चायनीज होता है। तीन बच्चे हमारे हो चुके अब चौथा चींनी पैदा होगा, चींनी बच्चे से हमें कोई तकलीफ नहीं है, लेकिन तकलीफ इस बात की है कि जब वो बोलना शुरू करेगा, हम उसकी भाषा समझेंगे कैसे। और हमारे इस गांव में चींनी भाषा सिखाने वाला कोई स्कूल भी नहीं है। ऐसे ही हम भ्रमित हैं। मैंने सुना, एक डॉक्टर के पास सेठ चंदूलाल गए, अपनी बीमारी बताई, और पूछा कि मेरे ठीक होने की क्या संभावना है? डॉक्टर ने कहा आप निश्चित रूप से ठीक हो जाएंगे। चंदूलाल ने कहा क्या आप पक्का कह रहे हैं, डॉ. ने कहा निश्चित रूप से क्योंकि फिगर्स बताते हैं कि इस बीमारी में दस मरीजों में से नौ मर जाते हैं। तो मैं नौ मरीजों का इलाज कर चुका हूं, वे मर चुके हैं, आप दसवें हैं, सुनिश्चित रूप से बच जाएंगे। नहीं, गणित भी धोखा देता है। हर जगह भ्रांति उत्पन्न होती है। इस भ्रांति से जागना होगा। जगत को अगर तुम माया मान सको, भ्रांति जान सको, तब क्या होगा? तुम्हारी ऊर्जा स्वयं के ऊपर लौटनी शुरू होगी। सारा संसार स्वप्नवत है, केवल तुम सत्य हो। द्रष्टा सत्य है, दृश्य हमेशा ही संदेहास्पद है। ओशो इस विधि को समझाते हुए कहते हैं, यह सारा जगत माया है तुम उसके संबंध में निश्चित नहीं हो सकते, कुछ भी निर्णयपूर्वक नहीं कह सकते। यह जगत निरंतर बदल रहा है। कुछ से कुछ हो जाता है ये इंद्रजाल सा है, स्वप्नवत है और यह विधि इसी दृष्टि से संबंधित है।

शिव कहते हैं भ्रांतियां छलती हैं, रंग सीमित करते हैं। विभाज्य भी अविभाज्य है। इस माया के जगत में कुछ भी निश्चित नहीं, सब कुछ इंद्रधनुष के समान है। भासता है, पर वास्तव में है नहीं। अगर तुम्हारी ऐसी दृष्टि हो तो क्या होगा? अगर यह दृष्टि तुममें गहरी उतर जाए कि जिस चीज के संबंध में निश्चय न हो सके वह माया है तो तुम अपने आप, अपनी तरफ सहजता से मुड़ जाओगे। तब तुम्हें अपने केन्द्र, अपने भीतर खोजना होगा। वहीं एक मात्र सुनिश्चितता है। विज्ञान कभी परम तक नहीं पहुंच सकता, वह सदा सापेक्ष रहेगा। सिर्फ धर्म परम को उपलब्ध हो सकता है। क्योंकि धर्म स्वप्न को नहीं, स्वप्नदर्शी को खोजता है। धर्म दृश्य को नहीं, द्रष्टा को खोजता है। धर्म उसे खोजता है जो चिन्मय है। आओ इस विधि का प्रयोग करते हैं।

सब मित्र दूर–दूर फैल कर खड़े हो जाएं, अधखुली आंख रखें, अपने दाहिनी ओर घूमना शुरू करें। अधखुली आंखों से बाहर के दृश्य को देखें, दृश्य घूमता हुआ नजर आएगा। एक स्वप्नवत, मायावत प्रतीति होगी, घूमते जाएं, घूमते जाएं, सूफी फकीर जलालुद्दीन रूमी ने इस विधि का खूब प्रयोग किया। छोटे बच्चे अक्सर गोल–गोल घूमते हैं, वे गोल–गोल घूमने में बड़ा मजा लेते हैं। घूमते जाओ, घूमते जाओ, तेजी से और तेजी से, घूमने की गति बढ़ाएं, घूमती हुई यह दुनिया मायावी है। ठीक, अब आराम से बैठ जाएं, अधखुली आंखें रखते हुए, गर्दन को गोल–गोल घुमाएं। चक्राकार गर्दन को घुमाते जाएं और जो भी दिखाई पड़ रहा है, उसे ऐसे देखें, जैसे वह माया है, सपना है। अब गर्दन घुमाना बंद करें, बिल्कुल स्थिर बैठ जाएं। मान लें कि सारा जगत माया है, तब आपकी जीवन ऊर्जा स्वयं पर वापिस

लौटने लगेगी। दृश्य सत्य नहीं है, केवल द्रष्टा सत्य है। आत्मानुभव, स्वयं का होना महत्वपूर्ण हो गया, संसार स्वप्नवत हो गया।

जब आदि शंकराचार्य कहते हैं कि ब्रम्हसत्य और जगत माया, तो वो कोई दार्शनिक सिद्धांत नहीं, बल्कि भगवान शिव की यही विधि है। अंत में आराम से लेट जाएं, शिथिल हो जाएं, पूरे शरीर को ढीला छोड़ दें, श्वांस धीमी हो रही है, मन शांत हो रहा है, क्योंकि संसार में रस समाप्त हो गया। अपने में रमण करें, आपका होना सत्य है। यह जो ज्ञाता चेतना है, बस यही सत्य है। भ्रांतियां छलती हैं, रंग सीमित करते हैं, विभाज्य भी अविभाज्य है। सत्य अखण्ड है, मन के दर्पण से देखने पर खंडित जान पड़ता है, क्योंकि मन स्वयं खंडित है। टूटे हुए आइने के टुकड़ों में सब चीजें टूटी दिखाई पड़ती हैं। किसी झील में लहरें उठ रही हों, चांद झिलमिलाता मालूम पड़ता है। यह जगत झिलमिलाती झील है। चांद तुम्हारे भीतर है, वह तुम ही हो। आत्मरमण में डूबें, समाधि में प्रवेश करें। धन्यवाद।

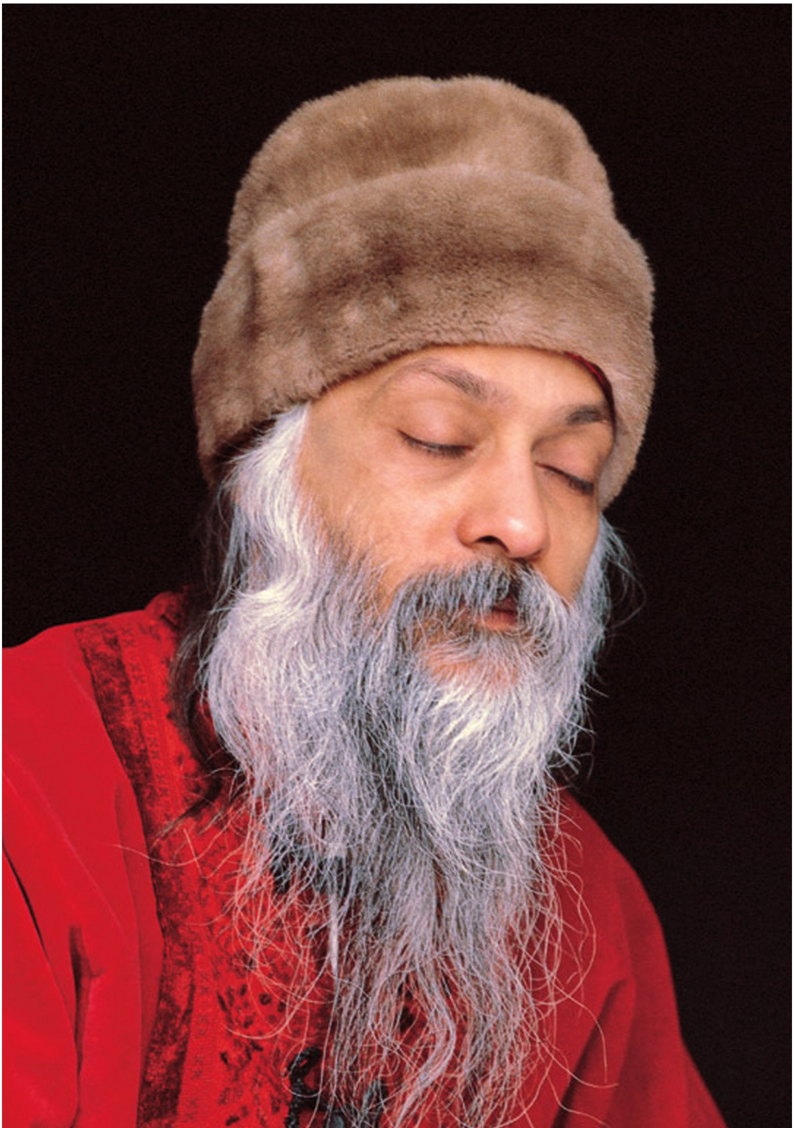

अनुद्विग्नता साधो

तीव्र कामना की दशा में अनुद्विग्न रहो।

मनुष्य का मन दर्पण के समान है और समय की धूल उस पर जमती जाती है। जिसे हम स्मृति कहते हैं, वह सिवाय समय और अनुभवों की धूल के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। किन्तु उस धूल के पीछे दर्पण अपनी शुद्धता में मौजूद है। दर्पण खो नहीं गया, दर्पण मिट नहीं गया, सिर्फ धूल को झाड़ने की बात है। ये तंत्रसूत्र की सारी विधियां उस धूल को झाड़ने के उपाय हैं ताकि भीतर का शुद्ध दर्पण, अपनी पूरी–पूरी शुद्धता में प्रकट हो सके। और मामला आसान है, धूल बस धूल ही तो है। जरा जोर से फूंक मारी तो उड़ जाएगी। इसलिए विधियों को समझ–समझ के करना, यांत्रिक तरीके से नहीं। कुछ लोग ध्यान की विधियों को भी मेकेनिकल ढंग से करने लगते हैं। तब वह विधि, उसका क्रियाकाण्ड, वह स्वयं ही धूल का हिस्सा हो जाता है। बड़ी जागरूकता और होश की जरूरत है। ईसाई मानते हैं कि मनुष्य की आत्मा पतित हो गई, अपनी स्थिति से गिर गई है। हिंदू मानते हैं आत्मा पतित नहीं हुई, केवल उस पर मैल चढ़ गया है। जैसे हम यात्रा करते हैं, शरीर पर धूल–धमास जम जाती है, स्नान कर लेते हैं बात खत्म हो गई। धूल जम जाने से हम पापी नहीं हो जाते, पतित नहीं हो जाते।

तो ईसाइयों की और हिंदुओं की धारणा बड़ी भिन्न है। आत्मा का वास्तव में कोई पतन नहीं हुआ है और इसलिए उत्थान करने के लिए कोई बड़ी मेहनत नहीं करनी होगी। कितनी ही धूल तुम पर जम गई हो, जरा सा स्नान किया, पानी में डुबकी मारी और फिर साफ–सुथरे हो गए। सालों–साल से धूल जमती रही हो, तो भी पांच मिनट का स्नान पर्याप्त है। ऐसा नहीं कि पुराने कर्म बंधनों को काटने के लिए अब उतना ही समय लगेगा, जन्मों–जन्मों से जो धूल जमी है अगर उसे धोने में फिर जनम–जनम लगे तो बड़ी मुश्किल है क्योंकि इतना समय और बीतेगा, समय की धूल फिर–फिर जम जाएगी। हिन्दुओं की मान्यता सही है, क्षण भर में क्रांति

हो सकती है। जरा सी समझ की बात है, बस। चैतन्य से, उस दर्पण से हमारा तादात्म्य टूट गया और धूल से हमारा तादात्म्य हो गया है। दर्पण भ्रम में पड़ गया है कि मैं धूल की परत हूं। एक भ्रांत धारणा बन गई है, इसको तोड़ना भर है। इसलिए तंत्रसूत्र की विधियां इतनी सरल लगती हैं।

आज विधि नंबर 57 में भगवान शिव कहते हैं पार्वती से, हे देवी! तीव्र कामना की दशा में अनुद्विग्न रहो। उत्तेजित मत होओ। सामान्यतः कोई भी कामना हमें पकड़ती है, चाहे क्रोध हो, कि कामवासना हो, कि लोभ या भय, हम उद्विग्न हो जाते हैं। अपने भीतर उस केन्द्र को खोजो जो अभी भी उत्तेजना के बाहर है। सब कुछ उद्विग्न नहीं हो गया, सिर्फ परिधि पर चारों ओर गति हो रही है, बीच में एक धुरी भी है जो बिल्कुल स्थिर है। अगर वो धुरी न होती तो ये पहिया घूम भी न पाता। बैलगाड़ी के चाक को देखा, धुरी के ऊपर घूम रहा है और धुरी स्वयं स्थिर है। कभी तुमने पानी में बाढ़ आई नदी में, भवरों को देखा, भंवरे बड़ी तेजी से घूमती परिधि पर, किन्तु बीच में एक केन्द्र बिंदु होता है जो बिल्कुल स्थिर होता है। कभी तुमने सेंटर आफ द साइक्लोन देखा, अक्सर गर्मी के दिनों में आंधी चलते, चक्रवात बन जाते, गोल–गोल हवा घूमती, लेकिन भीतर एक केन्द्र होता है, जहां बिल्कुल स्थिरता होती है। उसी के आधार पर परिधि घूम पाती है।

जब हमारी चेतना उत्तेजित होती है, किसी भी कामना में, वासना में, भय में, लोभ में, क्रोध में, हम विषय उन्मुख हो जाते हैं। जिसने हमें क्रोध दिलाया, जिसने हमारे भीतर वासना जागृत की, जिसने हमारे भीतर लोभ उत्पन्न किया, हम उस पर केन्द्रित हो जाते हैं, वहां हमारा तादात्म्य हो जाता है। काश, उस समय हम जरा सा पलटें, और भीतर अपनी तरफ देखें, तब हम पाएंगे जिसे क्रोध आया है, जिसे काम ने पकड़ा है, लोभ ने पकड़ा है, वह अपने केन्द्र में पूरी तरह अनुद्विग्न है। और कंट्रास्ट में चीजों को जानना बड़ा आसान है। जब तुम्हारा शरीर क्रोध से भर गया, तुम्हारी आंखें लाल हो गई, मुट्ठियां भिंच गई हैं, खून की रफ्तार तेज हो गई, हृदय की धड़कन तेज हो गई, उस कंट्रास्ट में, उस बैकग्राउण्ड में भीतर के शांत हिस्से को जानना बड़ा ही आसान है। किसी शायर ने लिखा है,

दिल में एक लहर सी उठी है अभी, कोई ताजा हवा चली है अभी।
शोर बरपा है खाना ऐ दिल में, कोई दीवार सी गिरी है अभी।
भरी दुनिया में जी नहीं लगता जाने किस चीज की कमी है अभी।
कुछ तो नाजुक मिजाज हैं हम भी और ये चोट भी नई है अभी।
शहर की बे–चराग गलियों में जिंदगी तुझको ढूंढ़ती है अभी।
वक्त अच्छा भी आएगा नासिर गम न कर जिंदगी पड़ी है अभी।

दीवारें गिरती रहती, ढहती रहती, शोर होता रहता। शोर बरपा है खाना ऐ दिल में, कोई दीवार सी गिरी है अभी। लेकिन याद रखना कितनी ही आवाज हो, शून्यता भी है। दीवारें कितनी ही गिरें, भीतर का जो स्पेस है, कक्ष के भीतर का जो आकाश है, उसे कुछ भी नहीं होता। केवल दीवार के गिरने पर ध्यान न देना, भीतर कुछ कुंवारा, अछूता, अस्पर्शित अकार है, उस पर ध्यान देना। साधक को केवल अपना दृष्टिकोण बदलना होता है, केवल देखने का ढंग और देखने का विषय बदलना होता है। आब्जेक्ट से सब्जेक्ट में आना होता है। इतना सा परिवर्तन और जीवन में क्रांति हो जाती है। सामान्यतः हम किसी सागर तट पर जाते हैं और कहते हैं कि हम सागर को देख आए। सचमुच में हमने सागर को नहीं देखा, केवल लहरों को देखा है। ऊपर–ऊपर उठता–गिरता पानी, सागर तो बड़ा गहरा है। प्रशांत महासागर पांच मील गहरा है। हमने तो ऊपर मुश्किल से पांच फुट उठती–गिरने वाली लहर देखी। केवल सुपरफिशियल हिस्सा ही सागर नहीं है, ऐसी भ्रांति में हम स्वयं के बारे में पड़ गए हैं। हमारी परिधि पर, हमारी सतह पर जो घटनाएं घटती हैं, लहरे आती–जाती हैं उसी को हमने स्वयं का होना समझ लिया। हमारा होना तो बड़ा अथाह है। प्रशांत महासागर की ही तरह हमारे भीतर भी एक प्रशांत बिंदु है तो केवल बाहर की उत्तेजनाओं और उद्विग्नताओं को स्वयं का होना न समझना, अपने भीतर के उस शांत बिंदु को खोजना।

इस विधि पर प्रवचन देते हुए परम गुरू ओशो ने समझाया– मूलभूत मन अशांत नहीं हो सकता, वह कभी बेचैन नहीं होता, लेकिन तुमने कभी उसे देखा ही नहीं है। जब क्रोध होता है तो तुम्हारा तादात्म्य उससे हो जाता है, तुम भूल जाते हो कि क्रोध तुमसे भिन्न और पृथक है। तुम उससे एकात्म हो जाते हो और तुम उसके द्वारा सक्रिय हो जाते हो, कुछ करने लगते हो, तब दो चीजें संभव हैं– तुम क्रोध में किसी के प्रति, क्रोध के विषय के प्रति हिंसात्मक हो सकते हो, लेकिन तब तुम दूसरे की ओर गति कर गए। क्रोध ने तुम्हारे और दूसरे के बीच की जगह ले ली। यहां 'मैं हूं' जिसे क्रोध हुआ है, फिर बीच में क्रोध है और वहां तुम हो मेरे क्रोध का विषय। क्रोध से मैं दो आयामों में यात्रा कर सकता हूं या तो मैं तुम्हारी तरफ जाऊं, अपने क्रोध के विषय की ओर, तब तुम जिसने मेरा अपमान किया, मेरा चेतना की केंद्र बन गए, तब मेरा मन तुम पर केंद्रित हो गया। यह एक ढंग है क्रोध से यात्रा करने का। दूसरा ढंग है, तुम अपनी ओर, स्वयं की ओर यात्रा करो। तुम उस व्यक्ति की ओर गति नहीं करो, जिसने क्रोध करवाया बल्कि उस व्यक्ति की तरफ गति करो जो क्रोध अनुभव कर रहा है। तुम विषय की ओर न जाकर विषयी की ओर गति करो। आब्जेक्ट की तरफ नहीं, सब्जेक्ट की तरफ।

यह स्मरण रहे कोई भी चीज अपने विपरीत तथ्य के बिना नहीं होती। विपरीत जरूरी है उसके बिना किसी भी चीज के होने की संभावना नहीं। यदि तुम्हारे भीतर वो स्थिर केंद्र न हो तो गति भी असंभव है। यदि तुम्हारे भीतर शांत केंद्र न हो तो अशांति भी असंभव है। कोई केन्द्र अगर न होता तो तुम कैसे जानते कि तुम अशांत हो। जानने के लिए तुलना चाहिए, तुलना के लिए दो कंट्रास्ट बिंदु चाहिए। अगर तुम भयभीत होते हो तो जरूर तुम्हारे भीतर

साहस का कोई केंद्र है। अगर बीमारी का अनुभव होता है तो जरूर भीतर कहीं स्वास्थ्य है, स्वास्थ्य के कंट्रास्ट में ही बीमारी का पता चलता है। रात के कंट्रास्ट में अंधेरे में तारे चमकते हैं, बिना कंट्रास्ट के कोई भी ज्ञान घटित नहीं होता। तो यह पर्याप्त प्रमाण है कि मैं क्रोधित हुआ हूं, मैं उत्तेजित हुआ हूं, जरूर मेरे भीतर कोई अनुत्तेजित केंद्र भी होगा। अपने उस अनुत्तेजित केंद्र को खोजो। मैंने सुना है, संसद के बाहर एक चपरासी बैठा हुआ था। बड़े गुस्से में आगबबूला। दूसरे चपरासी ने उससे पूछा, यार इतने गुस्से में क्यों बैठा है? उसने कहा कि ये नया–नया मंत्री जो बना है, मुझे डांट के चला गया। बड़ा क्रोध मुझे आ रहा है। उस चपरासी ने कहा, छोड़ो भी मंत्रियों का काम ही है डांटना–डपटना, हम चपरासियों का काम है सहना। इसमें तुम्हें गुस्सा होने की क्या बात है। उस चपरासी ने कहा, क्यों नहीं होऊं मैं गुस्सा, अरे एक टैंप्रेरी आदमी एक परमानेंट आदमी को डांट गया। मंत्री आते–जाते रहते हैं चार दिन के मेहमान हैं। हमको यहां सदा–सदा रहना है।

वही मैं आपसे कहना चाहता हूं, क्रोध आया है, कि वासना आई कि लोभ आया यह टैंप्रेरी है, यह आया है और चला जाएगा। तुम्हारे भीतर जो चैतन्य है, वह शाश्वत है, वह परमानेंट है। टैंप्रेरी पर ध्यान न दो, परमानेंट पर ध्यान दो। सनातन पर ध्यान दो, शाश्वत पर ध्यान दो। मैंने सुना है एक सनातन धर्मी पंडित जी एक होटल में खाना खाने गए। वहां प्रसिद्ध था कि ताजा सब्जियों का सूप सर्व किया जाता है। उन्होंने सूप का आर्डर दिया, जब वो सूप पी रहे थे चम्मच में एक बड़ी सी बटन आ गई। उन्होंने वेटर को बुलाकर कहा कि यह क्या है, उसने कहा कि अरे! पंडित जी ये तो मेरे कोट की बटन है। पिछले हफ्ते कहीं टूट के गिर गई थी मुझे पता ही नहीं चला, अच्छा हुआ ये मिल गई, आपका बहुत–बहुत धन्यवाद। पंडित जी बोले, इसका मतलब यह है कि तुम्हारा सूप एक हफ्ते पुराना है। ये बटन एक हफ्ते से सूप में पड़ी है। पंडित जी बहुत नाराज हुए कि ताजा सूप क्यों नहीं दिया। वेटर ने कहा कि पंडित जी सूप की तो छोड़िए ये तो जिस दिन बना था उस दिन ताजा ही था। ऐसे ही आप जिस सनातन धर्म को मानते हैं वो कितना प्राचीन है? एक हफ्ते पुराने सूप से नाराज हो गए। सनातन धर्म होगा हजारों साल पुराना, लेकिन वह भी तो सचमुच में तो सनातन नहीं।

तुम्हारे भीतर एक और सनातन तत्व है, उस तत्व को खोजो, वह तुम स्वयं हो। अपने आप को खोजो, आत्मरमण करो, बाहर परिधि पर कुछ भी होता रहे उसको होने दो। तुम तो अपने भीतर डूबो। धीरे–धीरे उद्विग्नता से अनुद्विग्नता की तरफ, उत्तेजना से अनुत्तेजित चेतना की तरफ, परिधि से केन्द्र की तरफ चलो। बाहर से भीतर की तरफ चलो। योग की, तंत्र की अन्य आध्यात्मिक साधनाओं की सारी विधियों का सार बस इतना ही है, अंतर्यात्रा। बाहर की उपेक्षा, भीतर पर ध्यान। आओ माँ प्रिया के संग इस विधि को आज करते हैं। धन्यवाद।

माँ ओशो प्रिया–

आज के ध्यान में आपका बहुत–बहुत स्वागत है। साइकोड्रामा करना है। अपने काल्पनिक शत्रु पर क्रोध का रेचन करें। स्टॉप। अपने केन्द्र में प्रतिष्ठित हो जाएं। इस अधूरे क्रोध के भाव, घाव, विसर्जित हों। भीतर के शांत केन्द्र को देखें। आंखें बंद करें। मूर्तिवत खड़े रहें। भीतर सबकुछ शांत है। केन्द्र में कोई लहरें नहीं। धीरे से बैठ जाएं। अकारण हंसें, अट्टाहास करें। छोटे बच्चों की तरह लोट–पोट हो जाएं हंसी में। स्टॉप। लेट जाएं, हंसी की उत्तेजना भी जाने दें। पूर्णतः अनुद्विग्न हो जाएं। क्रोध की नकारात्मक भावना भी चली गई और हंसी की सकारात्मक भावना भी चली गई। अब दोनों के पार, द्वंदातीत चैतन्य में रमण करें। उत्तेजना रहित चेतना में डूबें। उत्तेजना रहित चेतना में डूबना ही ध्यान है। आत्मरमण का दूसरा नाम ध्यान है। आज का ध्यान पूर्ण हुआ। हरि ओम् तत्सत्।

जादू जैसा जगत

यह तथाकथित जगत जादूगरी जैसा या चित्रा–कृति जैसा भासता है। सुखी होने के लिए उसे वैसा ही देखो।

किसी शायर ने लिखा है, प्रेम के क्षणों में,

तेरे लबों के मुकाबिल गुलाब क्या होगा?
तू लाजवाब है तेरा जवाब क्या होगा?
तू मुस्कुराए तो जाती बहार आ जाए,
दिले बीमार को फिर से करार आ जाए
तेरे शबाब से बढ़कर शबाब क्या होगा?
तू लाजवाब है तेरा जवाब क्या होगा?

तेरी अदा पे फिदा हम तो क्या जमाना है,
निसार तुझपे मेरे दिल का हर खजाना है,
तेरे करम का किसी से हिसाब क्या होगा?
तू लाजवाब है तेरा जवाब क्या होगा?

प्रेम के क्षणों में लोग कल्पना की बड़ी ऊचाइयां भरते हैं, बड़े ऊंचे आकाश में उड़ते हैं। फिर यही कवि, यही शायर कुछ दिनों बाद दूसरे प्रकार की कविता लिखते हैं। सुनो उसका उदाहरण।

दोस्त मिलते है यहां दिल को दुखाने के लिए,
उंगलियां रखते हैं वो हम पे उठाने के लिए।
क्या कुसूर उनका ये तो रस्म चली आई है,
तोहमतें होतीं हैं दुनिया में लगाने के लिए।
नाखुदा मान के बैठे थे जिनकी कश्ती में,
वो हमें मौजों मे लाए थे डुबाने के लिए।
वो हवाओं की तरह रुख को बदल लेते हैं,
हम नसीबों से लड़े थे जिन्हें पाने के लिए।

समस्त प्रेम... बस कहानियां बन कर रह जाता है। कैसे–कैसे सपने देखे थे, सब धूल–धूसरित हो जाते हैं। जरा अपने जिंदगी के अतीत को टटोलो, क्या–क्या नहीं हुआ, कहां खो गया वह सब? जिस सुनहरे बचपन के गीत लोग गाते हैं, कहां है अब वह सुनहरा बचपन, वह युवावस्था, वह जवानी का जोश। धीरे–धीरे बुढ़ापा आ गया, ये बुढ़ापा भी चला जाएगा, यहां कुछ भी नहीं टिकता। क्या जिंदगी एक नाटक जैसी नहीं लगती? नित–नूतन कहानी बदल रही है। आज भगवान शिव जीवन की इस नाटकीयता को, इस गैर गंभीर लीला को भी ध्यान की विधि बनाने की सलाह दे रहे हैं। विज्ञान भैरव तंत्र की विधि नंबर 58 में वे कहते हैं पार्वती से, यह तथाकथित जगत जादूगरी जैसा या चित्राकृति जैसा भासता है, सुखी होने के लिए उसे वैसा ही देखो।

पीछे हमने कुछ इल्यूज़न्स के चित्र देखे थे, आज भी इल्यूज़न्स के चित्र देखते जाना और मेरी बात सुनते भी चले जाना। सबकुछ बड़ा इल्यूज़री है, भ्रमात्मक है। कभी आप जादू

का खेल देखने गए? हमारे एक मित्र हैं, स्वामी आनंद परमहंस। वे ओशो के सन्यासी हैं। आम दुनिया में उन्हें जादूगर आनंद के नाम से जाना जाता है। बड़े–बड़े खेल दिखाते हैं, मंच पर हाथी को खड़ा करके चुटकी बजा के हाथी को गायब कर देते, फिर हाथी प्रगट हो जाता। क्या तुम्हें वास्तविक जीवन में भी कुछ ऐसा ही नहीं लगता। एक तुम्हारा गहन दोस्त था, बड़ा घनिष्ठ मित्र, अचानक गायब हो गया, एक दुश्मन उसकी जगह प्रगट हो गया। तुम दुखी होते हो अगर तुम उसको जादूगरी की तरह उसे देखो कि परमात्मा की लीला तो तुम प्रसन्न होके ताली बजाओगे। हाथी गायब हो गया, फिर हाथी प्रकट हो गया, दुश्मन फिर दोस्त बन गया। गरीब आदमी अमीर हो गया, अमीर आदमी गरीब हो गया। बड़े–बड़े बुद्धिमान बिल्कुल बुद्धूपन का काम कर बैठते हैं और कभी–कभी मूर्ख, बड़ी समझदारी का काम कर जाते हैं। बड़ा जादूगरी का खेल चल रहा है, बड़ा इल्यूज़न। हम जिसे समझ रहे थे समझदार, वो नासमझ निकला। हम जिसे समझ रहे थे वफादार, वो बेवफाई कर बैठा। जिंदगी के इस खेल को खेल की भांति देखो। हम बड़े गंभीर हो जाते हैं।

कुछ दिनों पहले एक महिला आई, बड़ी उदास, चिंतित, परेशान, अपने पति की शिकायत करने लगी। उनके पतिदेव भी उनके साथ बैठे हुए थे। कहने लगी इनके जैसे झूठ और फरेबी इंसान नहीं देखा। ये बीस साल से किसी लड़की से प्रेम कर रहे हैं, हफ्ते भर पहले ही उसका भेद खुला, ये ऐसा नाटक रच रहे थे, पता ही नहीं चलता था। बीस साल से उसका संबंध चल रहा था। मैंने उससे पूछा कि आप फिल्म देखती हैं, वो कहने लगी, हां, देखती हूं। मैंने कहा, उसमें कौन से हीरो–हीरोइन पसंद आते हैं, उन्होंने दो–तीन नाम लिए। मैंने कहा आप जानती हैं वे लोग तीन घंटे कलाकारी दिखाने के लिए कितने पैसे लेते हैं? उन्होंने बताया करोड़, डेढ़ करोड़ रुपए वे लेते हैं। मैंने कहा आपको पता है वो लोग झूठा अभिनय करते हैं, जब वे क्रोध कर रहे उन्हें क्रोध नहीं होता, जब प्रेम कर रहे प्रेम नहीं होता, कहने लगी हां ये तो मालूम है। मैंने कहा और ये बेचारा तुम्हारा पति मुफ्त में बीस साल से तुम्हारा मनोरंजन कर रहा है, बड़े–बड़े अभिनेताओं को उसने पछाड़ दिया, पानी पिला दिया। उनकी भी पोल खुल जाती है, इनकी पोल न खुली बीस साल तक। काश, ये कहीं फिल्म में होते, महान कलाकार बन गए होते, आप इनकी फिल्म देखकर तालियां बजा रही होतीं। वो महिला मुस्कुराने लगी। आई थीं बड़े गुस्से में, तनावग्रस्त थीं, पर अब उसका चेहरा रिलैक्स हुआ। मैंने कहा धन्यवाद दो इस आदमी को, बीस साल से कितना सुंदर नाटक कर रहा है और न केवल अभिनेता है, खुद कहानीकार भी है, कहानी यही लिखता है, कोई डायरेक्टर भी नहीं है इसका, खुद ही अपना निर्देशन कर रहा है, खुद ही इसने हीरोइन खोज ली, कितनी कुशलतापूर्वक ये निभा रहा है।

भगवान शिव कह रहे हैं इस जगत को जादूगरी के खेल जैसा देखो। अद्भुत लीला चल रही है। ईसाई परमात्मा को कहते हैं परमपिता, बड़ा गंभीर मामला है, पिता। भारत के ऋषि कहते हैं परमात्मा को नटराज, नर्तक। ये बड़ी गैर गंभीर लीला है। राम के जीवन को हम

कहते हैं, रामलीला। कृष्ण के जीवन को हम कहते हैं, रासलीला। लीला का मतलब गैरगंभीर, नानसीरियस प्ले। ओशो अपने एक प्रवचन में कहते हैं, गंभीरता एक धार्मिक रोग है। सबसे गंभीर रोग है और मजे की बात है, दुनिया में जितने धार्मिक लोग गंभीर मिलते हैं उतने गंभीर तो साधारण संसारी भी नहीं होते। मैंने तो सुना है गधा शब्द जो बना है, दरअसल वह एक शार्ट फार्म है। 'ग' गंभीर के लिए, 'धा' धार्मिक के लिए। गंभीर धार्मिक, गधा का ये ही अर्थ है। देखना गधा की शकल बिल्कुल साधु महात्माओं के जैसी लगती है। एकदम गंभीर, परेशान, चिंता में डूबा हुआ वो सोच रहा होगा इस जगत का क्या होगा, आवागमन से मुक्ति कैसे हो, सृष्टि की रचना किसने की। लगता है कोई महान दार्शनिक। नहीं, गंभीरता छोड़ो हमारे ऋषियों ने इस सृष्टि को परमात्मा की लीला कहा है । ये एक खेल है, ये एक नृत्य है, इसको ऐसा ही देखो।

शिव कह रहे हैं, सुखी होने के लिए जगत को जादूगरी जैसा देखो। किसी गंभीरता से न लो। लेकिन हम तो विचित्र लोग हैं, हम तो नाटक तक में गंभीर हो जाते हैं। फिल्म टाकीज में बैठे हुए कभी लोगों को देखना, फिल्म की तरफ मत देखना पर्दे पर, आसपास के लोगों पर नजर करना, कोई हंस रहा है, उत्तेजित हो रहा है, कोई रो रहा है, चुपचाप अपने जेब से रूमाल निकालकर अपने आंसू पोछ रहा है, कोई कामोत्तेजित हो रहा है, और पर्दे पर कुछ है ही नहीं, धूप–छाया का खेल, प्रोजेक्टर से लाइट आ रही है रंग–बिरंगी। ना वहां कोई हीरो है, न कोई हीरोइन है, न कोई विलेन है और लोग भावावेश से भर रहे हैं। वहां मारपीट हो रही है पर्दे पर, यहां लोगों की रीढ़ सीधी हो गई, तन के बैठ गए जैसे इनकी भी ठुकाई होने वाली है। कोई भयानक दृश्य आया, डर गए।

मैंने एक बार एक बच्चे को देखा था, सात साल का बच्चा था, टी.वी पर हॉरर शो देख रहा था। हाथ को इस प्रकार से रखे हुए आंखों के सामने वो दो उंगलियों के बीच में छोटी सी दरार करके उसमें से देख रहा था। जब ज्यादा डर लगने लगे तो दरार को बंद करले, न देखे। फिर थोड़ी देर में फिर खोल के देखे, उत्सुकता भी है देखने की और डर भी रहा है। डर भी मनोरंजन का हिस्सा बन गया। हम नाटक में भी गंभीर हो जाते हैं, फिल्म में भी, सीरियल में भी। हम किसी पात्र से अपने आप को आइडेंटीफाईड कर लेते हैं। उसके साथ हमारी सिंपैथी और सहानुभुति हो जाती है। किसी पर हम नाराज और क्रोधित हो जाते हैं। भलीभांति जानते हुए कि यह सब नाटक है। तो अच्छा होगा भगवान शिव की इस विधि को करने के लिए टीवी और टाकीज का उपयोग करो। सबसे पहले वहां गैरगंभीरता साधो। बीच–बीच में जरा भस्त्रिका प्राणायाम करके एक मिनट याद दिलाना अपने आप को कि पर्दा है, कहानी है। वास्तव में कुछ नहीं हो रहा है, खेल तमाशा है। सीरियल देखते–देखते अलार्म घड़ी लगाकर रखो, पांच–पांच मिनट बाद एक अलार्म लग जाए। चौंक जाना, जाग जाना, ये सिर्फ कहानी है, सचमुच में ऐसा कुछ नहीं हो रहा है। धीरे–धीरे जगत के प्रति भी इस भाव को अपनाना। तब तुम्हें बड़ा मजा आएगा। जिंदगी के इस नाटक को, नाटक की तरह लो और परम आनंदित हो जाओ। हमारे दुख का कारण हमारी गंभीरता है। भगवान शिव अद्भुत विधि दे रहे हैं, कह

रहे हैं गंभीर होने की जरा भी जरूरत नहीं।

एक बार मुल्ला नसरुद्दीन रेलवे अधिकारी की नौकरी के लिए इंटरव्यू देने गया। अधिकारी ने पूछा कि मानलो तुम सुबह–सुबह रेलवे लाइन के पास टहल रहे हो, सामने से एक ट्रेन आ रही है और तुम देखते हो कि ट्रेन की पटरियां उखड़ी हुई हैं, बोलो क्या करोगे इस इमेरजेंसी सिचुएशन में? नसरुद्दीन ने कहा हुजूर लाल झंडी दिखाउंगा, ट्रेन को रोक दूंगा। इंटरव्यू लेने वाला अधिकारी ने कहा कि मान लो उस समय तुम्हारे पास कोई लाल झंडी नहीं है तब, नसरुद्दीन ने कहा लाल शर्ट, या लाल रंग की शॉल या लाल रूमाल दिखाकर गाड़ी को रोक दूंगा। अधिकारी ने कहा मानलो संयोग से तुम्हारे पास लाल रंग का कोई कपड़ा है ही नहीं, तब क्या करोगे? मुल्ला ने कहा तब मैं भाग के अपने घर जाऊंगा और अपने बीबी बच्चों को बुला लाऊंगा। अधिकारी ने कहा, ट्रेन का एक्सीडेंट होने से बीबी बच्चों को बुलाने का क्या संबंध है? नसरुद्दीन ने कहा हुजूर जब अनएवाइडेबल एक्सीडेंट होने ही वाला है तब मैं बच्चों को बुला कर कहूंगा, देखो बच्चो, आज मैं कैसी मुसीबत में फंसा हूं, आज मेरी नौकरी जाने वाली है। इसलिए तुम लोग कभी भूल कर भी रेलवे की नौकरी मत करना और अपनी पत्नी से कहूंगा कि प्यारी देख ले, देख ले मुफ्त मनोरंजन, ये तमाशा भी देख ले, ऐसी कोई घटना कभी जिंदगी में देखने न मिलेगी। तो ऐसे ही जिंदगी को तमाशे की तरह देखना।

समझ जाएं, यहां सब तमाशा है, सब धूप–छांव का खेल है। क्या तुमने दोस्त को दुश्मन में बदलते, दुश्मन को दोस्त में बदलते नहीं देखा? क्या तुमने अपनों को परायों में, परायों को अपने में बदलते नहीं देखा। बस जिंदगी को वैसा ही देखो तमाशे की भांति उसका मजा लो। तो आओ आज हम इस विधि का प्रयोग करते हैं।

सभी मित्र खड़े होकर, आंख बंद करके कल्पना करें कि यह पूरी धरती जैसे एक बड़ी टाकीज है, एक नाट्यगृह है। आंख बंद करके कल्पना करें कि इस धरती पर जो खेल चल रहा है, वो नाटक है। अपनी ही जिंदगी के अतीत को, अपने बचपन को, अपनी जवानी को, कोई विशेष घटनाओं को जिन्होंने आपको बहुत उद्वेलित किया था, उन्हें जरा दोहराएं। मन के पर्दे पर उस कहानी को चलने दें। जिन घटनाओं से आप उदास, परेशान और चिंताग्रस्त हो गए थे, अब तो वे अतीत का हिस्सा बन गईं, अब तो गैरगंभीर होकर उन्हें देख सकते हैं। उस समय गंभीर मामला था, आज साक्षी होकर देखें। अपनी उस दिन की उदासी और गंभीरता पर अब जी भरके हंस लें। सब स्वप्नवत है, हास्यास्पद है। हंसें, दिल खोलकर हंसे, परमात्मा की इस लीला को, इस जादू को, मजे के साथ, गैर गंभीर तरीके से लें। हंसने के साथ आपकी निर्जरा हो रही है। जाने कहां गए वो दिन... सब बीत गया कहानी हो गया। अब आराम से बैठ जाएं, अब भविष्य की कल्पना करें। आगे आने वाली कहानी जगत के पर्दे पर, उसके सुंदर दृश्यों को देखें। आप जैसा चाहते हैं कि हो, वैसा ही देखें। चेहरे पर मुस्कान लाएं, अपने किए पर मुस्कुराएं। दूसरों पर तो हम बहुत हंसते हैं, अपनी नासमझी पर भी कभी हंसे। ये भविष्य का सपना जो देख रहे हैं, हो सकता है पूरा हो जाए, हो सकता है न हो। गैर गंभीर रहना, हर स्थिति का मजा लेना।

आखिरी चरण, लेट जाएं विश्रामपूर्वक, अतीत और भविष्य दोंनो से मुक्त होकर, वर्तमान के क्षण में आ जाएं। यह जगत जादूगरी जैसा भासता है, सुखी होने के लिए उसे वैसा ही जानें। भगवान शिव का यह अद्भुत वचन अपने हृदय में गहरा उतरने दो। सृष्टि से लेकर प्रलय तक, यह सब परमात्मा की लीला है। जन्म से लेकर मृत्यु तक, एक नाटक है। गंभीरता त्यागें, क्षण-क्षण का आनंद लें, आनंद ही आनंद, आनंद ही आनंद, सारा जीवन आनंद से ओतप्रोत है, सच्चिदानंद स्वरूप है। केवल हमारे देखने का दृष्टिकोण बदल जाए और रूपान्तरण घटित हो जाता है। इस आनंद भाव में डूबे रहें, धन्यवाद।

सुख-दुख के मध्य में

प्रिये, न सुख में और न दुख में, बल्कि दोनों के मध्य में अवधान को स्थिर करो।

किसी शायर ने लिखा है–

ए मेरे दिल चल, कहीं और चल;
जिंदगी और भी होगी कहीं।
बुतखाने से बाहर भी; बंदगी होगी कहीं।
यह तो मुमकिन ही नहीं, प्यार में गम न मिले,
खुशी की बस्ती हो कहीं, आंख कोई नम न मिले,
एक मंजिल ही नहीं, सिर्फ एक राह नहीं;
ए मेरे दिल चल, कहीं और चल; जिंदगी और भी होगी कहीं।
किए जा यूं ही सफर, संगिनी मिलेगी कहीं।

यह तो संभव ही नहीं, प्यास को दर न मिले,
रूप को छांह कहीं, उम्र को घर न मिले,
एक संगदिल ही नहीं, सिर्फ एक आह नहीं;
भुला रंजो–गम के पल, हंसी आएगी कहीं।
ए मेरे दिल चल, कहीं और चल। जिंदगी और भी होगी कहीं।

आज के सूत्र में भगवान शिव वही रास्ता दिखा रहे हैं, जहां हमें जाना चाहिए। वह रास्ता यहां नहीं है, यहां तो रंज और खुशी इकट्ठे हैं, यहां तो हंसी और मुस्कान के साथ आंसू जुड़े ही हुए हैं। यहां तो आह और वाह आपस में मिश्रित हैं। जहां तुम वाह–वाह कर रहे हो, जल्दी ही आह–आह करोगे। मैंने तो सुना है विवाह शब्द आह और वाह से ही मिलकर बना है। जिंदगी मिश्रण है, यहां तुम प्यार ढूंढ़ोगे साथ में घृणा भी मिलेगी। सिक्के के दो पहलू इकट्ठे आएंगे। हां, ये बात अलग है कि हमें एकबार में सिक्के का एक पहलू दिखाई देता है। हम उससे आकर्षित होकर उसे उठाते हैं, उसके साथ ही दूसरा पहलू भी हाथ में आ जाता है, उससे बचा नहीं जा सकता। मन कल्पना करता है कि जिंदगी और भी होगी कहीं, निश्चित रूप से है, लेकिन इस द्वंद के पार है वह असली जिंदगी, जिसे हम महाजीवन कहें, परम जीवन कहें, हमारे साधारण जीवन में सुख–दुख का खेल चलता ही रहेगा।

विज्ञान भैरव तंत्र की विधि नंबर 59 में भगवान शिव पार्वती से कहते हैं, प्रिये! न सुख में न दुख में बल्कि दोनो के मध्य में अपने ध्यान को स्थिर करो। पुराने जमाने की घड़ियां आपने देखी होगी पेण्डुलम वाली, पेंडुलम दाएं से बाएं, बाएं से दाएं होता रहता था। ठीक ऐसे ही हमारा चित्त है, सुख और दुख के बीच में डोलता रहता और घड़ी चलती जाती। अगर तुम इस घड़ी को रोकना चाहते हो, पेण्डुलम को बीच में स्थिर कर दो। सुख और दुख के ठीक मध्य में और अद्भुत घटना घटती है, समयहीनता के महाजीवन में प्रवेश हो जाता है, ये समय की घड़ी रुक जाती है। वरना चित्त बस इसी प्रकार के द्वंद में डोलता रहता। सूर्योदय होगा, सूर्यास्त होगा, द्वंद चलता रहेगा, दोस्ती बनेगी, दुश्मनी भी पैदा होगी। जहां मोहब्बत होगी, वहीं फिर नफरत भी होगी। जो लोग तुम्हारा सम्मान करेंगे, एक दिन वही लोग अपमान करेंगे, फिर रोना मत। भारत के गांवों में माताएं अक्सर यही कहती हैं, बच्चा अगर हंस रहा हो बहुत, तो उसे रोकती हैं, हंसो मत। क्योंकि बच्चा अगर ज्यादा हंसेगा तो उतना ही रोएगा। अगर रोने से बचाना है तो हंसने को रोकना होगा। जब हंसने से बचाना है तो रोने को रोकना होगा।

याद रखना, सुख भी एक उत्तेजना है और दुख भी एक उत्तेजना है। ये दोंनो ही चित्त की अशांत अवस्थाएं हैं और एक दूसरे में परिवर्तनशील, जो चीज आज सुख दे रही है, वही चीज एक दिन दुख देगी। सुख और दुख में केवल मात्रा का भेद है। तुमने एक रसगुल्ला

खाया, बहुत अच्छा लगा, स्वादिष्ट लगा, दूसरा खालो उतना स्वादिष्ट नहीं लगेगा। तीसरा–चौथा खाते–खाते रसगुल्ले में सारा रस समाप्त हो जाएगा। अगर ज्यादा रसगुल्ले खा गए तो जल्दी कहीं अस्पताल में भर्ती होगे, डायबिटीज़ हो जाएगी, सुख ही दुख बन जाएगा। कोई मित्र तुम्हारे घर आ गया बीस साल पुराना, बचपन का दोस्त, एक दम उछल पड़े खुशी के मारे, पुरानी बातें करने लगे, बचपन के आनंद की बाते होने लगी, खेल–कूद की बातें होने लगीं। वो मित्र एक दिन, दो दिन बड़ा अच्छा लगा, तीसरे दिन बोझ लगने लगा, चौथे दिन आपकी पत्नी पूछने लगी कि ये सज्जन कब जाएंगे। अगर वो जाएं ही न, पांच–सात दिन बीत जाएं, आप पूछेंगे आपकी रिटर्न टिकट कब की है? वो कहेंगे हम नहीं जाएंगे, जब आपको इतनी खुशी हुई है तो हम यहीं रहेंगे। तो सुख दुख में बदल जाएगा, सुख और दुख में कोई भेद नहीं है, जिसे हम सुख कहते है, वह भी एक उत्तेजना है।

कितने लोगों की लाटरी लग जाती है और उसकी खबर सुन के उनको हार्ट अटैक हो जाता है और वे मर जाते हैं। सुख को भी हम नहीं झेल पाते। हम कहते जरूर हैं असहनीय दुख हो रहा है, आज तक मैंने किसी को देखा नहीं असहनीय दुख में। जब तुम कह रहे हो कि असहनीय है तब भी सहन तो कर ही रहे हो, तो असहनीय कहां हुआ। लेकिन असहनीय सुख जरूर होता है, सहन नहीं कर पाते, हृदयाघात हो जाता है। सुख और दुख दोनों ही चित्त की अशांत अवस्थाएं हैं, दोनो उत्तेजनाएं हैं। एक प्रीतिकर उत्तेजना है, जिसे हम चाहते हैं और एक अप्रीतिकर उत्तेजना है, जिसका होना हम नहीं चाहते हैं। और ये दोनों एक–दूसरे में परिवर्तनशील हैं, बदलती रहती हैं। पेण्डुलम बाएं गया तो फिर दाएं जाएगा, दाएं गया पेण्डुलम फिर बाएं आएगा। इस द्वंद में ही सारा जीवन बीत जाता है।

ऐ मेरे दिल चल कहीं और चल, जिंदगी और भी होगी कहीं। निश्चित जिंदगी है, लेकिन इस द्वंद के पार। त्रिकोण का तीसरा कोण है वह। इसलिए भारत के धर्मों ने एक अदभुत धारणा दी, स्वर्ग और नर्क के अलावा एक तीसरे बिंदु, मोक्ष की चर्चा की। भारत के बाहर जो धर्म हुए उनमें मोक्ष की बात नहीं है, केवल स्वर्ग और नर्क की बात है। स्वर्ग यानि सुख, नर्क यानि दुख, मोक्ष यानि शांति, उत्तेजनारहित शांति। असली मंजिल वही है, वहां हमें जाना है। तंत्र सूत्र की ये सारी विधियां उसी तरफ इशारा हैं।

ओशो ने इस विधि को समझाते हुए कहा, जब दुख आता है तो तुम उससे बचना चाहते हो, भागना चाहते हो, तुम दुख नहीं चाहते, उससे बचना चाहते हो, तुम्हारी चेष्टा है कि तुम उसके विपरीत को पा लो, सुख को पा लो और जब सुख आता है तब तुम क्या करते हो? तुम चेष्टा करते हो कि सुख बना रहे, ताकि कहीं दुख न आ जाए। तुम सुख से चिपके रहना चाहते हो, तुम सुख को पकड़ कर रखना चाहते हो और दुख से भागना चाहते हो। यही स्वाभाविक दृष्टिकोण है, यही हमारा प्राकृतिक ढंग है। अगर तुम इस प्राकृतिक नियम को बदलना चाहते हो, इससे पार जाना चाहते हो तो जब दुख आए तो उससे भागने की चेष्टा मत करना, उसके साथ रहो, उसको भोगो, ऐसा करके तुम उसकी पूरी प्राकृतिक व्यवस्था को अस्त–व्यस्त कर दोगे। मान लो तुम्हें सिर दर्द है, उसके साथ रहो, आंखे बंद करलो उस सिर

दर्द का पूरा ध्यान दो, उसके प्रति संवेदनशील बनो, कुछ भी न करो, बस साक्षी रहो। उससे भागने की चेष्टा न करो, उसे भगाने, हटाने की कोशिश न करो। और ठीक इसी प्रकार जब सुख आए तो इसी क्षण विशेष रूप से आनंदित अनुभव करो, उसे पकड़ कर चिपको मत। आंखे बंद कर लो और उसके भी साक्षी हो जाओ।

सुख को पकड़ना और दुख से भागना, प्राकृतिक चित्त के लक्षण हैं और अगर तुम प्रकृति के पार उठना चाहते हो तो साक्षी में रमो। देर–अबेर तुम मध्य को उपलब्ध हो जाओगे। प्रकृति का नियम तो यही है कि एक अति से दूसरी अति पर डोलो, किंतु अगर तुम साक्षी हो गए तो मध्य में टिक जाओगे। बुद्ध ने इसी कारण अपने पूरे दर्शन को मज्झम निकाय कहा, मध्य मार्ग, द गोल्डन मीन। अगर तुम आकर्षण और विकर्षण के बिना, लगाव और दुराव के बिना, प्रेम और घृणा के बिना देखते रहो तो तुम मध्य में आ जाओगे और जब पेण्डुलम बीच में ठहर जाएगा तो तुम पहली दफा देख पाओगे कि यह संसार क्या है। जब तक तुम दौड़ रहे हो, तुम नहीं जान सकते कि जगत क्या है। तुम्हारी दौड़ सब कुछ भ्रांत कर देती है, धूमिल और धुंआ–धुंआ कर देती है। जब तुम्हारी दौड़ बंद होगी तो तुम संसार की वास्तविकता से परिचित होओगे। तब तुम पहली बार परम सत्य के दर्शन कर पाओगे। केवल अकंप मन ही जान सकता है कि सत्य क्या है, कंपित मन कभी सत्य को नहीं जान सकता।

तुम्हारा मन कैमरे की भांति है, अगर तुम चलते हुए, भागते हुए कैमरे से फोटो खींच रहे हो तो जो भी चित्र बनेगा वो धुंधला–धुधला, अस्पष्ट और विकृत होगा। कैमरे का हिलना बंद होना चाहिए, तभी कैमरा वास्तविक सत्य को अपने भीतर पकड़ पाएगा। भगवान कृष्ण इसी को कहते हैं स्थित–प्रज्ञ होना। ऐसे थिर हो जाओ जैसे किसी कमरे में दीपक की लौ जल रही हो, बिना कांपे। द्वंद में डोलना बंद करो, मन की इस आदत से सावधान, एक अति से दूसरी अति पर मत जाना। मैंने सुना है सरदार विचित्तर सिंह के बारे में, हमेशा शिकायत करते थे कि रात सो नहीं पाते। घर में बहुत मच्छर हैं, बहुत परेशान करते हैं। कई लोगों ने उनसे कहा कि मच्छर मारने की दवाई छिड़क दें। उन्होंने कहा नहीं, मैं हिंसा नहीं करूंगा, मच्छरों को मारूंगा नहीं। रातभर नींद न आती, धीरे–धीरे उनका दिमाग खराब होने लगा, नींद न आने की वजह से। फिर एक दिन उन्होंने तय किया कि मच्छरों को खत्म करूंगा ही। वे केमिस्ट की दुकान पर गए और जहर की एक पूरी बोतल ही खरीद ली। घर आके रात उन्होंने पूरी बोतल पी और कहा कि मच्छरों आओ, अब काटो मुझे, मेरे जहरीले खून को पीकर तुम सब मर जाओगे। एक अति यह थी कि मच्छरों से कटवाते रहे, अब दूसरी अति यह कि जहर पीकर खुद मर जाएंगे। दोनो अतियों से सावधान।

दुनिया में दो प्रकार के साधक हुए हैं, एक महावीर जैसे साधक, जिन्होंने दुखों को आमंत्रित किया, तपस्या की और दुख के साक्षी बने, दुख से बचने की कोशिश न की। दूसरे राजा जनक जैसे साधक, जिन्होंने सुखद परिस्थिति में रह कर, महल में रह कर, भोगविलास में रह कर, साक्षी भाव की साधना की, सुख के प्रति जागे। एक तीसरे प्रकार का साधक

और हो सकता है, हम ओशो के शिष्यों को, वह तीसरे प्रकार का साधक बनना है। न तो दुख से बचो, न सुख को पकड़ो। जीवन में सुख–दुख अपने आप ही आ जा रहे हैं। जनक की स्थिति और महावीर की स्थिति बारी–बारी से रोज घट ही रही है। न बचने की कोशिश करो, न पकड़ने की कोशिश करो और तब तुम्हारा चित्त मध्य में ठहरने लगेगा, तब चित्त परम चैतन्य हो जाएगा, साक्षी में रम जाएगा, सुख–दुख के पार समता की स्थिति, समत्व की स्थिति निर्मित होगी, वही सारी आध्यात्मिक साधना का लक्ष्य है। तब तुम मित्र को, शत्रु को समभाव से देख पाओगे, तब तुम आकर्षण और विकर्षण के पार जा सकोगे। तब तुम जीवन के सारे द्वंदों का अतिक्रमण कर स्वयं में स्थित हो सकोगे। सुख भी बाहर है, दुख भी बाहर है, शान्ति तुम्हारे भीतर है। उस शांति की तरफ चलो। माँ प्रिया के साथ आज का प्रयोग करते हैं। धन्यवाद।

आज की ध्यान विधि में आपका बहुत–बहुत स्वागत है। आपस में दो–दो लोग जोड़ी से खड़े हो जाएं, आंखें खुली रखें, दिल खोलकर हंसें, खूब हंसें और सहयोग दें एक–दूसरे को हंसने मे। स्टॉप। आंख बंद करके बैठ जाएं, अकेले हो जाएं, जीवन की किसी दुखद घटना को याद करें और फूट–फूटकर रोएं, जी भर कर रोएं, उस घटना की गहराई में जाएं, शांत हो जाएं, शांत हो जाएं, आराम से लेट जाएं। सुख आया और चला गया, दुख आया और वह भी गया, दोनों का द्रष्टा रह गया। दुख के काले बादल विदा हुए, सुख के सफेद बादल भी विदा हुए, रह गया निर्मल, शुद्ध आकाश। यह साक्षी, चैतन्य, आकाशस्वरूप आप हैं। दो–चार गहरी सांसों के साथ धीरे–धीरे ध्यान से वापस लौटें। दोनो हाथ जोड़ते हुए अहोभाव से भर जाएं। आज का ध्यान पूरा हुआ। हरि ओम् तत्सत्।

स्व और पर का स्वीकार

विषय और वासना जैसे दूसरों में है, वैसे ही मुझमें है। इस भांति स्वीकार करके उन्हें रूपांतरित होने दो।

है लबरेज़ आहों से ठंडी हवाएं।
उदासी में डूबी हुई हैं घटाएं।
मोहब्बत की दुनिया पे शाम आ चुकी है
सियाह-पोश हैं जिंदगी की फजाएं।
मचलती हैं सीने में लाख आरज़ूएं।
तड़फती हैं आंखों में लाख तमन्नाएं।
तगाफुल के आगोश में सो रहे हैं
तुम्हारे सितम और मेरी वफाएं।
मगर फिर भी ऐ मेरे मासूम कातिल
तुम्हें प्यार करती हैं मेरी दुआएं।

कवियों की कविताएं पढ़ो, शायरों की गजलें देखो, शिकायत भाव से भरी। तगाफुल के आगोश में सो रहे हैं तुम्हारे सितम और मेरी वफाएं। दूसरे को हमेशा सितमगर बता रहे हैं और खुद बड़े वफादार हैं। कोई एक शायर की बात नहीं, सभी की यही बात है। एक और गजल मैं पढ़ रहा थ वो सज्जन लिखते हैं–

कभी मुझको साथ लेकर, कभी मेरे साथ चल के
वो बदल गए अचानक मेरी जिंदगी बदल के
हुए जिस पे मेहरबान तुम कोई खुशनसीब होगा
मेरी हसरतें तो निकलीं मेरे आंसुओं में ढल के
तेरी जुल्फो–रुख के कुर्बां दिलेजार ढूंढ़ता हूं
वही चंपई उजाले वही सुरमई धुंधलके
कोई सूर्य बन गया है कोई चांद कोई तारा
जो चिराग बुझ गए हैं तेरी अंजुमन में जल के
मेरे दोस्तो! खुदारा मेरे साथ तुम भी ढूंढो
वो यहीं कहीं छुपे हैं मेरे गम का रुख बदल के
भोली हंसी की साजिश में कोई न फंसे अब
मैं तो मर गया हूं तेरी मुस्कान में उलझ के।

दूसरे की हंसी में साजिश दिखाई देती है, षड़यंत्र नजर आता है। सब वेवफा हैं सब बेईमान हैं, बस एक तुम्हीं निर्दोष हो, मासूम हो, वफादार हो। हर आदमी करीब–करीब इसी भावदशा में जीता है कि मैं तो बिल्कुल श्रेष्ठ हूं, भलाचंगा, जैसा होना चाहिए एक सज्जन पुरुष को, वैसा ही हूं। दूसरे लोग सब बेईमान हैं, धोखेबाज हैं, चालाक हैं, अपराधी हैं, केवल मैं एक महात्मा हूं। जब तक इस बुनियादी भूल को तुम न पहचानोगे, आत्मरूपांतरण घटित नहीं होगा। अगर तुम्हें दूसरों में भूलें दिखाई देती हैं तो तुम राजनीतिज्ञ हो जाओगे, तुम दूसरों को बदलने की कोशिश शुरू कर दोगे। खुद को कौन बदल पाएगा? केवल वही जिसको स्वयं में दोष दिखाई देने लगे। लेकिन हम तो आदी हैं बस दूसरों में दोष खोजने के, खुद में तो हमें कभी कोई गलती नजर आती ही नहीं। हमारे दोहरे मापदण्ड हैं। अपने लिए दूसरा तर्क, दूसरे के लिए दूसरा तर्क।

समझो कमरे में एक गिलास पानी रखा हुआ था फर्श पर, आप वहां से गुजरे, आपका पैर लगा पानी बिखर गया जमीन पर, अब आप नाराज होंगे पत्नी पर, घर के दूसरे लोगों पर, ये क्या है? हर कहीं पानी रख देते हो। तमीज नहीं है, अकल नहीं है, ये कोई पानी रखने

की जगह है, यहां गिलास किसने रखा था? सारी गलती दूसरे की है। अगर किसी और का पैर टकराता है और पानी गिरता है तब आपका तर्क बिल्कुल भिन्न होता। तब आप कहते कि अंधे हो गए हो, देख के नहीं चलते, इतना बड़ा गिलास रखा है दिखाई नहीं देता, चश्मा लगवाओ। तर्क बिल्कुल बदल गया।

कभी आप ट्रेन में देखना, बड़ी मजेदार कहानी होती है, प्लेटफार्म पर। ट्रेन ठसाठस भरी हुई है, लोग कुछ बाहर लटके हुए हैं, प्लेटफार्म पर गाड़ी रुकी, एक आदमी चढ़ना चाह रहा है और दूसरे सब लोग उससे कह रहे हैं, यहां पैर रखने की जगह नहीं है दूसरे किसी डिब्बे में देखो। वो आदमी कह रहा है, मुझे अर्जेंट जाना है, दूसरे सब डब्बे भरे हुए हैं, लेकिन ये लोग कहेंगे कि नहीं, तुम दूसरी ट्रेन पकड़ लेना, बस पांच मिनट बाद दूसरी ट्रेन आ रही होगी। वो कह रहा है मुझे बहुत जरूरी काम है, अर्जेंट जाना है, बस एक पैर रख लेने दो, खंभा पकड़ कर लटक जाऊंगा, लेकिन उसे नहीं लटकने देंगे। अगर उसे चढ़ जाने दिया होता तो ठीक यही बात वह कहेगा दूसरे यात्री से। अरे भाई यहां सांस लेने की जगह नहीं है, दूसरे डब्बे में जाओ। तर्क एकदम बदल गया। दूसरे में हमें भूलचूक नजर आती है, अपने में हमें कोई भूलचूक नजर नहीं आती।

मैंने सुना है, एक महात्माजी एक डॉ. के पास गए और कहा कि डॉक्टर साहब मेरा सिर दर्द बहुत होता है। हमेशा सिर दुखता ही रहता है, इसका जरा कारण खोजें। डॉक्टर ने पूछा, क्या आप सिगरेट पीते हो? उन्होंने कहा नहीं, शराब पीते हैं? नहीं। परस्त्रीगमन करते हैं? कहा बिल्कुल नहीं, आंख बंद कर लेता हूं स्त्री को देखकर, क्या पराई, क्या अपनी देखता ही नहीं हूं। डाक्टर और पूछता गया कि आप मिठाइयां खाते हैं? ज्यादा चटपटी चीजें खाते हैं? उन्होंने कहा नहीं बिल्कुल सात्विक आहार लेता हूं। अंत में डॉक्टर ने कहा अब मैं आपकी ठीक–ठीक डायग्नोसिस कर लिया हूं, आपको जो पुण्यात्मा होने का भ्रम है, इसी से आपका सिर फिर गया है। हमारा अच्छा होना भी एक बीमारी सी हो जाती है। दूसरे की बुराई खोजते हैं। कबीर साहब कहते हैं,

बुरा जो देखन मैं चला बुरा न मिलयो कोय,
जो भीतर खोजा आपने मुझसा बुरा न कोय।

ये है एक धार्मिक आदमी का लक्षण। वो कहता है कि दुनिया में जहां भी मैं बुराई को देखता हूं, मैं पाता हूं कि अरे! मेरे भीतर भी मौजूद है, बीज रूप से मौजूद है। ऐसा कौन आदमी है जिसने सपनों में कम से कम किसी के साथ बलात्कार न किया हो। काश, हम इस बात के प्रति जागरूक हों, तब हम उस व्यक्ति के प्रति कठोर नहीं होंगे, जिसने बलात्कार कर लिया। ऐसा कौन व्यक्ति है जिसने कभी चोरी का ख्याल न किया हो। चोरी की या नहीं की ये एक अलग बात है। क्या चोरी का ख्याल नहीं आया, अगर हम अपनी बुराई को देखेंगे, तब हम दूसरे के प्रति बहुत सॉफ्ट और नर्म हो जाएंगे कि बेचारा मजबूरी में था, इसलिए कोई चोरी

की होगी। कोई जरूरत आन पड़ी होगी, क्या करता गरीब आदमी है, चोरी करनी पड़ी, तब हम कठोर नहीं हो पाएंगे। अभी हमारी हालत बिल्कुल उल्टी है। कोई जरा सी चोरी कर ले, हम बिल्कुल टूट पड़ते हैं उस पर कि पापी, अपराधी इसको कड़ी से कड़ी सजा मिलनी चाहिए। अपने दृष्टिकोण को बदलो। दो दृष्टिकोण हैं, एक राजनीतिज्ञ का और एक धार्मिक का। राजनेता हमेशा परिस्थितियों में गलती खोजता है, दूसरों में बुराइयां ढूंढ़ता है और दूसरों को बदलने की कोशिश करता है। अधिकांश धर्मगुरुओं को इसलिए मैं धर्मगुरू कहता ही नहीं। वे पक्के राजनेता हैं, दूसरों में दोष खोज रहे हैं, इसी जनम के नहीं, पिछले जनम तक के निकाल देते हैं, वो कहते हैं कि तुमने पिछले जनम में कोई पाप कर्म किए होंगे। गजब, दूसरा बेचारा अपराधी है, दोषी है और खुद, खुद के ऊपर तो हमारी नजर ही नहीं।

थोड़ा कबीर की तरह बनो, अपने भीतर बुराई खोजना शुरू करो और तब एक आश्चर्य की घटना घटेगी। जब तुम अपने भीतर कोई दोष देखोगे, वो दोष टिक न सकेगा। दोष तब ही तक टिक सकता है जब तक तुम उसे देखो ही न। तुम्हारे पैर में अगर कांटा चुभा है और तुम्हें पता चल गया कांटा चुभा है, ये कांटा कब तक चुभा रहेगा, तुम तुरंत ही निकालकर उसे फेंकोगे। तुम्हें टीबी की बीमारी हो गई, जैसे ही डायग्नोसिस होगी कि तुम्हें टीबी की बीमारी है, तुम तुरंत उसका इलाज करोगे, एक क्षण न रुकोगे। लेकिन हम अपनी बीमारी को देखते ही नहीं, दूसरों की बीमारियों को देखते रहते हैं, उससे कोई लाभ नहीं होता। मैंने सुना है नसरुद्दीन सदा की भांति आफिस लेट पहुंचा, उसका बास गुस्से में तमतमा गया। उसने कहा कि हद हो गई, तुम सदा लेट आते हो और इस दूसरे आदमी को देखो, महमूद को, यहां से दस किलोमीटर दूर रहता है और तुम्हारा घर सड़क के केवल उस पार है। इस तरफ आफिस है उस तरफ तुम्हारा घर है, तुम हमेशा लेट आते हो और ये दस किलोमीटर दूर से बिल्कुल सही समय पर आता है। नसरुद्दीन ने कहा हुजूर मैं क्या कर सकता हूं, ये तो मजबूरी है। वो दस किलोमीटर दूर साइकिल से आता है, अगर घर से लेट चला तो सायकल थोड़ी तेज चला के कव्हरअप कर सकता है, ही केन मेकअप। मुझे तो समय ही नहीं मेकअप करने का। इस तरफ घर है, उस तरफ आफिस है घर के। अगर तीन मिनट लेट निकला तो तीन मिनट लेट ही पहुंचूगा, इसमें मेरा क्या दोष।

हम कैसे-कैसे तर्क खोजते हैं। एक दिन और बॉस बहुत नाराज हुआ, उसने कहा, आज नसरुद्दीन फिर तुम लेट। नसरुद्दीन ने कहा, सर डांटिए मत, कल रात ही मेरी पत्नी ने मेरे खानदान को एक नवजात शिशु कुलदीपक की तरह गिफ्ट दिया है। मालिक ने कहा, बेहतर होता कि तुम्हारी पत्नी कुलदीपक की बजाय तुम्हें अलार्म घड़ी गिफ्ट देती। एक बार एक पी डब्ल्यू डी के चीफ इंजीनियर ने अपने जूनियर इंजीनियर से कहा कि वर्मा जी, हमने पंद्रह दिन पहले नदी पर जो पुल बनाया था, उसकी हालत बिल्कुल खराब हो गई है, किसी भी क्षण वह गिर सकता है। जूनियर इंजीनियर बहुत नाराज हुआ, उसने कहा, सिक्योरिटी डिपार्टमेंट वालों ने वहां कोई चेतावनी का बोर्ड तक नहीं लगाया, देखिए। अच्छा हुआ आपने बता दिया,

कल से मैं दूसरे रास्ते से आफिस आया करूंगा। अपनी भूल दिखाई नहीं दे रहीं कि पंद्रह दिन पहले बनाया पुल, वो गिरने वाला है। अपनी भूल देखना शुरू करो अगर धार्मिक होना है।

भगवान शिव तंत्र सूत्र की विधि नंबर साठ में कहते हैं, विषय और वासना जैसे दूसरों में हैं, ठीक उसी प्रकार मुझमें हैं। इस भांति स्वीकार कर उन्हें रूपांतरित होने दो। इस विधि पर प्रवचन देते हुए ओशो ने समझाया, धार्मिक व्यक्ति जो कुछ भी देखता है दूसरों में, उसे अपने भीतर भी देखता है। अगर हिंसा है कहीं तो वह सोचने लगता है कि अरे! हिंसा तो मुझमें भी है। अगर वह लोभ देखता है दूसरों में, तो उसे ख्याल आता है कि लोभ तो मेरे भीतर भी छिपा है। उसका पहला ख्याल यही होता है कि मोह और ईर्ष्या मुझमें भी है। वह जितना भी खोजता है वह पाता है कि सभी बुराइयों का स्रोत मैं भी हूं। तब फिर प्रश्न यह नहीं है कि संसार को कैसे बदला जाए? तब सवाल उठता है कि अपने को कैसे बदला जाए और बदलाहट उसी क्षण से शुरू हो जाती है जब तुम एक मापदण्ड, सिंगल स्टैण्डर्ड अपनाते हो। तुम तुरंत बदलने लगते हो। दूसरे की निंदा न करो। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि अपनी निंदा करो। निंदा की जरूरत ही नहीं है, न स्वयं की, न दूसरे की। तथ्य को स्वीकारो, अगर तुम दूसरों की निंदा नहीं करते हो तो तुम उनके प्रति गहन करुणा के भाव से भरोगे, क्योंकि सबकी समस्याएं समान हैं, हम सब एक जैसे मनुष्य हैं। अगर कहीं कोई पाप करता है, उसकी निंदा न करो, अपने भीतर देखो।

पाप के सारे बीज तुम्हारे भीतर भी छिपे हुए हैं। अगर किसी ने हत्या की उसकी आलोचना न करो, देखो अपने भीतर क्या तुमने कभी किसी की हत्या का विचार नहीं किया। हत्या की या नहीं ये सवाल नहीं, बीज रूप में उसका विचार, उसकी संभावना तुम्हारे भीतर मौजूद है। स्वीकार का यह अर्थ नहीं कि उसे रूपान्तरित करने की जरूरत नहीं है, स्वीकार का बस इतना अर्थ है कि तुम तथ्य को, स्वाभाविक तथ्य को अंगीकार कर लो। जैसा वह है तथाता, तथ्य को जानो। तब जीवन में यह जानकर गति करो कि हां, मेरे भीतर सारी बुराइयां हैं। लोभ है, क्रोध है, हत्या का भाव है, काम वासना है, यह बोध तुम्हें रूपान्तरित कर देगा। यह रूपान्तरण अपने आप घटेगा। बोधपूर्वक तुम क्रोधी नहीं हो सकते, कामी नहीं हो सकते, लोभी नहीं हो सकते। उन सबके लिए मूर्छा एक बुनियादी शर्त है। यह ठीक वैसा ही है कि जैसे जानबूझकर तुम जहर नहीं खा सकते, जानबूझकर आग में हाथ नहीं डाल सकते, ऐसा केवल अंजाने में ही कर सकते हो। अगर तुम्हें पता नहीं है कि आग क्या है, तब ही तुम उसमें हाथ डाल सकते हो। यदि तुम जानते हो कि आग जलाती है, तब तुम कभी भी उसमें हाथ न डालोगे। अपने भीतर की बुराइयों को देखो। आओ आज इस विधि को हम संक्षेप में करते हैं।

सभी मित्र खड़े हो जाएं, आंख बंद कर लें। अपने उन परिचित लोगों का स्मरण करें जिन्होंने आपके साथ बुराइयां की, जिनके प्रति कभी भी आप नाराज हुए। उस घटना को विस्तार से देखें। किसी ने आपके साथ कुछ बुरा किया था, आप उस पर क्रोधित हुए थे। उस व्यक्ति ने

अन्य लोगों के साथ भी कुछ नाइंसाफी की, याद करें। अब आराम से बैठ जाएं और अपनी बुराइयों पर नजर लाएं। उस दुर्जन आदमी में जो दुर्गुण आपने देखे, क्या वे आपके भीतर मौजूद नहीं हैं? छोटे या बड़े रूप में। अगर बीज मौजूद है, कभी भी वृक्ष बन सकता है। अपने किए हुए पापों का ख्याल करें। उन पापों का भी ख्याल करें जो आपने किए नहीं, सोचे थे। पाप और अपराध में यही भेद है। अपराध कर्म में उतर आया, पाप केवल ख्याल में है। पुलिस, कानून और संविधान अपराध को तो पकड़ सकते हैं, धर्म की दृष्टि में पाप भी महत्वपूर्ण है जो हमने किया नहीं, केवल सोचा था, विचारा था। आज तक सारी मनुष्य जाति में जितने भी पाप हुए हैं, वे सब मेरे भीतर भी बीज रूप में मौजूद हैं। अंतिम चरण लेट जाएं, विश्राम करें। न दूसरे की निंदा, न अपनी निंदा, प्रकृति ने हमे ऐसा बनाया, हम ऐसे हैं, तथ्य को स्वीकारें। कुछ और करने की जरूरत नहीं है, जहर को जहर जान लिया, बात खत्म हुई। मुश्किल तब थी जब हम जहर को अमृत समझ रहे थे। बिल्कुल ठीक कहते हैं भगवान शिव, जैसे विषय और वासना दूसरों में है वैसे ही मुझमें है। इस भांति स्वीकार कर उन्हें रूपान्तरित होने दो। धन्यवाद।

सर्वव्यापकता की विधि

जैसे जल से लहरें उठती हैं और अग्नि से लपटें, वैसे ही सर्वव्यापक हम से लहराता है।

महर्षि अरविन्द ने कहा है कि पूरा जीवन ही योग है। जिन्दगी के एक छोटे से खण्ड को, एक हिस्से को हम ध्यानपूर्ण नहीं बना सकते। चौबीसों घण्टों पर, तीन सौ पैंसठ दिनों पर ध्यान की साधना को फैलाना होगा। साधना ऐसी हो जैसे श्वांस का चलना, जैसे खून का बहना। नींद तक में श्वांस चलती है। ठीक ऐसे ही ध्यान का धागा भी स्वप्न, जागृति और सुषुप्ति में फैल जाये तभी ध्यान हो पाता है। ऐसा समझें जैसे वायु शरीर की श्वांस है, ध्यान चेतना की श्वांस है। ध्यान में कहीं से भी प्रवेश संभव है। कोई भी छोटी से छोटी घटना प्रवेश का द्वार बन सकती है। इसलिए यह मत सोचना की कोई खास विधि, कि कोई खास तकनीक, एक विशेष परिस्थिति चाहिये कि मंदिर में, चर्च में बैठकर ध्यान होगा। नहीं, कहीं भी ध्यान हो सकता है। गोरा कुम्हार ने घड़ा बनाते हुये ध्यान कर लिया और कबीर जुलाहे ने कपड़ा बुनते हुये ध्यान कर लिया। शिल्पकला, संगीत, काव्य, धनुर्विद्या, यहां तक कि जापान के झेन फकीरों ने तो तीर चलाना और तलवार चलाने को भी ध्यान का हिस्सा बना लिया।

कोई भी चीज, भोजन करते हुये ध्यान हो सकता है, बगीचे में काम करते हुये ध्यान हो सकता है। और तभी ध्यान चौबीसों घंटों में फैल सकेगा। अगर तुमने किसी खास क्रियाकाण्ड को ध्यान समझा तब ध्यान तुम्हारे पूरे जीवन को कभी भी प्रभावित न कर सकेगा। अक्सर साधक ये गलती करते हैं। इस गलती से बचना। मुख्यतः तुम्हारा पूरा

जीवन ध्यानमय हो, न कि कोई खास क्रिया। आज की विधि के बारे में यह समझ लेना कि जैसे सागर में लहर होती है, तो लहर एक अर्थ में होती है और एक अर्थ में नहीं भी होती। होती इस अर्थ में है कि उनका रूप है, उनका आकार है। एक खास समय लहर का उठना शुरू हुआ। एक खास समय लहर वापिस पानी में समा गई, उसकी मृत्यु हो गई। लहर का जन्म और मृत्यु है, लहर का रूप और आकार है। किन्तु दूसरी दृष्टि से देखो तो वास्तव में लहर नहीं है, सागर ही है। वह जलभण्डार ही है जो लहरा रहा है, जो ऊपर उठा और नीचे गिरा, तो सच पूछो तो सत्ता तो पानी की है, लहर की नहीं। इसलिये लहर के संबंध में हम दोनों बातें कह सकते हैं, लहर है भी और नहीं भी। क्षणभंगुर रूप से लहर है, शाश्वत रूप से केवल सागर का होना है। सागर बिना लहरों के हो सकता है, लहरें बिना सागर के नहीं हो सकतीं।

हर लहर दूसरी लहर से अलग है, उसकी आकृति भिन्न, उसका रंग–रूप भिन्न, उसकी उम्र भिन्न। हो सकता है एक लहर अभी जन्म रही हो, ऊपर उठ रही हो, एक दूसरी लहर प्रौढ़ हो चुकी, शिखर तक जा चुकी, एक तीसरी लहर ने गिरना शुरू कर दिया, वो बूढ़ी हो गई, एक चौथी लहर मर चुकी, वापिस सागर में समा गई। निश्चित रूप से उठती हुई लहर, गिरती हुई लहर को कैसे एक जाने। ऊपर–ऊपर से देखने में लेहरें भिन्न–भिन्न हैं, पृथक हैं, उनके अपने–अपने व्यक्तित्व हैं, अपनी–अपनी पर्सनाल्टी है, अपनी–अपनी इन्डीविजुएल्टी है। लेकिन गहराई से खोजें तो लहर की कोई इन्डीविजुएल्टी नहीं है, एक कलेक्टिविटी है। सब लहरों में वही पानी है। सब लहरें एकदूसरे से जुड़ी हुई हैं। यहाँ तक कि गिरती हुई लहर, उठती हुई लहर में योगदान दे रही है। अगर ये लहर गिरे न तो दूसरी लहर उठेगी कैसे? हर उठती हुई लहर के फोर्स से उसके बल से ही एक नई लहर उत्पन्न होती है। अतः हम चीजों को देख नहीं पाते। यहाँ किसी की मृत्यु होती है, वह मृत्यु ही किसी छोटे बच्चे के जन्म का कारण बनती है। एक उठती हुई लहर एक नई लहर को जन्मा गई।

मैंने सुना है, मुल्ला नसीरूद्दीन के आफिस में उसके बॉस ने नसीरूद्दीन से पूछा कि नसीरूद्दीन तुम तो मुसलमान हो, क्या पुनर्जन्म में भरोसा करते हो? नसीरूद्दीन बड़ी मुश्किल में पड़ा, उसने कहा कि नहीं हमारे धर्म के अनुसार तो पुनर्जन्म नहीं होता। बॉस ने कि कहा, तब तो बड़ी मुश्किल है, क्योंकि जिन मामा जी की मृत्यु में तुमने पिछले हफ्ते तीन दिन की छुट्टी ली थी वह आफिस के बाहर बैठे तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं, मिलने आए हैं। जहां किसी की मृत्यु होती है वहाँ किसी का जन्म भी होता है। सारी लहरें संयुक्त हैं। ऊपर से देखने में भिन्न–भिन्न हैं, भीतर से जुड़ी हुई हैं। इस जोड़ को हम कैसे पहचानें? बड़ा महत्वपूर्ण सवाल है। इस जोड़ की पहचान तभी होगी जब हम गहन प्रेमभाव से चीजों को देखें। हम सब संयुक्त हैं, न केवल मनुष्य जाति से बल्कि वृक्षों से, पेड़ पौधों से, सूरज चांद तारों से। हम श्वांस छोड़ते हैं तो पेड़–पौधे लेते हैं, पेड़–पौधे जो वायु छोड़ते हैं उसे हम लेते हैं। तो हम अलग–अलग हैं कहाँ? सब जुड़े हुये हैं। एक गहन प्रेम का भाव ही अद्वैत में ले जाता है। तो आज की इस विधि को समझने के पहले उस अद्वैत भाव को समझना, वह प्रेम में डूब कर ही संभव है।

संत कबीर साहब कहते हैं –

पोथी पढ़ पढ़ जग मुआ पंडित भया न कोय,
ढाई आखर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय।
प्रेम गली अति सांकरी ता में दो न समाय,
जब मैं था तब हरि नहीं जब हरि है मैं नाहीं।
कबीर बादल प्रेम का हम पर बरसा आई,
अंतर भीगी आत्मा हरी भई बनराई।
जिहि घट प्रीति न प्रेमरस जिहि रसना नहीं राम,
ते नर इस संसार में उपजि भये बेकाम।
राता माता नाम का पीया प्रेम अघाय,
मतवाला दीदार का मांगे मुक्ति बलाय।

बड़ी अद्भुत बात, 'राता माता नाम का, पिया प्रेम अघाये, मतवाला दीदार का, मांगे मुक्ति बलाये।' जिसने प्रेम जान लिया उसने मुक्ति भी जान ली। क्योंकि प्रेम जानकर ही पता चला कि मैं लहर नहीं हूँ, मैं सागर स्वरूप हूँ। प्रेम में एकत्व घटित होता है, द्वैत का आभास समाप्त होता, अद्वैत की प्रतीती होती है। वो जो क्षुद्र लहर से हमारा तादात्म्य बन गया था वो टूटता है, विराट सागर से हमारा तादात्म्य बनता। अहंकार मिटता, अहंकार केवल क्षुद्र के साथ हो सकता है, विराट के साथ नहीं। आश्चर्य की बात– सारे धर्मों का अगर सार सूत्र खोजें तो वह निरअहंकारिता है। याद रखना ईश्वर बुनियादी तत्व नहीं है धर्म का। जैन धर्म और बौद्ध धर्म में ईश्वर की कोई धारणा नहीं है। लेकिन बुद्ध और महावीर भी निर्अहंकारिता की बात करते हैं। ईश्वर से ज्यादा महत्वपूर्ण है निर्अहंकारिता। अहंकार, रूप और आकार के साथ तादात्म्य बनाना है। निर्अहंकारी व्यक्ति अरूप और निराकार के साथ एकत्व में डूब जाता है। इस पृष्ठभूमि में आज की विधि नम्बर 61 को समझना।

भगवान शिव कहते हैं पार्वती से– जैसे जल में लहरें उठती हैं और अग्नि से लपटें, वैसे ही सर्वव्यापक हमसे लहराता है। इस बात की प्रतीति कि सर्वव्यापक हमसे लहराता है, इससे क्षुद्र से तादात्म्य टूटेगा, और विराट से बन जायेगा। इस विधि पर प्रवचन देते हुये परम गुरू ओशो ने कहा– हम जागतिक सागर में लहर मात्र हैं, इस पर ध्यान करो। इस भाव को अपने भीतर खूब गहरे उतरने दो। अपने श्वांस को उठती हुई लहर की तरह महसूस करो। तुम श्वांस लेते हो, श्वांस छोड़ते हो, जो श्वांस तुम्हारे अन्दर जा रही, वह क्षण भर पहले किसी दूसरे की श्वांस थी और जो श्वांस तुमसे बाहर जा रही वह अगले क्षण किसी और की श्वांस बन जायेगी। श्वांस लेना जीवन के सागर में लहरों के उठने गिरने जैसा है, तुम पृथक नहीं

हो, बस श्वांस की एक लहर हो। गहराई में तुम समष्टि के साथ एक हो। हम सब इकट्ठे हैं, संयुक्त हैं। वैयक्तिकता, इन्डिवेज्युअलिटी झूठी है और भ्रामक है इसलिए अहंकार एक मात्र बाधा है। अहंकार भासता है किन्तु वह सत्य नहीं। सत्य तो अखण्ड है, सागर है, अद्वैत है। इस विधि को तुम कई ढंगों से उपयोग में ला सकते हो। श्वांस लेते हुये भाव करो कि सागर ही तुम्हारे भीतर श्वांस ले रहा, सागर ही तुम्हारे भीतर उछल रहा है। भीतर आ रहा, बाहर जा रहा। प्रत्येक श्वांस के साथ महसूस करो कि लहर उठ रही, गिर रही और दोनों के बीच में तुम कौन हो, बस एक शून्य, एक खालीपन। उस शून्यता के भाव के साथ तुम रूपान्तरित हो जाओगे। उस खालीपन के भाव के साथ तुम्हारे सारे दुःख विलीन हो जायेंगे। क्योंकि दुख को होने के लिये किसी केन्द्र की जरूरत है, झूठे केन्द्र की। शून्य ही तुम्हारा असली केन्द्र है, उस शून्य में कोई दुख नहीं। उस शून्य में तुम गहन विश्राम में होते हो। जब तुम नहीं हो तो फिर तनावग्रस्त कौन होगा? तब तुम महा आनन्द से भर जाते हो। ऐसा नहीं कि तुम आनन्दपूर्ण होते हो, तुम होते ही नहीं, बस आनन्द होता है।

आओ भगवान शिव की इस विधि का माँ ओशो प्रिया के साथ हम प्रयोग करते हैं।

धन्यवाद...।

माँ ओशो प्रिया–

आज की ध्यान विधि में आपका बहुत–बहुत स्वागत है!

खड़े हो जायें...... और कल्पना करके ऐसे उछलें जैसे कि जल में सागर की लहरें उछलती हैं। ... ऊर्जा सागर हम में से ही भीतर और बाहर लहरा रहा है। ऊर्जा सागर हमसे लहरा रहा है, हममें लहरा रहा है। हम ऊर्जा की लहर बन गये हैं।, ऊर्जा ही ऊर्जा से भर गये। ऊर्जा ही ऊर्जा। ऊर्जा ही ऊर्जा......। स्टॉप। बैठ जायें।

दोनों हाथ ऊपर कर लें और अग्निशिखा की तरह डोलें। जैसे ज्योति डोलती है, ऐसे डोलें......। जैसे अग्नि से लपटे उठती हैं, ऐसे ही प्राण शक्ति हमसे उठ रही है और... लहरा रही है। एक अद्भुत ऊर्जा, एक अथाह ऊर्जा... प्राण शक्ति... जीवन शक्ति लहरा रही है, हिलोरें ले रही है। लहराने दें इसे। सहयोग दें...। शांत हो जायें।

और धीरे से शवासन में लेट जायें...। भाव करें... सागर की लहर शांत हो गई...। अग्नि की लपट विश्राम कर रही है...। लहर का रूप खो गया...। विराट जल भण्डार मौजूद है। लपट प्रगट होनी बंद हो गई। लेकिन ऊर्जा का अनन्त स्रोत, अनन्त भण्डार अभी भी बीज रूप में मौजूद है। यही हमारा वास्तविक स्वरूप है। ... अप्रकट ब्रह्म, अप्रगट परमात्मा हम सबके माध्यम से प्रगट होता है। अपने वास्तविक स्वरूप में गहरे... और... गहरे डुबकी लगायें। ......। दो–चार लम्बी गहरी श्वांसों के साथ ध्यान से वापस लौटें। ......। आज का ध्यान पूरा हुआ। हरि ओम् तत्सत्।

जहां मन भटके, वहीं!

जहां कहीं तुम्हारा मन भटकता है, भीतर या बाहर; उसी स्थान पर, यह!

मेरी जुस्तजूं को शायद अभी हौसला मिलेगा,
मैं जहां भटक रहा हूं वहीं रास्ता मिलेगा।
जो प्यार हो न दिल में तो किसी को क्या मिलेगा?
न तुझे सनम मिलेंगे न मुझे खुदा मिलेगा।
कहां तर्के मय परस्ती, कहां रोज पीने वाले,
वहीं तोड़ देंगे तौबा, जहां मयकदा मिलेगा।
मेरी जुस्तजूं को शायद अभी हौसला मिलेगा,
मैं जहां भटक रहा हूं वहीं रास्ता मिलेगा।

हौसला रखना, हिम्मत रखना, तुम्हारी जुस्तजू, तुम्हारी खोज जरूर रास्ता बनायेगी और रास्ता दूर नहीं है। जहाँ, भटक रहे हो, ठीक वहीं है। यही बात सर्वाधिक कठिन और

सर्वाधिक सरल है। रास्ता ठीक वहीं है।

आज विज्ञान भैरव तंत्र की विधि नम्बर 62 में भगवान शिव कहते हैं भवानी से– जहाँ कहीं तुम्हारा मन भटकता है, भीतर या बाहर, उसी स्थान पर 'यह'। ये वाक्य अधूरा सा लगता है सुनने में। अचानक कहते हैं, यह। ठीक कहते हैं, बिल्कुल ठीक कह रहे हैं। अधूरा नहीं है, इसमें बात आ गई। अभी और यहीं, ठीक यह। ओशो ने अपनी किताबों के जो शीर्षक चुने हैं बड़े प्यारे–प्यारे, उसमें एक किताब का शीर्षक है 'दिस इज इट' 'यही है वह'। यह शब्द बड़ा महत्वपूर्ण है। एक दूसरी किताब का शीर्षक है 'दिस दिस दिस थाउज़ंड टाइम्स दिस'। एक तीसरे किताब का शीर्षक मुझे याद आता है 'दिस व्हेरी बॉडी दि बुद्धा', एक और किताब का बड़ा ही प्यारा नाम है 'दिस व्हेरी अर्थ दि लोटस पॅराडाइज़'। यह 'दिस' शब्द खूब अच्छे से समझना। यही शरीर बुद्ध है। यही मन जिसे हम साधारण मन कहते हैं, चंचल मन कहते हैं, यहीं बुद्धत्व छुपा है। यही धरती मोक्ष है।

संसार और निर्वाण दो अलग–अलग चीजें नहीं हैं। इसको खूब गहराई से समझना। यहीं है रास्ता, मैं जहाँ भटक रहा हूँ वहीं रास्ता मिलेगा। मेरी जुस्तजू को शायद अभी हौसला मिलेगा। कहीं दूर नहीं जाना है, यहीं में जड़े मजबूत करनी हैं। सामान्यतः हम सोचते हैं कि बुद्ध और महावीर और जीसेस क्राईस्ट कुछ असाधारण मन वाले लोग थे, हम तो साधारण चंचल चित्त वाले हैं। नहीं, उनका मन भी साधारण ही था, चंचल ही था। लेकिन उन्होंने यह देखा कि यह जो भटकता हुआ मन है बादलों की तरह, ये जिस आकाश में भटक रहा है, वह आकाश असीम और विराट है। ठीक इसी भटकन में उन्होंने आकाश को पा लिया। तो यह मत सोचना कि हम तो साधारण लोग हैं, हमारा साधारण चंचल चित्त, हम कैसे उस विराट आकाश को जानेंगे। जहाँ हमारे बादल भटक रहे हैं विचाररूपी, वासनारूपी, कामनारूपी ठीक वहीं पर आकाश मौजूद है। आकाश के बिना ये बादल हो भी नहीं सकते थे। तो भटकन को गाली मत देना, चंचलता के खिलाफ मत हो जाना, मन से दुश्मनी मत ठान लेना। थोड़े से होशपूर्ण बनो और तुम पाओगे यहीं से सूत्र निकलता है। इसी भटकन में से रास्ता निकलता है।

मैंने सुना है विचित्तर सिंह अपनी युवावस्था में नौकरी के लिये बहुत भटक रहे थे, भटकते–भटकते पाँच साल बीत गये। एक दफ्तर में मालिक के पास पहुँचे और कहा कि मैं बहुत भटक रहा हूँ, कोई तो काम दीजिये। उस मालिक ने कहा कि हद्द हो गई, कहाँ से काम दूँ, देश में हजारों–लाखों बेरोजगार हैं। मेरे यहाँ कुल दो पोस्ट हैं खाली। दो हजार आवेदन पत्र आये हैं। मैं तो आवेदन पत्र सम्भालते–सम्भालते तंग आ गया। विचित्तर सिंह ने कहा बिल्कुल ठीक सर, आप मुझे आवेदन पत्र सम्भालने का ही काम दे दीजिये। मेरी भटकन तो मिटे। भटकन मिट सकती है। मैंने सुना है, एक आदमी रास्ते में जंगल में रास्ता भटक गया। चला जा रहा था जंगल में, कोई रास्ता ही नहीं मिल रहा था। उसने पीछे मुड़ के देखा, उसका आठ साल का बेटा भी पीछे–पीछे आ रहा था, उसने नाराज होकर बेटे को डाँटा और कहा कि मैं

तो रास्ता भटक गया हूँ, नालायक तू क्यों मेरे पीछे–पीछे आ रहा है? जा वापिस लौट घर की तरफ जा।

याद रखना जिस रास्ते से तुम भटके हो, अगर मुड़ जाओ तो वहीं रास्ता तुम्हारे घर तक जाता है। ठीक कहते हैं भगवान शिव– जहाँ कहीं तुम्हारा मन भटकता है, ठीक वहीं रूको और देखा, तो तुम आश्चर्यचकित हो जाओगे कि कहीं कोई भटकन नहीं, सारी भटकन समाप्त हो गई। इस विधि को समझाते हुये परम गुरू ओशो ने समझाया– जब तुम्हारा मन भटकता है तो दो चीजें होती हैं, एक तो बादल हैं, विचार हैं, विषय हैं, बिम्ब हैं, वासनायें हैं और दूसरी तुम्हारी चेतना है। जब तुम बादलों पर, विचारों पर बहुत ध्यान देते हो तो तुम आकाश को भूल जाते हो। तुम मेज़बान को भूल जाते हो और मेहमानों में बुरी तरह उलझ जाते हो। ये विचार जो भटक रहे हैं वे केवल मेहमान हैं। अगर तुम मेहमानों पर सारा ध्यान लगा देते हो, तुम अपने आपको, मेज़बान को भूल बैठते हो। अपने ध्यान को मेहमानों से हटाकर मेज़बान पर लगाओ। बादलों से हटाकर आकाश पर केन्द्रित करो और इसे व्यवहारिक ढंग से समझो। मानो काम–वासना उठती है, क्रोध उठता है कि लोभ उत्पन्न होता है, ये सब बादल हैं। तुम इनसे ग्रस्त मत हो जाओ। यह मत भूलो कि यह किसमें उठ रहे हैं, ये किसको घटित हो रहे हैं, कौन इसके पीछे है। जिस आकाश में ये बादल उठ रहे हैं, उस आकाश का ख्याल करो और अचानक बादल विदा होने लगेंगे।

सिर्फ दृष्टि बदलने की जरूरत है, परिप्रेक्ष्य बदलने की आवश्यकता है। दृष्टि को विषय से विषयी पर, बाहर से भीतर पर, बादल से आकाश पर लगाओ। अतिथि से आतिथेय पर ले जाने की जरूरत है, सिर्फ दृष्टि का फोकस बदलना है और बात बन जाती है। अतः आकाश के स्मरण से भरो। भटकने दो बादलों को, उनकी चिन्ता न करो। सोचो कि यह भीड़ से भरी हुई राह है, अनेक लोग इधर–उधर आ–जा रहे हैं। मन एक सड़क है, भीड़–भाड़ भरी सड़क। तुम केवल इतना कहो कि मैं आकाश हूँ बादल नहीं, सड़क नहीं। बस अपने आकाश होने का स्मरण रखो, इस भाव में स्थित रहो। देर अबेर तुम देखोगे कि बादलों की गति मन्द पड़ने लगी और बादलों के बीच बड़े–बड़े अन्तराल आने लगे। वे अब उतने काले नहीं रहे, उतने घने नहीं रहे, उनकी गति धीमी हो गई, अन्तराल देखे जा सकते हैं और उनके पीछे का आकाश दिखाई पड़ने लगा। अपने को आकाश की भाँति अनुभव करो, बादलों की भँति नहीं। देरअबेर, किसी दिन, किसी सम्यक क्षण में जब तुम्हारी दृष्टि सचमुच भीतर लौट आयेगी, अचानक बादल विलीन हो जायेंगे और तब तुम शुद्ध आकाश हो, सदा से शुद्ध, सदा से अस्पर्शित आकाश हो।

एक बार तुमने इस कुँवारेपन को जान लिया तो फिर बादलों में, बादलों के संसार में वापिस आ सकते हो। तब संसार का भी अपना ही सौंदर्य है। संसार बुरा नहीं है अगर तुम उसके मालिक हो। संसार बुरा है जब तुम उसके गुलाम बन जाते हो। गुलाम की तरह संसार समस्या है। जब तुम मालिक हो संसार गुलाम है तो तुम उसमें बड़े मजे से रह सकते हो फिर

संसार का अपना ही सौन्दर्य है। प्यारा है यह संसार, लेकिन तुम उस सौन्दर्य को, उस माधुर्य को अपने भीतर मालिक होकर, द्रष्टा होकर ही जान सकते हो। बड़ी अद्भुत है यह बात।

तिब्बत में एक बड़े प्रसिद्ध संत हुए 'मारपा'। किसी ने उनसे पूछा, कि बुद्धत्व के बाद आपके जीवन में क्या फर्क पड़ा। मारपा ने कहा– कुछ भी नहीं, जैसा दुखी मैं पहले होता था, अभी भी होता हूँ। पूछने वाला थोड़ा हैरान हुआ, कि फिर फायदा क्या हुआ बुद्धत्व का? इतनी साधना करने का। मारपा ने कहा कि पहले मैं मजबूरी में दुखी होता था, अब अपनी मौज से होता हूँ। कभी शौक चढ़ जाता है, हो जाता हूँ दुखी, अब मेरी मर्जी की बात है, मैं जब चाहूँ उसमें प्रवेश कर सकता हूँ, जब चाहूँ बाहर निकल सकता हूँ। मैंने सुनी एक मज़ाक कि आदमी विवाह क्यों करता है? क्योंकि हँसी–खुशी, आनन्द उत्सव, नाचना–गाना, हँसना–मुस्कुराना, घूमना–फिरना, मौज–मस्ती उड़ाना और निश्चिन्तता से जीना ही सबकुछ नहीं है। अरे भाई आखिर जिन्दगी में दुख–संताप, उदासी–पीड़ा, चिन्ता–फिक्र, बैचेनी–भय और आतंक आदि भावनाओं का भी अपना महत्व है। किसी को मिर्च खाने का शौक है, जरूर खाये। किसी को कड़वी चीज खाने का शौक है, कई लोग करेले की सब्जी खाते हैं, जरूर खायें। लेकिन करेला तुम्हारा मालिक न बन जाये, मिर्च तुम्हारी मालिक न बन जाये। मारपा ने बड़ी पते की बात कही उसने कहा– जैसे पहले दुखी होता था अभी भी वैसे ही दुखी होता हूँ, बस फर्क इतना है, अब मैं मालिक हूँ।

बादल अभी भी आते–जाते हैं, बादलों से आकाश का सौन्दर्य है। तालाब में कमल खिलते हैं, कमल से तालाब का सौन्दर्य है, तालाब का कमल से सौन्दर्य है। बादलों से आकाश की सुन्दरता है, आकाश से बादलों का होना है। कुछ विरोधी नहीं है। यह हमारा भटकने वाला साधारण चंचल चित्त कोई दुश्मन नहीं है। हाँ, अगर वह मालिक हो गया और हम अपने आपको भूल गये, वहाँ से पीड़ा शुरू होती है। हम मालिक हो जायें, हम अपने आकाश स्वरूप को जान लें फिर कोई दिक्कत नहीं है। फिर मन भटकता रहे, भटकने दो, उसकी चंचलता की भी एक सुन्दरता है। कोई खाली सड़क ही हमेशा थोड़ी अच्छी लगती है, सड़क पर कभी भीड़–भाड़ हो। सादा खाना खाते–खाते ऊब जाओगे, कभी थोड़ा मिर्च मसाला सही, कभी कड़वी कॉफी ही सही। सब चीजों की फिर अपनी सुन्दरता है। कोई भी चीज संसार में बुरी नहीं है, खराब नहीं है। महर्षि रमण एक दिन बहुत नाराज हो गये, एक पण्डित आया था, वो बकवास किये जा रहा। रमण ने उसको काफी समझाया, उसकी कुछ समझ में नहीं आ रहा था, बड़ा ज्ञानी था, शास्त्रों का ज्ञाता था। कोई घण्टा भर रमण उसकी सुनते रहे, सुनते रहे, अन्त में एक डण्डा उठाया पास में पड़ा हुआ उसको मारने के लिये दौड़े, वो भागा, रमण उसके पीछे–पीछे गालियाँ देते हुये, डण्डा बजाते हुये एक किलोमीटर तक उसको छोड़कर आये। शिष्य बहुत हैरान हुये कि आप इतने क्रोध में कभी दिखे नहीं, रमण ने कहा, कभी–कभी मजा आता है क्रोध करने का भी।

याद रखना महर्षि रमण मालिक हैं, वे क्रोध के गुलाम नहीं हैं, वे क्रोध का भी मजा ले

सकते हैं। 'दिस व्हेरी बॉडी दि बुद्धा', 'धिस व्हेरी अर्थ दि लोटस पॅराडाइज'।

आओ आज इस ध्यान विधि का प्रयोग करते हैं। तो सभी मित्र आँख बंद कर खड़े हो जायेंगे। अपने दोनों हाथों को ऊपर की तरफ उठा लेंगे और मन्द–मन्द, बायें–दायें, बायें–दायें डोलेंगे। कल्पना करें जैसे बादल आकाश में यहाँ–वहाँ घूमते... बदलियाँ तैरतीं... ठीक ऐसे ही आपका भी मन भटक रहा है, उसे भटकने दें। इस भटकते हुये मन को रोकने की चेष्टा न करें। तन डोल रहा है, मन डोल रहा है। जिसमें ये डोल रहे हैं वह अडोल है, भटकने दें, हिलने दें, कम्पित होने दें। आकाश निष्कम्प है। अब आराम से बैठ जायें, शरीर का डोलना बन्द करें। मन अभी भी डोलेगा भटकेगा, उसका मजा लेना शुरू करें, जरा भी रोकने की कोशिश न करना। विचारों को, कामनाओं को, आने दो उन बदलियों को जाने दो, कुछ करने की जरूरत नहीं, उनमें उलझो ही मत। तुम तो अपना ध्यान उस आकाश पर लाओ जिसमें ये बदलियाँ आ जा रही हैं, बदलियों से मुक्त हो जाओ। विचार बादल हैं, चेतना आकाश है। विचार गति कर रहे......। आकाश कभी गति नहीं करता......। अपने परिप्रेक्ष्य को, दृष्टिकोण को बदलो, चेंज युअर गेस्टाल्ट फ्रॉम दि मूविंग टू दि नॉन मूविंग, फ्रॉम दि वेवरींग माइंड टू नॉन वेवरींग कॉन्शसनेस.

अब आराम से लेट जायें। स्मरण करें। मैं चिद् हूँ, यदाकदा कोई बादल आते हैं विचारों के, उनके सौन्दर्य का मजा लें। आकाश की शोभा रंगीन बादलों से है, बादलों का अस्तित्व आकाश में है। फर्क बस इतना है आकाश बिना बादलों के हो सकता है किन्तु बादल बिना आकाश के नहीं हो सकते। तालाब बिना कमल के हो सकता है, किन्तु कमल बिना तालाब के नहीं हो सकते। सागर बिना लहरों के हो सकता किन्तु लहरें बिना सागर के नहीं हो सकतीं। अपने शाश्वत स्वरूप को पहचानो। तुम सागर हो, तुम तालाब हो, तुम आकाश हो। लहरें, कमल और बादल शत्रु नहीं, उनसे तुम्हारी शोभा है, सौन्दर्य है। मैं जहाँ भटक रहा हूँ वहीं रास्ता मिलेगा। मिल गया, गौर से देखो मिल गया। मेहमानों को भूलो, मेज़बान पर वापस आओ, यू आर नॉट अ गेस्ट, यू आर दि होस्ट, कम बॅक टू यूअरसेल्फ।

धन्यवाद्...।

बोध जगाने का प्रयोग

जब किसी इंद्रिय विशेष के द्वारा स्पष्ट बोध हो, उसी बोध में स्थित होओ।

योग का अर्थ है परमात्मा से जुड़ना और परमात्मा यानी आत्मा का परम रूप, स्वयं के होने की शुद्धतम दशा। हम अपनी इन्द्रियों के माध्यम से जगत से जुड़ते हैं, इन्द्रियाँ बाहर की सूचनायें लाती हैं। हम जिसे ज्ञान कहते हैं, वह आँख, कान, नाक के द्वारा प्राप्त सूचनायें हैं। एक और ज्ञान है, सन्त उसे परमज्ञान कहते हैं, आत्मज्ञान कहते हैं, वह स्वयं का बोध है। इस भेद को याद रखना, ज्ञान शब्द के दो अर्थ– एक तो सामान्य भाषा में हम जिसे कहते हैं नॉलेज, इन्द्रियों से प्राप्त सूचनायें, शास्त्रों–ग्रन्थों से पढ़े हुये विचार, कानों से सुनी हुई बातें। पर इसके अलावा एक ज्ञान और है, उसका जो भीतर सुनने वाला है, उसका जो भीतर देखने वाला है, जो भीतर जानने वाला है, जो ज्ञाता है, वही परमज्ञान है, वह आत्मज्ञान है। किसी सूफी फकीर से किसी ने पूछा संसार और निर्वाण में क्या भेद है? और जब आपने परमज्ञान पाया तब आपकी कैसी गति हुई। आप कहाँ से कहाँ पहुँचे? उस फकीर ने उत्तर दिया कि मेरी कोई यात्रा नहीं हुई, मैं जहाँ था वहीं के वहीं हूँ, सिर्फ दिशा का भेद हो गया है। बड़ी विचित्र बात उसने कही, मैं उसी जगह पर खड़ा हूँ जहाँ पहले था, सिर्फ मेरी दिशा बदल गई है।

ऐसा समझें कि एक आदमी सूरज की तरफ पीठ करके खड़ा है, तो वो छाया में है। ठीक उसी जगह एक दूसरा आदमी सूरज की तरफ मुँह करके खड़ा है वह रोशनी के जगत में

जियेगा। दोनों की स्थिति एक ही है सिर्फ दिशा का परिवर्तन है। अभी जिस द्वार से आपने ओशो मंदिर में प्रवेश किया, वह प्रवेश द्वार, एन्टरेन्स है, जब आप बाहर जायेंगे मंदिर के, वहीं बाहर जाने का भी द्वार होगा, एक्ज़िट बन जायेगा, निकास का द्वार बन जायेगा। द्वार तो एक ही होता है, बाहर की तरफ से जब आप भीतर आते हैं तो उस पर बोर्ड लगा है, एन्टरेन्स, जब भीतर से बाहर जा रहे हैं बोर्ड लगा है, एक्ज़िट। आपकी दिशा बदल जाती है बस। ठीक ऐसे ही हमारी इन्द्रियाँ हैं। इन्द्रियों के माध्यम से जब हमारी चेतना बहिर्गमन करती है, संसार की ओर उन्मुख होती है वह हमारी सामान्य अवस्था है और परमज्ञान की अवस्था में वही चेतना वापिस प्रतिक्रमण करती है। आपने एक शब्द सुना होगा 'अतिक्रमण'। कोई आदमी अपना मकान म्युनिसिपेल्टी की जगह में बना लेता है उसे हम कहते हैं, उसने अतिक्रमण कर लिया। दूसरे की जमीन पर कब्जा कर लिया।

प्रतिक्रमण का अर्थ है वापिस लौटना, रिटर्निंग टू दि सोर्स, अपनी जगह पर वापस आना। दूसरे पर जो अधिकार कर लिया है वहाँ से पीछे खिसकना। पतंजलि उसे कहते हैं प्रत्याहार, महावीर उसे कहते हैं प्रतिक्रमण। अतिक्रमण का ठीक विपरीत। जब हमने इन्द्रियों के माध्यम से चेतना को बाहर जाने दिया तब हमने अतिक्रमण कर दिया, जो हमारा 'होना' नहीं है, उस पर हम अधिकार करके बैठ गये। प्रतिक्रमण का अर्थ है स्वयं पर वापसी। अपने ऊपर लौट आना। जब शुरूआत में फोर्ड ने कारें बनायीं, उसमें रिवर्स गियर नहीं था, बड़ी मुश्किल होती थीं, आप अपने घर आ रहे हैं, घर से अगर चार फुट आगे भी बढ़ गये और वापस अपने घर के पास आना है तो पूरे मोहल्ले का चक्कर लगाकर आना पड़ेगा। रिवर्स गियर नहीं था, फिर बाद में यह बात ख्याल में आयी कि एक पीछे मुड़ने वाला गियर भी होना चाहिये। सौभाग्य की बात है हमारी चेतना फोर्ड के कार जैसी, उसके फर्स्ट मॉडल जैसी नहीं है, इसमें रिवर्स गियर है। हम अतिक्रमण भी कर सकते हैं, प्रतिक्रमण भी कर सकते हैं। जिन इन्द्रियों के माध्यम से हम बहिर्मुखी हुये हैं, उन्हीं के माध्यम से हम अन्तर्मुखी हो सकते हैं।

आज विधि नम्बर 63 में भगवान शिव कहते हैं पार्वती से– जब किसी इन्द्रिय विशेष के द्वारा स्पष्ट बोध हो, उसी बोध में स्थित होओ। बड़ा ही अद्भुत वचन, एक छोटी सी यह विधि, सारी विधियों का सार सूत्र है। इन्द्रियों के द्वारा जो बोध हो रहा है उस बोध में स्थित होओ। हम उलझ जाते हैं दृश्य में और द्रष्टा से चूक जाते। हमें बोध का ख्याल नहीं रहता, जिसका बोध हो रहा केवल उसका ख्याल होता है। जिसे बोध हो रहा है उसका भी विस्मरण हो जाता है। तो जरा सी दिशा बदलनी है बस। संसार मोक्ष बन जाता है, यही जगत निर्वाण बन जाता है। संसार और मोक्ष कोई दो अलग–अलग स्थान नहीं हैं, सिर्फ हमारी दिशा की बात है। और इसलिए सात प्रकार के योग हैं, उसमें तन्त्र योग भी दूसरे नम्बर का योग है, स्वाधिष्ठान चक्र से संबंधित, इन्द्रियों से संबंधित। तन्त्र के अतिरिक्त, अन्य प्रकार के योगों में बोध पूर्वक दमन सिखाया जाता है। परंतु तन्त्र की देशना अलग है।

भगवान शिव कह रहे हैं– भोग में उतरो, इन्द्रियों के ज्ञान में जाओ किन्तु बोधपूर्वक। ये

ज्ञान किसे हो रहा है, उस ज्ञाता का ख्याल बना रहे, बस इतनी सी बात। बोधपूर्वक, होशपूर्वक संसार में जिओ। इन्द्रियों का विरोध नहीं करना है, इन्द्रियों का दमन नहीं करना है। तन्त्र के अनुसार इन्द्रियों का उपयोग करना है, बोधपूर्वक भोग। इसलिए तन्त्र की धारणा हठयोग से, ज्ञानयोग से, कर्मयोग से थोड़ी भिन्न है। उन सबमें इन्द्रियों का दमन सिखाया जाता है। तन्त्र में, 'नींदर इंडलजन्स नॉर सप्रेशन बट ट्रान्सफॉर्मेशन' और उस रूपान्तरण की प्रक्रिया क्या है? वह है बोध, होश... होश से भरो। और कब सबसे ज्यादा होश हो सकता है, जब तुम्हारी इन्द्रियाँ कोई सूचना ला रही हों उसी समय जाग जाओ, चौंक जाओ।

इस विधि पर प्रवचन देते हुये परमगुरू ओशो ने समझाया– तुम अपनी आँख के द्वारा देखते हो, ध्यान रहे आँख के द्वारा नहीं, आँख से देखते हो। आँखें नहीं देख सकतीं, उनके द्वारा तुम देखते हो। द्रष्टा पीछे छिपा है भीतर, आँखें बस द्वार हैं, झरोखे की तरह हैं। लेकिन हम सदा सोचते हैं कि हम आँख से देखते हैं, हम सोचते हैं कि हम कान से सुनते हैं, कभी किसी ने कान से नहीं सुना, तुम कान के द्वारा सुनते हो, कान से नहीं। सुनने वाला पीछे छिपा है, कान तो केवल रिसीवर भर है। संगीत सुनते हुये कान में मत खो जाओ, अपने आपको मत भुला दो, उस चैतन्य को स्मरण करो जो पीछे छिपा है, उसका होश रखो। किसी को देखते हुये इस विधि का प्रयोग करो। तुम यह प्रयोग मुझे देखते हुये अभी और यहीं कर सकते हो। मुझे सुनते हुये अभी और यहीं कर सकते हो। सुनते समय कानों के द्वारा मात्र सुनो और अपने आन्तरिक केन्द्र के प्रति सजग रहो। स्पर्श करते हुये हाथ के द्वारा मात्र छुओ, भीतर अपने होने का ख्याल रखो। किसी भी इन्द्रिय से तुम अपने आन्तरिक केन्द्र की अनुभूति कर सकते हो और प्रत्येक इन्द्रिय आन्तरिक केन्द्र तक जाती है, उसे सूचना देती है। अगर तुम इन्द्रियों के द्वारा देख सके और सजग रह सके तो धीरे–धीरे संसार माया मालूम पड़ने लगेगा, स्वप्नवत् दिखाई पड़ने लगेगा और तब तुम उसके मूलतत्व में डूब सकोगे, वह मूलतत्व ही ब्रह्म है, परमात्मा है।

इस प्रयोग की शुरूआत अच्छा हो प्रकृति से करना। किसी वृक्ष को देखते हुये स्मरण रखना कि मैं वृक्ष को देखने वाला हूँ। किसी पर्वत को देखते हुये, किसी पशु को देखते हुये, हवा की सरसराहट सुनते हुये, नदी की कल–कल ध्वनि सुनते हुये स्मरण रखना कि ज्ञाता, श्रोता मेरे भीतर छुपा है, परमात्मा इन्द्रियों की आड़ में है। फिर धीरे–धीरे प्रकृति के बाद अपने प्रियजनों के बीच में इस प्रयोग को करना। मैं ऐसा क्यों कह रहा हूँ? अगर तुमने अजनबियों के साथ इस प्रयोग को आरंभ किया तो वह अप्रसन्नता महसूस कर सकते हैं। क्योंकि अगर तुम ज्ञाता के बोध से भरे हुये किसी की तरफ देखोगे तो तुम्हें भी हल्का सा तनाव महसूस होगा और उस व्यक्ति को भी बड़ा अजीब सा लगेगा। तो बेहतर हो कि प्रकृति से शुरू करो फिर आओ अपने परिवारजनों के बीच में, मित्रों के बीच में। जब प्रकृति के साथ तुम्हें सफलता हासिल हो जायेगी तो तुम्हारे भीतर ज्ञाता का बोध रखने से जो सूक्ष्म तनाव उत्पन्न हो रहा था, वह विलीन हो जायेगा, तब अजनबियों के साथ, अपरिचितों के साथ इस प्रयोग को

करना। और याद रखना इस शरीर के भीतर वह ब्रह्म छुपा हुआ है। यह शरीर मात्र एक घूंघट की तरह है। कबीर साहब कहते हैं– 'घूंघट के पट खोल तोहे पिया मिलेंगे।' वह परम प्रीतम हमारे भीतर विराजमान है हीं, बस इस घूंघट को उघाड़ना है।

मैंने सुना है एक अधेड़ उम्र की स्त्री डाक्टर के पास पहुँचकर बोली कि डाक्टर साहब आप किसी दवा से, किसी नुस्खे से मुझे सुन्दर बना सकते हैं? डॉक्टर ने कहा जरूर, आपको प्लास्टिक सर्जरी करवानी होगी। महिला ने पूछा, कितना खर्च आयेगा? डॉक्टर ने कहा कोई ढाई–तीन लाख रूपये खर्च होगा, बस ज्यादा नहीं। महिला कहने लगी ये तो बहुत ज्यादा है। क्या कोई सस्ता उपाय नहीं है। डॉक्टर ने कहा जरूर है, आप घूँघट ओढ़ना शुरू कर दें।

परमात्मा घूँघट की आड़ में छुपा है। परम सौन्दर्य तुम्हारे भीतर विराजमान है। चेतना इस शरीर के भीतर छुपी हुई है। जरा उस तरफ नजर फेरने की बात है। 'घूँघट के पट खोल तोहे पिया मिलेंगे।' परमात्मा कहीं दूर नहीं, किसी मन्दिर–मस्जिद में जाने की जरूरत नहीं, तुम्हारा यह शरीर ही वह मंदिर है, इन्द्रियाँ इस मंदिर के प्रवेश द्वार हैं, बस जरा सा रुख पलटना है। जो हम सदा एक्सट्रोवर्ट हैं, जरा सा इंन्ट्रोवर्ट बनना है और परम रहस्य का खजाना हमारे भीतर छुपा हुआ है।

आओ आज की इस विधि का प्रयोग करते हैं।

अपनी डायरी या किताब खोल कर बैठ जायें। उसे पढ़े और पढ़ते समय स्मरण रखें उस चैतन्य का जो किताब को देख रहा है। शब्दों में मत उलझना, शब्दों के बीच जो अन्तराल है उस पर भी ख्याल रखना...। हो सकता है शुरूआत में... अर्थ खो जाये और वाक्य पढ़ भी लें और कुछ समझ में न आये, चिन्ता नहीं करना, थोड़ा सा तनाव लगेगा...डबल ॲरोड कान्शसनेस बनायें। आँख के माध्यम से किताब को पढ़ रहे हैं... और कौन पढ़ रहा है, उसका होश बना हुआ है। विचित्र सी अनुभूति होगी। एक्सट्रोवर्ट और इंन्ट्रोवर्ट दोनों एक साथ। आँख एक खिड़की है, भीतर का चैतन्य मालिक, मकान के एक द्वार से झांक रहा है। उस मालिक का स्मरण, वह तुम्हीं हो। अब किताब बन्द कर दें। संगीत को सुनें, आँख बन्द कर लें। और संगीत को सुनते हुये स्मरण रखें श्रोता का, ये कौन है जो सुन रहा है। जैसे आँख एक खिड़की है वैसे ही कान भी दूसरी खिड़की है। इस शरीर रूपी मकान के भीतर चैतन्य रूपी मकान मालिक है। सुनें और श्रोता का स्मरण रखें।

अब एक तीसरा प्रयोग करते हैं– अपनी दोनों हथेलियाँ नीचे गद्दे पर रखें। चादर को छुऐं, तकिए को स्पर्श करें। उसकी शीतलता, उसकी कोमलता या खुरदुरापन, हाथ के स्पर्श के प्रति सजग हों, साथ हीं उस चैतन्य के प्रति सजग हों जो छू रहा है। ये स्पर्श का ज्ञान किसे हो रहा है। हाथ केवल एक यन्त्र है, एक रिसीवर। यह सूचना किसको प्राप्त हो रही है? आत्मस्मरण से भरें, अब आराम से लेट जायें, शिथिल हो जायें, चलें खिड़कियों से दूर, भीतर के कक्ष में, जहाँ मकान मालिक का निवास है, अब न आँख देख रही, न कान सुन रहे,

न हाथ स्पर्श कर रहे। अब बस केवल आप हैं। भगवान शिव इसी आपके होने की तरफ इशारा कर रहे हैं, इस बोध में स्थित होने की तरफ इशारा कर रहे हैं। इस समय किसी चीज का ज्ञान नहीं हो रहा है, ज्ञाता का भान हो रहा है, नो दि नोअर, ऑबजर्व दि ऑबजर्वर, हू इज ऑबजर्विंग, लेट दि ऑबजर्वर बिकम ऑबजर्वड्, द्रष्टा दृश्य हो जाये...। बोध में स्थित हों....। भूल जायें जगत को.....। आत्मरमण करें.....। जब तक आपका भाव हो, आत्मरमण में डूबे रहें.....।

धन्यवाद।

छींक, भय व भूख में

छींक के आरंभ में, भय में, चिंता में, खाई–खड्ड के कगार पर, युद्ध से भागने पर, अत्यंत कुतूहल में, भूख के आरंभ में और भूख के अंत में, सतत् बोध रखो।

किसी शायर ने लिखा है–

होश में था तो फिर उसपे मर गया कैसे?
ये जहर मेरे लहू में उतर गया कैसे?
जिसे भुलाए कई साल हो चुके हैं मुझे,
मैं आज उस गली से गुजर गया कैसे?
जरूर किसी रहबर ने किया होगा करम,
नशे में था तो मैं अपने घर गया कैसे?

जिंदगी की यही विडम्बना है और विरोधाभास भी कि अपने घर आने के लिए भी हमें बहुत परायों के द्वार खटखटाने पड़ते हैं। अपनी शक्ल पहचानने के लिए बहुत दर्पणों में देखना पड़ता है। विज्ञान भैरव तंत्र की विधियां एक लिहाज से बहुत सरल हैं और एक लिहाज से बहुत कठिन भी। सरल इसलिए क्योंकि स्वयं के प्रति जागना है, अपने ही घर में आना है। और कठिन इसलिए क्योंकि हम भटक गए हैं। दूसरों के द्वार–दरवाजे खटखटाते फिर रहे हैं। जो प्राप्त है उसको ही पाने और स्वयं के निकट आने के लिए दूर जाना पड़ता है। कुछ नया नहीं खोजना, मात्र अनावरण करना है– इनवेंशन नहीं डिस्कवरी करनी है। अतः धर्म की साधना कठिनतम भी है और सरलतम भी। क्योंकि संसार व निर्वाण दो सत्य नहीं, एक ही सत्य को देखने की दो दृष्टियां हैं।

कई बार लगेगा कि इतनी सरल विधि से क्या होगा?

आज की विधि में भगवान शिव कहते हैं पार्वती से कि छींक के आरंभ में, भय में, चिंता में, खाई–खड्ड के कगार पर चलते हुए, युद्ध से भागने पर, अत्यंत कुतूहल में, भूख के आरंभ में अथवा भूख के अंत में, सतत् बोध रखो। इन सातों बातों में समग्रता स्वाभाविक सधती है। रोम–रोम सम्मिलित हो जाता है। विचार रुक जाते हैं। छींक गैर–स्वैच्छिक, नॉन वालंटरी है। आदमी कितना असहाय है– चाहकर छींक भी नहीं सकता! इसका सदुपयोग ध्यान के लिए कर लो।

अपना स्मरण रखो। सुख में तो भूल जाते हैं स्वयं को, सुख एक प्रकार का नशा है, सुख एक प्रकार का जहर है, आत्मविस्मरण उसमें हो जाता है। विषय की याद रहती है और स्वयं का विस्मरण हो जाता है। दुख की एक खूबी है, कष्ट में हमें आत्मस्मरण आता है इसलिए दुखों का भी उपयोग साधना के लिए किया जा सकता है। आज की इस तांत्रिक विधि में भगवान शिव जिन सात बातों को गिना रहे हैं इनकी दो खूबियां हैं। एक तो ये कष्टप्रद हैं और दूसरा इनमें एक टोटलिटी और समग्रता पैदा होती है।

साधारणतः हमारा जीवन बड़ा खंडित–खंडित है, हम कभी भी संपूर्ण नहीं होते। लेकिन जब भय की स्थिति बनेगी तब हमें संपूर्ण होना ही पड़ेगा। जब युद्ध से भाग रहे हो, यह घटना आंशिक नहीं हो सकती। किसी भयानक खाई की कगार पर चल रहे हो तब भय की स्थिति है उस समय संपूर्ण रूप से जागरण घटित होता है। भय के साथ जागरूकता का बड़ा गहरा जोड़ है। सामान्यतः हम सोए–सोए, नशे में जीते हैं और इसलिए अपने घर नहीं आ पाते। भगवान शिव कह रहे हैं दुखद परिस्थितियों का भी, भयानक स्थितियों का भी, दुर्घटना का भी उपयोग कर लो स्वयं तक पहुंचने के लिए और यह बड़ा आसान है। सुख में भूलना सरल है, दुख में जागना आसान है। कई लोग मुझसे पूछते हैं कि परमात्मा करुणावान है तो फिर दुनिया में इतना दुख क्यों है? वो सारे दुख समाप्त क्यों नहीं कर देता? इसलिए नहीं कर देता क्योंकि वह करुणावान है और ये दुख हमें जगाने के लिए हैं। कभी आपने ख्याल किया, रात में अगर कोई सुखद स्वप्न चल रहा है तो गहरी नींद लगी रहेगी लेकिन अगर कोई

डरावना स्वप्न हो, भयानक स्वप्न हो तब नींद खुल जाएगी। दुख–स्वप्न नींद को तोड़ देता है। तो क्यों न हम अपने सामान्य जागृति की अवस्था में भी भय का, दुख का और कष्ट का उपयोग जागरण के लिए कर लें।

जापान में झेन फकीर हुए हैं उन्होंने तलवार चलाने को, तीर चलाने को, जूडो–कराटे, कुश्ती की कलाओं में निपुण होने को कहा, युद्ध की कलायें उन्होंने खोजीं और उनका ध्यान के लिए उपयोग किया। ऐसा और कहीं भी नहीं हुआ। सच पूछो तो झेन फकीरों ने जापान में भगवान शिव की इस विधि का ही उपयोग कर लिया। युद्ध का भी उपयोग कर लो, डर का भी उपयोग कर लो। जब अचानक कोई डरावनी आवाज होती है तुम चौंक जाते हो और इतने जागरूक हो जाते हो जितने कि कभी नहीं थे। सामान्य अवस्था में कभी उतने जागरूक नहीं होते। तो आत्मजागरण के लिए इन निगेटिव परिस्थितियों का भी उपयोग किया जा सकता है।

भगवान महावीर उपवास करते थे। किसलिए, इसलिए कि जब शरीर में भूख लगी है और कष्ट हो रहा है उस समय सोना बहुत मुश्किल है, भूखे पेट नींद भी नहीं आएगी। जागरण बड़ा आसान है इस घड़ी का सदुपयोग किया जा सकता है। उपवास सिर्फ उपवास के लिए नहीं है। आज जैन समाज के लोग भूखे रहते हैं लेकिन वह भूखा रहना केवल अनशन मात्र है, उपवास नहीं। उपवास का शाब्दिक अर्थ जानते हो, वास यानि निवास और उप यानि निकट। वही जो उपनिषद का अर्थ है, वही उपवास का अर्थ है। स्वयं के पास निवास, अपनी आत्मा के निकट होना। शरीर में जब कोई कष्ट है तब हम अपने निकट जा सकते हैं, अपनी परिधि को भूल सकते हैं। इन परिस्थितियों का उपयोग करो।

'सुंघनी' या 'नसवार' का प्रयोग छींक लाने के लिए बहुत लोग करते हैं और ये गहरे से गहरी लत है। शराब का नशा या तम्बाकू के अन्य रूप, बीड़ी, सिगरेट इत्यादि उतनी गहरी लत पैदा नहीं करते जितना कि सुंघनी पैदा करती है। जरूर इसके पीछे कोई कारण होगा। दरअसल जब सुंघनी कोई व्यक्ति सूंघता है और उसे छींक आने को ही होती है उस समय उसकी अवेयरनेस अपनी टोटलिटी में, संपूर्णता में प्रगट होती है, काश छींक के पहले हम संपूर्ण जागरूक हो जाएं तो अचानक छींक आना संभवतः रुक ही जाएगा। या छींक अगर आ भी जाए तो भी हम अपने आत्मकेन्द्र में स्थित हो सकते हैं।

इस विधि को समझाते हुए परमगुरू ओशो कहते हैं–

'छींक गैरस्वैच्छिक है, नॉन–वालंट्री, तुम उसमें एक नई चीज जोड़ते हो, सजगता जोड़ते हो और जब सजगता आती है तो संभव है छींक न आ पाए। अगर तुम सचमुच जागरूक हुए तो फिर छींक नहीं आएगी, छींक खो जाएगी और तब एक नई घटना घटेगी, जो ऊर्जा छींक के द्वारा निकलने वाली थी अब वह स्वयं की ओर मुड़ जाएगी, वह ऊर्जा तुम्हारी सजगता में जुड़ जाएगी। अचानक बिजली सी कौंधती है और तुम ज्यादा सचेत हो जाते हो। जो शक्ति छींक बनकर बाहर निष्काषित होने जा रही थी वही शक्ति तुम्हारी जागरूकता में जुड़

जाती है। तुम अचानक बहुत सचेत हो जाते हो। बिजली की उस कौंध में बुद्धत्व भी संभव है। खाई खड्ड के कगार पर, युद्ध से भागने पर, अत्यंत कोतूहल में, भूख के आरंभ में और भूख के अंत में सतत बोध रखो। बड़ी अद्भुत विधि दे रहे हैं भगवान शिव। किसी भी चीज का उपयोग कर सकते हो। भूख लगी है जाग जाओ, पेट भर गया जाग जाओ, डर लगा है जाग जाओ, महावीर ने इसी विधि के लिए उपवास का प्रयोग किया था। इस विधि के लिए तुम किसी भी चीज का उपयोग कर सकते हो, नकारात्मक चीजों का भी, भयानक चीजों का भी और इसलिए तपस्या की विधियां खोजी गईं। जानबूझकर खतरे को आमंत्रित करो।'

आज हम प्रयोग करेंगे। यहां आश्रम में खाई–खड्ड तो नहीं है इसलिए हम छत के ऊपर चलेंगे और छत की बिल्कुल किनारे पर धीरे–धीरे चलेंगे होशपूर्वक, जरा सी असावधानी, जरा सी भी गलती कि नीचे गिरे, उस भय की अवस्था में जागरूकता बड़ी आसानी होगी। पहाड़ों पर चढ़ने का जो मजा पर्वतारोहियों को आता है उसका कारण भी यही है। जहां जान जोखिम में है वहां सावधानी अपने आप आएगी। वह ध्यान का ही मजा है। कोई तेज मोटरसायकिल चला रहा है, उसके माता–पिता मना करते हैं कि बेटा इतनी तेज गाड़ी न चलाओ दुर्घटना हो जाएगी फिर भी बेटा नहीं मानता। जरूर इसमें कोई रस होगा। इसमें कौन सा रस है? इसका रस यही है, जब तेज गति से गाड़ी चला रहे हो उस फास्ट ड्राइविंग में तुम निर्विचार हो जाते हो, जैसे छींक आने के पहले तुम निर्विचार हो जाते हो। तेज गाड़ी चलाते हुए जरा भी यहां–वहां के विचार आए कि दुर्घटना हो जाएगी, मौत हो सकती है। उस खतरे की घड़ी में सघन जागरूकता घटित हो सकती है।

अभी आप यहां बैठे हैं, जरा सोचें अगर बम फटने की आवाज हो या भूकंप आ जाए तब कितनी गहन जागरूकता घटित होगी। आप रात अपने कमरे में चुपचाप बैठे थे, कि लेटे थे और अचानक कोई चोर–डाकू भीतर प्रवेश कर जाता है और आपकी खोपड़ी पर पिस्तौल लगा देता है, उस समय आपका जागरण अपने शिखर पर पहुंच जाता है। तो दुर्घटनाओं का भी उपयोग कर लो। जीवन की हर परिस्थिति का साधना में उपयोग किया जा सकता है।

मैंने सुना है, एक अंधेरी रात में भयंकर आंधी–तूफान उठा, साथ में भूकंप के धक्के भी आये। मुल्ला नसरुद्दीन का पूरा मकान गिर गया। कुछ बचा ही नहीं, सब नष्ट हो गया। लेकिन नसरुद्दीन बिना चोट खाये बाहर भागकर आ गया। घबड़ा तो बहुत गया, हाथ–पैर उसके कांपते थे, लेकिन हाथ में एक शराब की बोतल बचाये हुए बाहर आ गया। जो बचाने योग्य उसे लगा, उस गिरते हुए, टूटते घर में, वह शराब की बोतल थी!

बाहर आकर बैठ गया; आंख से आंसू बहने लगे सब जीवन की कमाई नष्ट हो गयी। पड़ोस के लोग आ गए। पड़ोस के ही एक चिकित्सक ने आकर नसरुद्दीन को कहा कि थोड़ी–सी ये शराब ले लो तो थोड़ी स्नायुओं को ताकत मिले। तुम बहुत घबड़ा गए हो, थोड़े आश्वस्त हो सकते हो।

नसरुद्दीन ने कहा, 'नथिंग डूइंग, दिस आई ऐम सेविंग फार सम इमरजेन्सी!' यह जो

शराब की बोलत है, किसी दुर्घटना के लिए है; इसे किसी आपात्कालीन, संकटकालीन स्थिति के लिए बचा रहा हूं!'

और कौन सी आपातकालीन स्थिति आएगी? यह जिंदगी जिसे हम कह रहे हैं निरंतर जल रही है, यहां आग लगी ही हुई है, यह जिंदगी चारों ओर मौत से घिरी हुई है, किसी भी क्षण मौत हो सकती है। इस परिस्थिति का उपयोग कर लो। यह मृत्यु हमारी दुश्मन नहीं तब हमारी मित्र और हितैषी हो जाएगी, हमें बुद्धत्व की ओर ले जाने वाली हो जाएगी।

जीवन में आप भी जीवन की निधि को किसलिए बचा रहे हैं? जीवन की ऊर्जा को किसलिए बचा रहे हैं? कल पर टाल रहे हैं, परसों पर टाल रहे हैं, और दुर्घटना अभी घट रही है। प्रतिपल जीवन मृत्यु में फंसा है, और जिसे आप जीवन कहते हैं, वह सिवाय मरने के और कुछ भी नहीं है। जागो। और शराब की जरूरत नहीं, वैसे ही काफी बेहोश हो।

आज की विधि को करने के लिए, चलो हम ओशो मंदिर की छत के किनारे चलते हैं और वहां धीरे-धीरे चलेंगे।

होशपूर्वक, एक-एक कदम बिल्कुल किनारे से चलें, जरा सी चूक कि नीचे गिरना हो जाएगा। अचानक डरावनी आवाज होगी, चौंकना, जागना, केवल आवाज के प्रति नहीं, स्वयं के प्रति भी। भगवान शिव कहते हैं सतत् बोध रखो। किसका बोध? स्वयं का। एक-एक कदम होशपूर्वक।

भूख के आरंभ में आत्मस्मरण, प्यास के आरंभ में, पैर में कोई कांटा चुभ जाए कि सिर में दर्द हो हर परिस्थिति का उपयोग कर लो। पेट भर गया आत्मस्मरण, प्यास बुझ गई आत्मस्मरण।

अब विश्रामपूर्वक बैठ जाएं, सतत् बोध रखें कि मैं हूं। अब न खाई-खड्ड है, न भयावह स्थिति, न छींक आने को है, न भूख, न प्यास, न भय, न चिंता। विश्राम, किन्तु होशपूर्वक। परिधि पर कुछ भी नहीं हो रहा है लेकिन केन्द्र में सतत् बोध मौजूद है, यह बोध ही ध्यान है। भूल जाएं परिधि को, अपने केन्द्र में डुबकी मारें, सतत् बोध, निरंतर, कंटीनुअस अवेयरनेस। यही है ध्यान का सार-सूत्र।

धन्यवाद भगवान शिव को जिन्होंने इतनी सरल विधियां दीं, धन्यवाद ओशो को जिन्होंने इतनी गुह्य विधियों की इतनी प्यारी व्याख्या की।

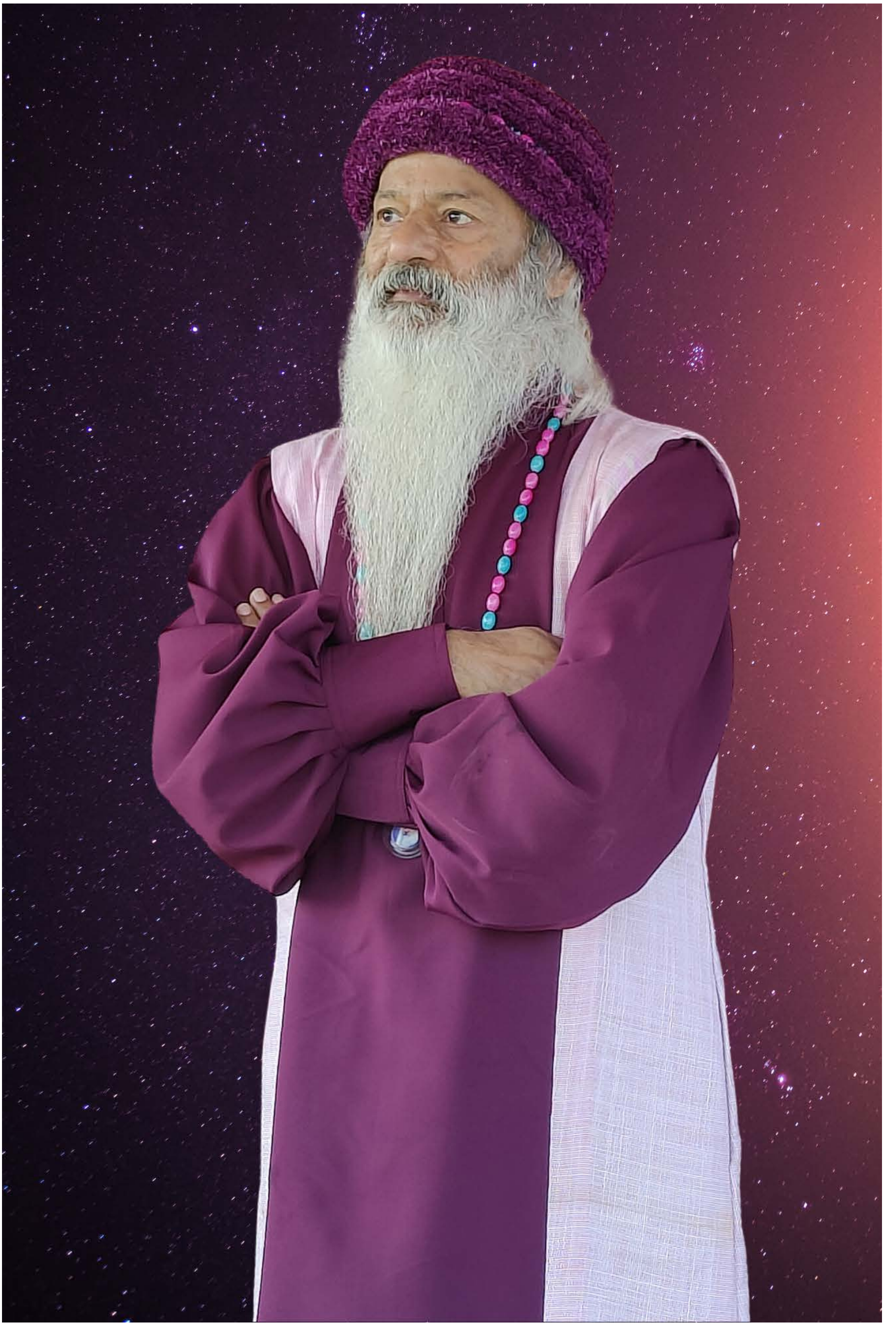

शुद्धता एवं अशुद्धता

अन्य देशनाओं के लिए जो शुद्धता है वह हमारे लिए अशुद्धता ही है। वस्तुतः किसी को भी शुद्ध या अशुद्ध की तरह मत जानो।

आज टूटी दुआओं से जी भर गया,
मर चले इन इलाजों से जी भर गया,
चारागर छोड़ मुझको मेरे हाल पर,
जहर दे अब दवाओं से जी भर गया।
साकिया अब तो तेरा करम चाहिए,
मौलवी से किताबों से जी भर गया।।

जिसका किताबों से जी भर गया हो, नैतिक शिक्षाओं से जी भर गया हो केवल वही भगवान शिव की धार्मिक शिक्षा ग्रहण कर सकता है। याद रखना नैतिकता और धार्मिकता

का भेद। नैतिकता चीजों को दो खण्डों में बांटकर देखती है, मौलिकरूप से अस्तित्व को विभाजित कर देती है जो कि अविभाज्य और अखण्ड है। धार्मिकता अस्तित्व को अद्वैत के रूप में देखती है। दोनों में बड़ा भेद है।

आज की विधि में भगवान शिव कहते हैं पार्वती से, हे देवी! अन्य देशनाओं के लिए जो शुद्धता है वह हमारे लिए अशुद्धता ही है, वस्तुतः किसी को शुद्ध या अशुद्ध की तरह मत जानो। अगर शुद्धता और अशुद्धता का विभाजन, पापी और संत का विभाजन, अच्छाई और बुराई का विभाजन हम छोड़ दें तो तुरंत ही अमनी दशा, उन्मनी दशा उपलब्ध हो जाएगी। क्योंकि मन इस बुनियादी विभाजन पर ही खड़ा है।

शुभ–अशुभ, नैतिक–अनैतिक, पाप–पुण्य सब द्वंद्व हैं। इस द्वंद्व के पार जाना है। एक गहन समझ चाहिए। जैसे चुंबक के दो ध्रुव होते हैं वे एक–दूसरे के विपरीत नहीं, वे एक–दूसरे के परिपूरक हैं।

जैसे सूर्योदय और सूर्यास्त एक–दूसरे के विपरीत नहीं, एक ही घटनाक्रम के दो अंश हैं, दिन और रात एक–दूसरे के खिलाफ नहीं, एक ही समय के दो हिस्से हैं, जन्म और मृत्यु आपस में जुड़े हुए हैं, एक ही डंडे के दो छोर। जब हमें चीजें ऐसी दिखाई देने लगें तब नैतिकता वाली हमारी दृष्टि खत्म हो जाती है। तब हम जिसे शुद्ध और अशुद्ध कह रहे थे, जिन्हें हम अच्छे लोग और बुरे लोग कह रहे थे, अपराधी और महात्मा कह रहे थे वे हमारे लिए एक हो जाते हैं।

और जब बाहर का विभाजन मिट जाता है तब हमारे भीतर भी अखण्डता आ जाती है। बाहर का विभाजन ही हमारे भीतर रिफलेक्ट होता है, उसकी प्रतिछवि बनती है और भीतर भी हम विभाजित हो जाते हैं। जैसे किसी दर्पण के सामने कोई टूटी हुई चीज रखो तो ऐसा लगेगा कि दर्पण में भी दरार आ गई और वास्तव में दरार आई नहीं लेकिन एक भ्रम पैदा होता है।

मैं आपको इल्यूजन्स के कुछ चित्र दिखाना चाहूंगा, मेरी बात सुनते चलें और उन चित्रों को भी देखते चलें, उससे यह स्पष्ट हो जाएगा कि चीजें जैसी हैं वास्तव में वैसी दिखाई नहीं देतीं। हमारा मन अपनी धारणाएं उन पर प्रक्षेपित करता है, प्रोजेक्ट करता है और यहां से माया उत्पन्न होती है।

शुद्धता और अशुद्धता दोनों ही माया हैं जो हमने पैदा की है, वे वास्तव में है नहीं। नैतिकता की सारी धारणाएं समाज, देश, काल के अनुसार बदलती रहती हैं। आज से पांच हजार साल पहले जो बात अच्छी मानी जाती थी आज वह बात बुरी मानी जाती है।

महाभारत के काल में युधिष्ठिर जुआरी थे, पांच भाई मिलकर एक पत्नी के साथ रहते थे और उनको अच्छा माना जाता था। युधिष्ठिर को तो धर्मराज कहा जाता था। यहां तक कि अपनी पत्नी को उन्होंने जुए में लगा दिया था, महाजुआरी थे। आज हमारी धारणा बदल गई, आज हम किसी जुआरी को नैतिक व्यक्ति नहीं कह सकते।

अलग–अलग देशों में अलग–अलग धारणाएं प्रचलित रही हैं जो कि फैशन की तरह बदलती रहती हैं। तो न कुछ अच्छा है, न कुछ बुरा है। हमारी निंदा और प्रशंसा से अस्तित्व

नहीं बदलता लेकिन हमारी निंदा और प्रशंसा हमें तोड़ देती है। यह टूटना ही, यह खण्डित होना ही हमारे दुख का कारण है। अगर इस दुख के पार जाना है तो भगवान शिव की बात सुनो। न कुछ शुद्ध है, न कुछ अशुद्ध है, दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

हम जिसे शैतान और भगवान कहते हैं वह हमारा गहरे से गहरा दार्शनिक विभाजन है। न कहीं कोई शैतान हैं, न कोई भगवान है। अगर हैं तो एक ही शक्ति के दो रूप हैं। हम जिन्हें राम और रावण कहते हैं। जरा सोचो अगर कैकेयी और रावण न होते तो फिर रामायण में राम की कहानी क्या होती? तब तो राम की कहानी ही समाप्त हो जाती। रावण और कैकेयी उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने कि राम और सीता महत्वपूर्ण हैं। उससे कम नहीं, जरा भी कम नहीं।

एक फिल्म का कहानीकार, निर्देशक, फिल्म बनाता है, हीरो और विलेन का निर्माण करता है कहानी में, तो क्या आप सोचते हैं कि विलेन के बिना कहानी हो सकती है? नहीं हो सकती। विलेन का भी उतना ही महत्वपूर्ण रोल है जितना कि हीरो का है। नायक और खलनायक दोनों मिलकर पूरी कहानी की रचना करते हैं। दोनों ही महत्वपूर्ण हैं, दोनों ही एक ही कहानीकार के द्वारा रचे गए हैं, दोनों एक ही निर्देशक से निर्देशन प्राप्त करते हैं।

काश, हम प्रकृति को, अस्तित्व को इस भांति देख सकें, वह महान डायरेक्टर जिसके निर्देशन में सब चीजें चल रही हैं, अच्छाई और बुराई का खेल, यह पूरी लीला चल रही है तब हम द्वंद्व के पार हो जाएंगे। इस विधि को समझाते हुए परमगुरू ओशो कहते हैं– ''यह विभाजन संसार को ही नहीं बांटता है, विभाजन करने वाले को भी बांट देता है।'' अगर तुम बांटते हो तो उसमें तुम खुद भी बंट जाते हो और जब तक तुम बाह्य विभाजनों को नहीं भूलते तब तक तुम अपने आंतरिक विभाजनों का अतिक्रमण नहीं कर सकते।

जो कुछ तुम संसार के साथ करते हो अंततः तुम अपने साथ भी वही करते हो। सिद्धयोग के महान सद्गुरू सरहोपा ने कहा है– ''इंच भर का भी विभाजन और स्वर्ग–नर्क अलग–अलग हो जाते हैं।'' लेकिन हम बांटते हैं, नाम देते हैं, निंदा करते हैं, औचित्य सिद्ध करते हैं।

अस्तित्व के शुद्ध अर्थ को देखो और कोई नाम न दो, कोई लेबल न लगाओ केवल तभी तंत्र की देशना को समझा जा सकता है। तथ्य को भला या बुरा न कहो, तथ्य पर अपने चित्त को मत उतारो, ज्यों ही तुम तथ्य पर अपनी धारणा आरोपित करते हो तुम झूठ का, असत्य का, माया का निर्माण करते हो। अब यह तथ्य न रहा, सत्य न रहा, यह तुम्हारा प्रक्षेपण हो गया। इस प्रोजेक्शन से मुक्त होना है।

तंत्र कहता है कि खण्ड मत करो, अखण्ड रहो और केवल तभी तुम जीत सकते हो। कैसे अखण्ड हुआ जाए? निंदा मत करो, मत कहो कि यह अच्छा और यह बुरा है, शुद्धता और अशुद्धता की सभी धारणाओं को विदा कर दो, संसार को देखो लेकिन यह मत कहो कि यह क्या है, अपने ज्ञान की पर्त मत चढ़ाओ। अज्ञानी बने रहो।

बहुत बुद्धिमानी मत दिखलाओ। कुछ धारणा न बनाओ चुप रहो। न निंदा, न प्रशंसा, अगर तुम संसार के संबंध में मौन रह सके तो धीरे–धीरे यह मौन तुम्हारे भीतर भी प्रवेश कर जाएगा और अगर बाहर का विभाजन समाप्त हो जाए तो भीतर का विभाजन भी समाप्त हो जाएगा क्योंकि दोनों संग–साथ ही रह सकते हैं।

याद रखना, हमारी सभ्यता और संस्कृति ने हमें झूठा और पाखण्डी बनाया है। तंत्र हमें पुनः इस नकलीपन से ऊपर उठने को कहता है, अपनी असलियत पर, अपनी सच्चाई और प्रामाणिकता पर आ जाओ। पुराने जमाने में सोचा जाता था कि तन और मन अलग–अलग हैं। आधुनिक मनोविज्ञान ने खोजा है कि मनुष्य एक साइकोसोमेटिक फेनोमिना है, तन और मन एक साथ हैं, शरीर और मन अलग–अलग नहीं है।

हमारी संस्कृति ने हमें विभाजन सिखाया। हमारा शरीर संपूर्ण अस्तित्व से जुड़ा हुआ है, वह विराट का अंग है। हवाओं से जुड़ा है, सांस से जुड़ा है, सूरज की रोशनी से जुड़ा है, शरीर तो अस्तित्व का हिस्सा है लेकिन मन केवल क्षुद्र विचार है और आश्चर्य! यह क्षुद्र मन इस विराट शरीर पर मालकियत जमाना चाहता है।

हमारा मन डायरेक्टर बन जाता है, वह निर्देशन देता है शरीर को कि क्या करो क्या न करो, यह संभव नहीं है। यह छोटा सा मन इस बड़े से शरीर का नियंत्रण नहीं कर सकता। शरीर अपनी प्रकृति से चलता ही चला जाता है और तब एक द्वंद्व और तनाव पैदा होता है और भीतर परेशानी खड़ी हो जाती है।

ऐसा समझो कि चांद का प्रतिबिम्ब झील में बनता है, ठीक वैसे ही हमारे मन के भीतर भी प्रतिबिम्ब बन रहा है सत्य का, वह स्वयं सत्य नहीं है। ईश्वर शब्द ईश्वर नहीं है और घोड़ा शब्द घोड़ा नहीं है लेकिन भाषा हमें उलझन में डाल देती है। हम मन के साथ भाषा के तल पर जीने लगते हैं। वहां से मुश्किल खड़ी हो जाती है, हम चीजों को तोड़कर देखते हैं।

भाषा में जन्म और मृत्यु विपरीत हैं, शब्दकोश में रात और दिन एक–दूसरे के खिलाफ हैं, स्वास्थ्य और बीमारी एक–दूसरे से भिन्न हैं लेकिन वस्तुतः सूर्योदय ही सूर्यास्त बन जाता है। जन्म ही आगे बढ़ते–बढ़ते मृत्यु हो जाती है। जीवन एक प्रवाहमान सरिता है, उसको इसी भांति जो देखेगा वह भाषा से, द्वंद्व से, मन से मुक्त हो जाएगा, उसी तरफ भगवान शिव का इशारा है। शुद्धता, अशुद्धता का विभाजन ही अशुद्ध है। किसी शायर ने लिखा है–

अगर ये जिद है किसी से दुआ सलाम न हो,
तो ऐसी राह से गुजरो जो राहें आम न हों।
सुना है लोग मोहब्बत में जान देते हैं,
खुदा करे मोहब्बत तुम्हारा नाम हो।
खुद को महसूस करना है तो तनहा हो लो,

न सुनो पयाम किसी का और न ही पयाम दो।

बड़ी प्यारी बात कही, खुद को महसूस करना है तो तनहा हो लो, कभी एकांत में चुपचाप मौन में डूब जाओ। अच्छा हो कि साल में पंद्रह–बीस दिन के लिए छुट्टी लेकर किसी निर्जन स्थान में चले जाओ। बिल्कुल एकांत, मौन, कुछ न बोलो, भाषा को कोई महत्व ही न दो। विचारों को साक्षी बनकर देखो, धीरे–धीरे विचार विदा हो जाएंगे।

सारी सिखावन विचारों के माध्यम से समाज ने हमारे भीतर भरी है। क्रमशः साक्षीभाव हमें उसके ऊपर उठा देगा तब स्वयं से परिचय होगा, अपने से मिलन होगा, अपना वास्तविक स्वरूप उजागर होगा। इसमें सबसे महत्वपूर्ण बात है साक्षीभाव।

जीसस क्राइस्ट कहा करते थे, जज दी नाट, न्यायाधीश न बनो। भगवान शिव भी वही कह रहे हैं प्रकरांतर से कि शुद्ध–अशुद्ध का भेद त्यागो, न्यायाधीश न बनो। तुमको किसने जज बनाया, निर्णय करने की जरूरत नहीं है कि क्या ठीक है और क्या गलत है। और अद्भुत शांति घटित होगी।

चीन के संत लाओत्से पर ओशो की एक प्रवचनमाला है , उसमें ताओ उपनिषद के चौबीसवें प्रवचन में अद्वैत की साधना का ज्ञान है, सांस की एक अद्भुत विधि के द्वारा। ओशो कहते हैं, शरीर को, मन को, प्राण को, आत्मा को सबको एक जानो। इंद्रियगत चेतना और आत्मगत चेतना दो अलग–अलग चेतनाएं नहीं हैं, उन दोनों को एक ही जानो तब तन और मन का विभाजन भी विलीन हो जाएगा और एक अद्भुत शांति में प्रवेश होगा।

आज की विधि को करने के लिए हम यही भाव करें कि सारा अस्तित्व, यह प्रकृति या परमात्मा जो भी नाम देना चाहो, उसके द्वारा ही संचालित एवं उसके द्वारा निर्देशित एक नाटक है।

मैं चाहूंगा सभी मित्र आंख बंद कर लें, किसी बुरे व्यक्ति की याद करें। जिसको आप खलनायक की भांति देखते हैं, उसके द्वारा किए गए बुरे कृत्य को याद करें। उसने क्या बुराई की, उस पूरी घटना को विस्तार से देखें। अब उस व्यक्ति के ऊपर से बुरे का लेबल हटा दें, अपने इस निर्णय को वापिस ले लें, वापिस खींच लें, समझें उसी महान डायरेक्टर ने उसको यह रोल दिया था, उसने विलेन का रोल बखूबी निभाया, निंदा का भाव समाप्त कर दें। आप न्यायाधीश की कुर्सी से नीचे उतर आएं और देखें कैसी शांति घटित होती है।

अब एक मिनट के लिए किसी अच्छे व्यक्ति का स्मरण करें, जिसको आप श्रेष्ठ समझते हैं, साधु समझते हैं, महात्मा समझते हैं उसके शुभ कृत्य को, उसके पुण्य को याद करें। अब उस पर से अच्छाई का लेबल हटा दें पुनः अपने निर्णय को वापिस ले लें, बिना किसी धारणा के देखें।

अंत में शिथिल हो जाएं, विश्राम में डूबें। किसी निर्णय की जरूरत नहीं, राम और रावण एक ही कहानी के दो पात्र हैं, प्रकाश और अंधकार एक ही घटना के दो पहलू हैं, हीरो और विलेन के बिना यह जीवन का नाटक न चलेगा। भलाई और बुराई केवल नैतिक धारणाएं

हैं, वास्तव में उनका कोई अस्तित्व नहीं है। न कुछ शुद्ध है, न कुछ अशुद्ध है, शुद्ध और अशुद्ध में विभाजन करने वाली धारणा खुद ही अशुद्ध है।

परमात्मा की त्रिमूर्ति का स्मरण करें, ब्रह्मा यानि सर्जक, विष्णु यानि संचालक और महेश, शिव यानि विध्वंसक। अंग्रेजी शब्द गॉड, ईश्वर के लिए उसके तीन अक्षर प्रतीकात्मक हैं, जी फार जनरेशन, सृजन। ओ फार आपरेशन, संचालन। डी फार डिस्ट्रक्शन, विध्वंस, प्रलय। परमात्मा ही निर्माता है, परमात्मा ही मिटाता है। हम क्यों निर्णय लें और देखें कैसी अद्भुत शांति छा गई। द्वंद्व से मुक्त हुए, शांति ही शांति, आनंद ही आनंद।

जगत के प्रति विभाजन छोड़ा, भीतर का द्वंद्व मिट गया, अद्वैत में प्रवेश हो गया। अनूठी शांति, मौन, जब तक भाव हो इस शांति में, इस द्वंद्वातीत मौन में डूबे रहें।

असमता में समभाव

**मित्र और अजनबी के प्रति, मान और अपमान में,
असमता के प्रति समभाव रखो।**

अजनबी शहर के अजनबी रास्ते
मेरी तनहाई पर मुस्कुराते रहे
मैं बहुत दूर तक यूं ही चलता रहा
तुम बहुत देर तक याद आते रहे।
जहर मिलता रहा जहर पीते रहे रोज मरते रहे रोज जीते रहे
जिंदगी भी हमें आजमाती रही और हम भी उसे आजमाते रहे।
जख्म जब भी कोई जहनो दिल पर लगा
जिंदगी की तरफ इक दरीचा खुला
हम भी गोया किसी साज के तार हैं
चोट खाते रहे गुनगुनाते रहे।

सख्त हालात के तेज तूफान में घिर गया था हमारा जुनूने वफा
हम चरागे तमन्ना जलाते रहे वो चरागे तमन्ना बुझाते रहे।

कहीं से भी जागो! सुख में, दुख में। मित्रता में, अजनबीपन में, शत्रुता में। भूख में, तृप्ति में। शिव सब प्रकार से जागने का, स्वयं को पाने का उपाय बता रहे हैं। चाहे कोई मित्र हो, चाहे कोई अजनबी हो, चाहे कोई दोस्त हो, चाहे दुश्मन हो हर जगह से स्वयं की ओर जाने का एक रास्ता खुलता है। जख्म जब भी कोई जहनो दिल पर लगा, जिंदगी की तरफ इक दरीचा खुला...कहीं से भी जागना हो सकता है, कहीं से भी स्वयं पर आना हो सकता है। नासमझ आदमी हर चीज में भटक जाता है, भूल जाता है, समझदार व्यक्ति, विवेकपूर्ण व्यक्ति हर तरफ से अपनी तरफ आ जाता है। मित्र का भी उपयोग कर लो दर्पण की तरह, शत्रु का भी उपयोग कर लो दर्पण की तरह, अजनबी का भी उपयोग कर लो दर्पण की तरह। सबमें हम स्वयं ही प्रतिबिम्बित हो रहे हैं।

भगवान शिव अद्भुत विधि दे रहे हैं आज विज्ञान भैरव तंत्र में। कहते हैं हे देवी! मित्र और अजनबी के प्रति, मान और अपमान में, असमता के प्रति समभाव रखो। समताभाव धर्म के सूत्रों में से अद्भुत सूत्र है। ओशो की एक किताब है ध्यान सूत्र, उसमें वे तीन मुख्य भावों को साधने की बात कहते हैं। उसमें एक समताभाव भी है। इन तीन भावों को अगर आप साध लें तब अद्भुत घटना घट जाए। एक समताभाव ही अपने आप में पर्याप्त है। चीजों को समान दृष्टि से देखें। आज जिन्हें तुम शत्रु कहते हो जरा याद करो, कभी वे तुम्हारे घनिष्ठ मित्र थे और आज शत्रु में परिवर्तित हो गए। और आज जिन्हें तुम मित्र कहते हो वे संभावित शत्रु हैं। दोनों में भेद क्या है? कुछ भी तो भेद नहीं। मित्र शत्रु बन जाते हैं, शत्रु मित्र बन जाते हैं। अभी जो आदमी अजनबी है हो सकता है थोड़ी देर बाद तुम्हारा बहुत गहरा दोस्त बन जाए या दुश्मन बन जाए। और कितने मित्र और शत्रु जो वर्षों पहले मित्र और शत्रु थे आज तुम्हारे लिए अजनबी जैसे हो गए। इन तीनों कैटेगरीज में भेद कहां है? आपस में एक-दूसरे में परिवर्तित हो रहे हैं क्यों न उनको ऐसा ही जानो, ऐसा ही देखो और तब एक अद्भुत समभाव पैदा होगा।

मैंने मुल्ला नसरुद्दीन से पूछा कि स्त्रियां आपको नमस्कार करती हैं, आप जवाब क्यों नहीं देते? उन्होंने कहा, बीस साल पहले एक स्त्री को जबाव दिया था, उसका फल अभी तक भोग रहा हूं। अब और नहीं! अब मैं जवाब ही नहीं देता! एक दफा भूल कर ली, वही बहुत है! अब तो इससे ही किसी तरह बच जाऊं तो काफी है! परन्तु दिखता नहीं, कोई आशा भी नजर नहीं आती! यह मेरी पत्नी तो मुझे मारकर ही मरेगी!

आज तुम जिसे पत्नी कहते हो वो कभी तुम्हारी प्रेमिका थी, आज जो तुम्हारे पतिदेव हैं वो कभी तुम्हारे प्रेमी थे। तुमने क्या-क्या सोचा था उस व्यक्ति के विषय में वैसा कुछ भी ना हुआ। अभी पश्चिम में पति-पत्नी के ऊपर एक किताब लिखी गई है उसका नाम है 'इंटीमेट

एनीमीज़' अंतरंग शत्रु। एक ही छत के नीचे रहते हैं, एक ही घर में रहते हैं और हैं पक्के दुश्मन एक–दूसरे के। शुरूआत हुई थी दोस्ती पर और दुश्मनी पर समापन हो गया। इसका ठीक उल्टा भी होता है कितने लोगों की दुश्मनी से शुरूआत होती है और दोस्ती पर समापन हो जाता है। इन दोनों में भेदभाव है कहां? अभी तुम जिस पत्नी से कह रहे हो कि एक क्षण भी तुम्हारे बिना जी न सकूंगा और अगर घर की सफाई करते हुए पुराने कागजातों में कोई प्रेमपत्र मिल जाए जो तुम्हारी पत्नी के नाम उसके किसी प्रेमी ने लिखा था और पत्नी छुपाकर रखी हुई है तब अभी ही तुम अपनी पत्नी की जान लेने के लिए तैयार हो जाओगे। क्षण भर पहले कह रहे थे कि तेरे बिना जी न सकूंगा और अब कहोगे कि तेरे साथ जी न सकूंगा। देर कितनी लगती है बदलने में। तो मित्र में संभावित शत्रु छुपा है, शत्रु में संभावित मित्र छुपा है, अजनबी दोनों के बीच में है। किसी भी दिशा में वह जा सकता है, कोई भी भाव तुम्हारा उसके प्रति बन सकता है। जब एक बात समझ में आ गई कि ये भाव का खेल हमारा ही खेल है तब क्यों न हम समभाव रखें। आज की विधि इसी से संबंधित है। जो व्यक्ति समताभाव को साध लेगा एक दिन वह भावातीत हो जाएगा। याद रखना, मित्रभाव और शत्रुभाव से हम छलांग न लगा सकेंगे, पहले समताभाव में आओ। समताभाव के द्वारा फिर भावातीत अवस्था, एक ट्रांसेंडेंटल प्वाइंट मिल जाएगा और वहां पर जाना हो सकेगा। और वह भावातीत अवस्था स्वयं में स्थित होने की अवस्था है। दुर्भाव और सद्भाव की परिभाषा ओशो बड़े प्यारे ढंग से करते हैं। वे कहते हैं– सद्भाव वे हैं जो हमारा स्वभाव हैं। जो बाहर की किसी परिस्थिति से पैदा नहीं होते। और दुर्भाव वे हैं जो दूसरे के कारण, परिस्थिति के कारण हममें उत्पन्न होते हैं। जब हम किसी के प्रति प्रेम से भरते हैं अथवा शत्रुता से भरते हैं दोनों ही स्थितियों में हमारा दोस्ती का भाव या दुश्मनी का भाव उस व्यक्ति के कारण हममें उत्पन्न हुआ। वो प्रभाव है, पर–भाव है, दूसरे से आया। फिर हमारा स्वभाव क्या है? जरा सोचो, अगर दुनिया में कोई न हो, तीसरा विश्वयुद्ध हो और सब समाप्त हो जाएं, संयोग से तुम अकेले ही बचो, क्या तुम्हारे मन में तब भी किसी के प्रति प्रेमभाव होगा, क्या किसी के प्रति द्वेषभाव होगा? नहीं, तब तुम समभाव में होओगे क्योंकि अब कोई दूसरा व्यक्ति ही नहीं है। यह समभाव हमारा स्वभाव है। विज्ञान भैरव तंत्र की सारी विधियां स्वयं तक पहुंचने की विधियां हैं, अपने स्वभाव में स्थित होने की विधियां हैं। इसके पहले कि हम स्वभाव में स्थित हों समभाव साधना अनिवार्य है। भगवान शिव कह रहे हैं मित्र और अजनबी के बीच, मान और अपमान में समभाव साधो। कोई तुम्हें सम्मान देता है, याद रखना यही व्यक्ति एक दिन तुम्हें अपमान देगा। जिंदगी में एक संतुलन का नियम है। अगर यह व्यक्ति अपमान नहीं देगा तो कोई और देगा, कोई न कोई अपमान देगा, कहीं से संतुलन बनेगा। और यह व्यक्ति जो तुम्हें सम्मान दे रहा है प्रकरांतर से यह दूसरे का अपमान कर ही दिया। जब कोई आप से कहता है कि आप बहुत सुंदर हैं इस वक्तव्य में यह बात शामिल है कि अन्य लोग कुरूप हैं। इस सम्मानजनक स्टेटमेंट में दूसरों का अपमान छिपा है। जब कोई कहता है कि आपका गला बड़ा प्यारा है, आप बहुत मीठा गाते हैं

इसमें यह बात निहित है कि अन्य लोगों के गले खराब हैं और वे ठीक नहीं गाते। सुनने में लग रहा है कि यह व्यक्ति एक व्यक्ति का सम्मान कर रहा है किंतु साथ ही यह बहुत लोगों का अपमान भी कर दिया। सम्मान में अपमान छुपा है और अपमान में सम्मान भी छुपा है। जब कोई आपसे कहे कि आपका चेहरा खूबसूरत नहीं है इसका अर्थ हुआ कि वह दूसरों का सम्मान कर रहा है, दूसरों के चेहरे खूबसूरत हैं उनकी तुलना में आप खूबसूरत नहीं हैं। अपमान में सम्मान छिपा हुआ है। और जो व्यक्ति आपका सम्मान कर रहा है अब कालान्तर में कभी–न–कभी वह आपका अपमान करेगा। जो व्यक्ति आज आप पर भरोसा कर रहा है यही व्यक्ति एक दिन विश्वासघात करेगा।

मैंने सुना है मुल्ला नसीरुद्दीन ने एक व्यक्ति को धोखा दे दिया, कुछ पैसे उधार लिये थे फिर वापिस न दिए। मुकदमा चला, जज ने पूछा कि नसीरुद्दीन, ये आदमी गांव का बिल्कुल सीधा, सरल, साधु आदमी है, महात्मा है, इससे सरल कोई आदमी नहीं, तुम्हें भी बस यही मिला था धोखा देने को? नसीरुद्दीन ने कहा कि और क्या करूं हुजूर, बाकी अन्य लोग तो इतने चालाक हैं कि वे मुझे ही धोखा दे जाते हैं। यही एक आदमी है बेचारा जिसको मैं धोखा दे पाता हूं। और नसीरुद्दीन ने कहा कि अगर आप मुझे सजा दें तो याद रखिएगा, जितनी सजा मुझे दें उससे ज्यादा सजा इस आदमी को दें। अगर मुझे दो महीने की जेल करा रहे हैं तो इसको चार महीने की जेल होनी चाहिए। जज ने पूछा क्यों? नसीरुद्दीन ने कहा कि पहला कसूर इसका है, इसने मुझ पर भरोसा क्यों किया। अगर ये मुझपर विश्वास न करता तो मैं इसके साथ विश्वासघात भी नहीं कर सकता था, पहला कसूरवार ये है, मैं तो नंबर दो का अपराधी हूं। अगर ये आदमी इस प्रकार से भरोसा करता रहेगा तब कल कोई और इसको धोखा देगा, असली कसूरवार ये है और आप इसको सजा दो। जहां विश्वास है वहां विश्वासघात होगा, जहां सम्मान है वहां अपमान होगा। क्यों न हम इन सारी परिस्थितियों में समभाव रखें। इस विधि को समझाते हुए परमगुरू ओशो कहते हैं ''अपने मित्र को अजनबी की भांति देखो, वह अजनबी है ही और डरो मत। हम अजनबी से बहुत डरते हैं इसलिए हम भूल जाते हैं कि मित्र भी अजनबी है। अगर तुम अपने मित्र में भी अजनबी को देख सको तो तुम्हें कभी निराशा नहीं होगी, क्योंकि अजनबी से तुम्हें अपेक्षा नहीं होती। मित्र के संबंध में तुम सदा निश्चित होते हो कि तुम उससे जो कुछ चाहोगे वह पूरा करेगा, इससे अपेक्षा पैदा होती है और फिर उसी से निराशा जन्मती है।'' हमेशा स्मरण रखो कि प्रत्येक व्यक्ति अजनबी है, मत भूलो कि तुम्हारा घनिष्टतम मित्र भी अजनबी है, दूर से भी दूर है। अगर यह भाव, यह ज्ञान घटित हो जाए तब तुम अजनबी में भी मित्र को देख सकते हो। ठीक उल्टा भी संभव है, यदि मित्र अजनबी हो सकता है तो अजनबी भी मित्र हो सकता है। और अगर यह समभाव प्रगाढ़ हो जाए तो एक वृक्ष भी फिर तुमसे दूर नहीं है। तब एक पत्थर भी बहुत अलग नहीं है। यूं तो एक पत्थर कितना अजनबी है कि जिसके साथ तुम्हारा कोई तालमेल नहीं, कोई संवाद की संभावना नहीं किन्तु वहां भी वही अस्तित्व है। पत्थर का भी अस्तित्व है, वह भी अस्तित्व

का अंश है, हम भी अस्तित्व के अंश हैं, वह भी जगत के होने में भागीदार है हमारे ही समान। अस्तित्व में हम मिलते हैं, यह मिलन ही मित्रता है। व्यक्तित्व में हम भिन्न हैं, अभिव्यक्ति में हम भिन्न हैं किन्तु तत्वतः हम एक ही हैं। अभिव्यक्ति के रूप में हम अजनबी हैं, उस तल पर हम एक-दूसरे के कितने ही करीब आ जाएं किन्तु दूरी बनी ही रहती है, तुम पास-पास बैठ सकते हो, एक-दूसरे को आलिंगन कर सकते हो लेकिन इससे निकट आने की संभावना नहीं है। जहां तक तुम्हारे बदलते व्यक्तित्व का संबंध है तुम एक कभी नहीं हो सकते, तुम कभी समान नहीं हो सकते, हमेशा भिन्न हो, हमेशा अजनबी हो। उस तल पर मिलन हो ही नहीं सकता क्योंकि मिलने के पहले ही तुम बदल जाते हो, मिलन की कोई संभावना नहीं है। जहां तक शरीर और मन का संबंध है मिलन असंभव है, केवल आभास मात्र है। क्योंकि इसके पहले कि तुम मिलो तुम बदल जाते हो, वह दूसरा व्यक्ति बदल जाता है। जब तुम देख पाओगे कि मित्र भी अजनबी है और अजनबी भी मित्र है तब तुम असमता के बीच समभाव साध सकोगे। परिधि बदलती रहेगी किन्तु केन्द्र में, प्राणों में वही भाव बने रहते हैं। अद्भुत है आज की यह विधि। इसे करने के लिए छोटा सा प्रयोग करेंगे।

सब साधक खड़े हो जाएं और अपने एक-एक मित्र के पास जाएं और उससे ऐसे मिलें प्रेमपूर्वक कि वह आपका घनिष्ठतम मित्र है। सामने वाले व्यक्ति का आदर करें, सम्मान व्यक्त करें और भीतर ख्याल रखें कि जो व्यक्ति सम्मान दे रहा है एक दिन वही अपमान भी देगा, भीतर अछूते और अस्पर्शित बने रहें।

अब किसी ऐसे व्यक्ति के पास जाएं जो आपके लिए अजनबी है, अपरिचित है। उसके सम्मुख जाकर खड़े हो जाएं और उसे इस भाव से देखें कि इसे मैं जानता तो नहीं, इसका नाम, पता, ठिकाना, प्रोफेशन हमें मालूम नहीं, ऊपर से व्यवहार तो भिन्न होगा मित्र और अजनबी के साथ किन्तु भीतर से समभाव वही का वही हो।

अब एक तीसरे व्यक्ति के पास जाएं जिसे आप नफरत करते हैं, जिसे आप शत्रु मानते हैं। क्रोध और द्वेषभाव से भरकर उसे देखें और अचानक जागृत हों कि यह शत्रु कभी मित्र था अथवा भविष्य में पुनः मित्र हो सकता है। इस शत्रु के प्रति भी अजनबी का भाव ले आएं।

अब अंततः शिथिलीकरण- अपनी जगह वापस लौट आएं। आंख बंदकर मान और अपमान में समभाव का अहसास करें। जिंदगी में विभिन्न असमताओं के प्रति समभाव रखें। क्या अंतर पड़ता है आदर या अनादर से? प्रेम या घृणा से? मित्र मिलने से खुशी होती है। मित्र के बिछुड़ने से उदासी होती है। शत्रु के मिलने से दुख होता है। शत्रु के बिछुड़ने से सुख होता है। कुल मिलाकर अपने और पराए बराबर मात्रा में आह्लाद एवं विषाद के बहाने बनते हैं। अपने पर लौट आएं। बाह्य घटनाओं से अप्रभावित- जल में कमलवत हो जाएं। किसी ने आदर दिया कि अनादर, प्रेम दिया कि घृणा, क्रोध किया कि करुणा, अंततः सब बराबर हो जाता है। अपने में थिर हो जाएं, अपने में डूब जाएं, यही भगवान शिव की इस विधि का लक्ष्य है।

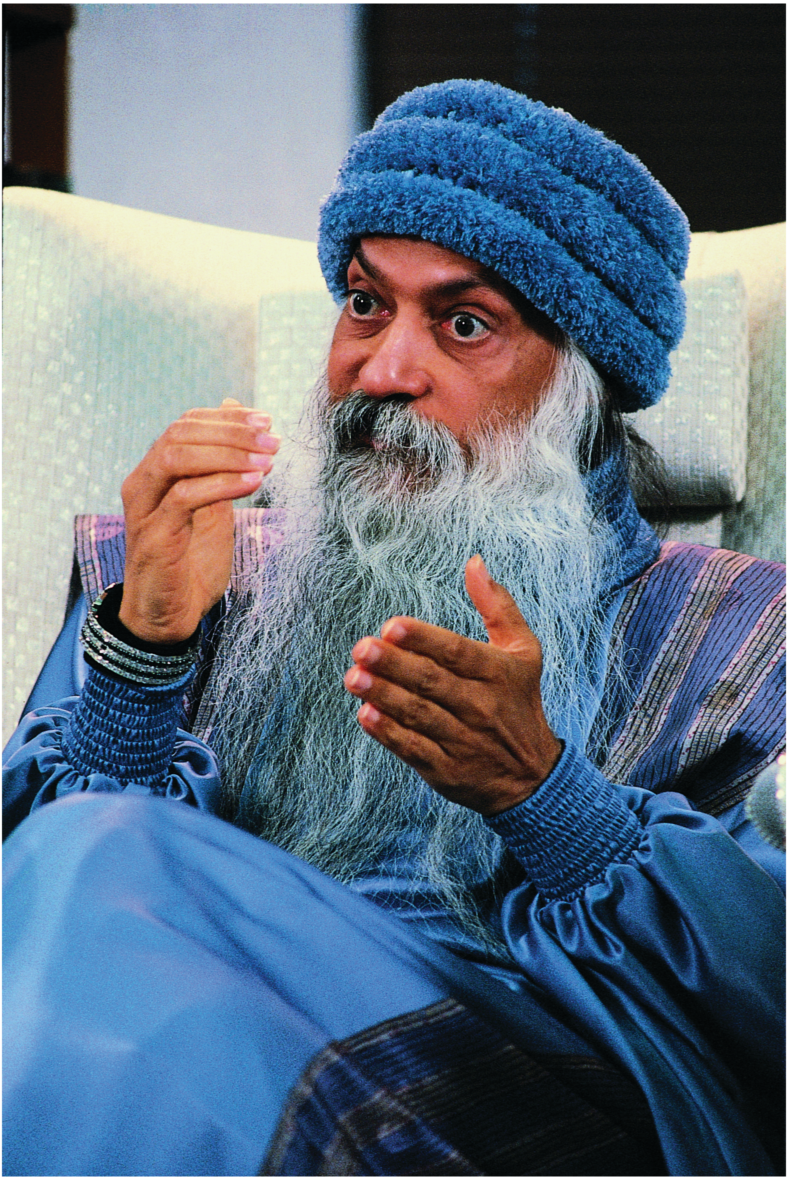

परिवर्तन का विसर्जन

यह जगत परिवर्तन का है, परिवर्तन ही परिवर्तन का है। परिवर्तन के द्वारा परिवर्तन को विसर्जित करो।

उर्दू के प्रसिद्ध शायर अनवर ने कहा है–

मैं नजर से पी रहा हूं ये शमां बदल न जाए,
न झुकाओ तुम निगाहें कहीं रात ढल न जाए।
अभी रात कुछ है बाकी न उठा नकाब साकी,
तेरा रिंद गिरते गिरते कहीं फिर संभल न जाए।
मेरे अश्क भी हैं इसमें ये शराब उबल न जाए,
मेरा जाम छूने वाले तेरा हाथ जल न जाए।
मेरी जिंदगी के मालिक मेरे दिल पे हाथ रख दे,
तेरे आने की खुशी में मेरा दम निकल न जाए।
मेरी मैयत उठाने वालो मुझे जल्दी ले चलो तुम,
कहीं उनकी सिसकियों से मेरी आंख खुल न जाए।

मुझे फूंकने के पहले मेरा दिल निकाल लेना,
ये किसी की है अमानत मेरे साथ जल न जाए।
मैं बना तो लूं नशेमन किसी शाखे आशियां पर,
कहीं साथ आशियां के ये चमन भी जल न जाए।
इसी खौफ से नशेमन न बना सका मैं 'अनवर',
कि निगाह अहले गुलशन कहीं फिर बदल न जाए।
मैं नजर से पीं रहा हूं ये शमां बदल न जाए।

दुनिया में सब चीज बदल रही है। न केवल दूसरों की नजर बदल रही, तुम्हारी नजर भी बदल रही है। शमां भी बदल रही है, ये रात ढल रही है, गिरने वाले सम्हल रहे हैं, बड़े–बड़े सम्हलने वाले गिर रहे हैं। हाथ जल रहे हैं, दम निकल रहे हैं, किसी की आंख खुल गई, किसी की आंख लग गई। कोई विदा हो गया, किसी का जन्म हुआ, अमानतें जल रही हैं, आशियां के साथ चमन जल रहे हैं।

निगाह अहले गुलशन कहीं फिर बदल न जाए, मैं नजर से पीं रहा हूं ये शमां बदल न जाए।

हमारी सारी जिंदगी का दुख क्या है? गौर से विश्लेषण करना, इस बदलते हुए जगत में हम चीजों को स्थिर करना चाह रहे हैं। युवावस्था आई, हम चाहते हैं ये सदा–सदा रहे, सूरज उगा, हम चाहते हैं अब शाम न हो, ऐसा कैसे हो सकता है। सारा जगत परिवर्तनशील है, सब चीजें बदल रही हैं। इस बदलते हुए संसार में हम चाहते हैं चीजों को स्थिर कर देना, रोक देना और याद रखना अगर चीजें रुक गई, ये तो अच्छा है कि हमारी कोई सुनता नहीं, हमारे करने से कुछ होता नहीं, अगर चीजें रुक जाएं तो सड़–गल जाएंगी, जरा सोचो नदी का बहता हुआ पानी अगर हम उसे रोक दें, फिर ये नदी, नदी ही नहीं रह जाएगी, एक गंदा सा तालाब हो जाएगी, कीचड़ हो जाएगी। सरिता बह रही है, इसी में उसकी जीवंतता है। प्रवाह का नाम ही सरिता है और हम सरिता को रोक देना चाह रहे हैं। फिर हम कहेंगे प्रवाह गायब हो गया, फिर हम दुखी होंगे। दो प्रकार के दुख हैं हमारे, पहला हम बदलती चीजों से राजी नहीं हैं, हम उन्हें रोक देना चाहते हैं और अगर रोकने में हमें सफलता मिल गई तब हम फिर बैठ के रोएंगे कि चीजें मर गई, मुर्दा हो गई, कुछ बचा ही नहीं। नदी को तुमने रोक लिया तो फिर नदी बची ही नहीं, वही हम निरंतर कर रहे हैं।

बेटा बड़ा हो गया, माँ उससे अभी भी वही उम्मीद कर रही है, जो बचपन में करती थी। इस बेटे को उंगली पकड़ के चलना उसने सिखाया, ये बेटा सब प्रकार से उसपर निर्भर था, हर चीज उससे पूछ कर करता था। अब बेटा बड़ा होने लगा, माँ का दुख शुरू हो गया। अगर बेटा बड़ा न हो, मेंटली रिटार्डेड रह जाए तब भी माँ दुखी होगी कि लड़का बिल्कुल बुद्धू रह गया, अपनी बुद्धि से कुछ कर ही नहीं सकता और उसकी बुद्धि विकसित हो जाए तब नेचुरली वो अपने माता-पिता से पूछ-पूछ के कदम नहीं उठाएगा, वो अपनी मर्जी से चलेगा। तब फिर लोग नाराज होंगे कि बेटा आज्ञाकारी नहीं, हमारी बात सुनता ही नहीं। तो जरा गौर से देखो तुम चाहते क्या हो? क्या तुम चाहते हो तुम्हारा बेटा बुद्धिमान हो, विवेक पूर्ण हो, प्रतिभाशाली हो तो वो तुम्हारी आज्ञा नहीं मानेगा, तुम्हारी सलाह नहीं लेगा। अगर तुम चाहते हो बेटा बिल्कुल नालायक और मूर्ख, अविकसित बुद्धि का हो, तब तुम्हारा आज्ञाकारी होगा, तुम पर निर्भर होगा, लेकिन तुम इन दोनो ही हालत में प्रसन्न न होगे। अपने मन के इस राज को पकड़ो, वो तुम्हें दोनो हालत में खुश ही नहीं होने देता। इस तरफ गढ्ढा, उस तरफ खाई।

एक युवक युवती प्रेम में पड़ते हैं। दोनो स्वतंत्र हैं अभी, और स्वतंत्रता की वजह से उनकी जीवंतता है, उनमें जान है, प्राण हैं। जल्दी ही वे विवाह कर लेंगे, एक दूसरे के मालिक बन जाएंगे, एक दूसरे की स्वतंत्रता को नष्ट कर देंगे। नदी को रोक करके उन्होंने तालाब बना दिया। तब वे दुखी होंगे कि हमने जिस व्यक्ति को चाहा था, ये वो न निकला, ये तो कोई और ही है, बदल गया। तुमने ही तो बांध बनाया नदी पर अब तुम कहते हो नदी बदल गई। दोनो हालत में दुख मिलेगा। समझदार व्यक्ति, विवेकपूर्ण व्यक्ति जीवन के परिवर्तन को स्वीकार लेता है कि चीजें बदल रही हैं, इस बदलने पर ही उनकी एलाइवनेस है। आज का सूत्र इसी संदर्भ में समझना। विज्ञान भैरव की विधि नंबर 67 भगवान शिव कहते हैं भवानी से, हे देवी! यह जगत परिवर्तन का है, परिवर्तन ही परिवर्तन का है। परिवर्तन के द्वारा परिवर्तन को विसर्जित करो। ये जो रेजिस्टेंस टू चेंज, परिवर्तन के प्रति हमारा प्रतिरोध है, उसे जाने दो और चीजें अगर थिर और स्थिर हो गई तो बहुत ही उबाऊ हो जाएंगी, बोरडम पैदा हो जाएगी।

राजा मिदास की कहानी सुनी होगी आपने, जिसने भगवान की तपस्या की, उन्होंने कहा वरदान मांग ले, मिदास ने बड़ी होशियारी की, उसने कहा कि ठीक, ऐसा मुझे वरदान दें कि मैं जो छुऊं, जो भी स्पर्श करूं, वह सोने का हो जाए। वरदान उसे मिल गया, बाद में पता चला कि कैसी नासमझी हो गई। बड़े-बड़े होशियार बड़ी मूर्खता कर जाते हैं। उसने जाके अपने बच्चे के सिर में हाथ रखा, बच्चा सोने का हो गया, उसने पत्नी को स्पर्श किया पत्नी सोने की मूर्ति हो गई। यहां तक तो ठीक, असली मुसीबत तब आई जब वह भोजन करने

बैठा, रोटी सोने की हो गई, चावल सोने के कण बन गए, पानी पीने के लिए उठाया, पानी ठोस सोना बन गया। मिदास भूखा–प्यासा मरा। अगर चीजें रुक जाएं, स्थिर हो जाएं जैसी थीं वहीं, तब एक मरघट बन जाएगा, फिर वो जीवन नहीं होगा। जीवन परिवर्तनशीलता का नाम है। इसलिए परिवर्तनशीलता के साथ राजी हो जाओ। यहां तक कि अडिग और दृढ़ दिखने वाले पर्वत भी प्रवाहमान हैं। पानी का प्रवाह नदी में तो हमें दिखाई देता है। ओशो कहते हैं, हिमालय भी एक प्रवाह है। हिमालय पत्थरों की नदी है, चट्टानों की नदी है। सागर की लहर क्षण भर को उठती, गिर जाती। हिमालय की लहर उठने में लाखों–लाखों साल लगे, गिरने में भी लाखों–लाख साल लगेंगे। भूगर्भविद् कहते हैं कि पर्वत भी बनते हैं और बिखरते हैं। ये जरा लंबे समय चलने वाली लहर है, लेकिन शाश्वत कुछ भी नहीं। ये चट्टानों की लहर है। सब चीजें निरंतर बदल रही हैं।

गौतम बुद्ध के जीवन की घटना बड़ी प्रीतिकर है। जिस रात वे सन्यास लेने जा रहे थे घर छोड़कर, उसी दिन उनके घर बेटा पैदा हुआ था। रात विदा होते हुए उनके मन में आया कि एक नजर अपनी पत्नी को देख लूं, एक नजर अपने बेटे पर डाल लूं। कमरे तक गए और धीरे से दरवाजा खोला, फिर दरवाजा बंद कर दिया, मन में ख्याल आया कि सब परिवर्तनशील है, देखना क्या। जिस बेटे को अभी मैं देख रहा हूं, दुबारा तो ऐसा कभी मिलेगा नहीं। बारह साल बाद बुद्ध वापिस लौटे अपने घर, बारह साल में सब बदल गया। बेटा किशोर बन गया। बुद्ध ने सोचा, देखने का लाभ क्या? देखना ही है तो उसे देखूं जो शाश्वत है, सनातन है, चुपचाप दरवाजा बंद करके वे चले गए।

शाश्वत की खोज, इस परिवर्तन शील को देखो तो शाश्वत की खोज शुरू होती है। शुरूआत में भूल हम करेंगे, बाहर के जगत में शाश्वत को हम खोजेंगे, वहां वो न मिल सकेगा, क्योंकि वहां वह है नहीं। धीरे–धीरे ख्याल आएगा कि शाश्वत मैं स्वयं हूं। वह सनातन तत्व मैं खुद ही हूं और तब बड़ी अद्भुत घटना घटेगी, परिवर्तन के इस कंट्रास्ट में भीतर स्वयं का उद्घाटन होगा। जरा ख्याल करो कभी तुम बच्चे थे, फिर जवान हुए, प्रौढ़ हुए, वृद्ध होने लगे, लेकिन तुम्हारे भीतर कोई एक तत्व तो ऐसा है जो बचपन में भी मौजूद था, किशोर अवस्था में भी था, जवानी में था और बुढ़ापे में भी है। वर्ना ये याद किसे होती कि मैं कभी बच्चा था। वह तुम्हारी चेतना है, वह तुम स्वयं हो, ऊपर–ऊपर तुम्हारे कपड़े बदलते चले गए। वस्त्र की तरह परिवर्तन होता गया। परिस्थितियां बदलती चली गई, मनःस्थितियां बदलती चली गईं।

राजनीतिक और धार्मिक व्यक्ति की परिभाषा समझना। राजनीतिक वह है जो परिस्थितियों का परिवर्तन करता है, धार्मिक वह है जो परिस्थितियों को परिवर्तित होता हुआ

देखता है और उस देखने वाले को देखता है। वह देखने वाला स्वयं अपरिवर्तनशील है। इस सूत्र पर प्रवचन देते हुए ओशो ने एक बड़ी अद्भुत बात कही, धर्मपुरुष भी और ज्ञानीपुरुष भी दो प्रकार के होते हैं। सुनो ओशो के ये अद्भुत वचन, जरा गौर से पकड़ना। बुद्धों की भी दो कोटियां हैं, कोई कह सकता है कि संसार को बदलने की जरूरत नहीं है, लेकिन अपने को बदलने की जरूरत तो है। वह भी परिवर्तन में विश्वास करता है, वह संसार को बदलने में तो नहीं लेकिन अपने को रूपांतरित करने में भरोसा करता है। किंतु तंत्र कहता है कि किसी को भी बदलने की जरूरत नहीं है, न स्वयं को और न संसार को। रहस्य का, अध्यात्म का यह गहनतम तल है। यह उसका अंतर्तम केन्द्र है। तुम्हें किसी को भी बदलने की जरूरत नहीं है, न संसार को, न खुद को। तुम्हें इतना ही जानना है कि सबकुछ अपने आप बदल ही रहा है और तुम्हें उस बदलाहट के साथ बहना है, उसे परिपूर्णरूप से स्वीकार करना है।

जब तुम विश्रामपूर्ण होते हो तो बदलाहट की पृष्ठभूमि में विपरीत दिखाई पड़ता है। परिवर्तन की पृष्ठभूमि में, बदलाहट के बैक ग्राउण्ड में, तुम्हें सनातन का, शाश्वत का बोध होता है। अगर तुम संसार को या अपने को बदलने के प्रयत्न में लगे रहो तो तुम भीतर उस छोटे से अकंप, स्थिर, ठहरे हुए केन्द्र को न देख पाओगे जो कि तुम स्वयं हो। तुम बदलाहट से इतने घिरे हो कि तुम उसे नहीं देख पाते जो तुम्हारा स्वयं का होना है, सब तरफ परिवर्तन है। यह परिवर्तन पृष्ठभूमि बन जाता है, कंट्रास्ट बन जाता है और तब तुम शिथिल होते हो, विश्राम में होते हो, परिवर्तन की आकांक्षा से भरे हुए नहीं, तब तुम्हारे मन में कोई भविष्य नहीं होता, भविष्य के ख्याल नहीं होते, तुम यहां और अभी, वर्तमान में होते हो। इस क्षण में अचानक अपने भीतर उस बिंदु का बोध होता है जो कभी नहीं बदलता। इसलिए भारत में क्रांतिकारी पैदा नहीं हुए, भारत में कोई विद्रोह नहीं हुआ, रिवल्यूशन नहीं हुआ। बाहर की परिस्थितियों को बदलने में हमारे मनीषियों ने कोई रस न लिया और तंत्र की गहरी समझ तो कहती है, आत्मरूपांतरण की बात को ही भूल जाओ। ये गहरी से गहरी बात है, अपने को बदलने की भी कोशिश ही न करो। बदलने की सारी कोशिश हिंसा है, कठोरता है, जस्ट रिलैक्स। जैसे हो, अपने होने का आनंद लेना शुरू करो। आओ आज की इस विधि का माँ ओशो प्रिया के साथ प्रयोग करते हैं। धन्यवाद।

माँ ओशो प्रिया–

आज के ध्यान में आपका स्वागत है। खड़े हो जाएं, आंखें खोलकर नृत्य में डूबना है, इस गीत के साथ। ये जीवन है एक

बहती धारा। न घाट है, ना बाट है, न कोई किनारा। बैठ जाएं, आंखें बंद कर लें, अपने बचपन को याद करें। अपने बचपन को फिर से एकबार जिएं। कहां गया वह बचपन, जिंदगी की नदी उस घाट से आगे बढ़ गई। अब अपनी युवावस्था को याद करें। जीवन की सरिता की इस प्रवाह में यह किनारा भी आया और चला गया या चला जाएगा। बिल्कुल शिथिल छोड़ दें अपने आप को। रीढ़ की हड्डी सीधी। यह जगत परिवर्तनशील है, जब हम इस परिवर्तनशील जीवन को यथावत स्वीकार कर लेते हैं, तब जीवन में शांति ही शांति आ जाती है। आज का ध्यान पूरा हुआ। हरि ओम् तत्सत्।

विशेष ज्ञान और कृत्य

जैसे मुर्गी अपने बच्चों का पालन–पोषण करती है, वैसे ही यथार्थ में विशेष ज्ञान या विशेष कृत्य का पालन–पोषण करो।

मुस्कान के इरादे अश्कों में ढल गए।
आए बहार बनके खिजां बनके ढल गए।।
सारे जहां को रोशन कर सकते जिस शमां से,
झुलसा दिया गुलशन और खुद भी जल गए।
हकीकत न जान पाए गम और खुशी की हम,
थे गुल गले लगाए शूलों से छल गए।
डूबे कभी यादों में खोए कभी ख्वाबों में,
दो कलों में आज के बरबाद पल गए।

नजरें तो टिकी हुई थीं चांद और सितारों पर,
अपने ही आंगन की जमीं पर फिसल गए।
दूर-दूर खोजा करतीं जिन्हें निगाहें,
अफसोस बहुत पास से वे मेरे निकल गए।
मालूम ये न चल सका कब मौत आ गई,
यूं हौले-हौले हाथ से बरसों निकल गए।
किस्मत को दोष दें या गफलत को अपनी यारो,
कई रूमी-मंसूर इसी जहां में संभल गए।

कोई अलहिल्लाज मंसूर, कोई जलालुद्दीन रूमी, कोई गौतम बुद्ध, कोई वर्धमान महावीर, कोई संत कबीर, कोई ओशो इसी जहां में संभल जाता, जाग जाता और हम यहां सोए-सोए जीते। और इसका कारण क्या है? इसका कारण है हम यथार्थ में नहीं जीते, हम सपनों में जीते हैं, अतीत में जीते हैं। डूबे कभी यादों में, खोए कभी ख्वाबों में, दो कलों में आज के बरबाद कर गए। ये जो दो कल हैं, एक बीत गया कल, एक आने वाला कल, हम इनमें जीते हैं। बीत गया कल, बीत गया, अब वो है नहीं। आने वाल कल अभी आया नहीं, वो भी है नहीं। हम नहीं है में जीते हैं, दि पास्ट इज नो मोर एन्ड फ्युचर इज नॉट येट, केवल वर्तमान, यथार्थ में केवल वर्तमान है और वर्तमान से हम चूक रहे हैं।

कैसे आत्मज्ञान हो, कैसे हम वर्तमान में आएं, इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण है इस बात को समझना कि हम वर्तमान से चूक कैसे रहे हैं। सबसे पहला कारण हम सपनों में जीते हैं, आशाओं में जीते हैं। भविष्य की आशा, ऐसा होगा, वैसा होगा। कल्पनाशील हमारा मन भविष्य में छलांग लगा लेता है। इस प्रकार हम वर्तमान से चूकते हैं। दूसरा तरीका वर्तमान से चूकने का, हम अतीत की स्मृतियों में डोलते रहते हैं, जो कि अब गुजर चुका, जो एक मृत, पास्ट है बस, जो है कहीं भी नहीं लेकिन हम अपने मन में उसे संजोए हुए हैं और हम उसी में जी रहे हैं। और इस प्रकार हम वर्तमान से चूक रहे हैं, परमात्मा से चूक रहे हैं, आत्मज्ञान से चूक रहे हैं। तीसरा कारण चूकने का, हमने अपने बारे में एक स्वयं की प्रतिमा बना रखी है जो कि नितांत झूठी है। केवल हम ही उसको मानते हैं, कोई उसे नहीं मानता और हम उसी को सत्य मानकर जीते हैं। इस प्रकार हम हमेशा ही वास्तविकता से अनभिज्ञ रह जाते हैं।

मैंने सुना है, एक युवक अपनी प्रेमिका से कह रहा था कि कल रात मैंने एक बहुत हसीन सपना देखा। दुनिया की सबसे सुंदर लड़की मुझसे बातचीत कर रही थी। उसकी

प्रेमिका ने पूछा, अच्छा तो बताओ फिर मैंने सपने में तुमसे क्या कहा? दुनिया की सबसे सुंदर लड़की, प्रेमिका अपने आप को वहीं समझ रहीं है। हमारी सेल्फ इमेज नितांत झूठीं है और हम उसके साथ जीं रहे हैं, इस प्रकार हम वर्तमान से चूक जाते हैं। कबीर साहब ने कहा है, दो पाटन के बीच में साबुत बचा न कोय, चलतीं चाकीं देख के दिया कबीरा रोय। वो दो पाट क्या–क्या हैं, अतीत और भविष्य हैं। इन दोनों के प्रति जागरूक बनो और तब वर्तमान की कील पर आओगे।

आज के सूत्र में भगवान शिव कहते हैं पार्वतीं से, जैसे मुर्गी अपने बच्चों का पालन–पोषण करतीं है, ठीक उसीं प्रकार यथार्थ में विशेष ज्ञान और विशेष कृत्य का पालन–पोषण करो। बड़ा प्यारा सूत्र है। यथार्थ में, इन रिंआलिटी, सामान्यतः हम वास्तविकता में नहीं जींते या तो हम ऑप्टिमिस्टिक या तो पेस्सीमिस्टिक। रिंआलिस्टीक कभीं नहीं होते, या तो आशावादी या तो निराशावादी, यथार्थवादी कभीं भीं नहीं। और भगवान शिव कह रहे हैं यथार्थ में! ज्ञान और कृत्य, ये दोनो हीं हमारे झूठे हैं। न तो हमारा ज्ञान सच्चा है। हम किताबों में, शब्दों में, मतों में, सिद्धातों में अटक जाते हैं, वास्तविकता से चूक जाते हैं।

मैने सुना मुल्ला नसरुद्दीन के घर जनगणना अधिकारी आया। वो नोट कर रहा था कि परिवार में कितने लोग हैं? नसरुद्दीन ने सब लिखाया, बच्चों के नाम लिखाए, खुद का नाम, माता–पिता के नाम, पत्नी का नाम जनगणना अधिकारी बोला कि क्षमा करें, मेरे रजिस्टर में तो लिखा हुआ है कि पिछले साल आपकी पत्नी का देहान्त हो चुका। पत्नी तो बहुत नाराज हो गई, वो सामने हीं बैठीं थीं। उसने कहा कीं देखते नहीं, मैं सामने हीं बैठीं हूं, जिंदा। नसरुद्दीन ने कहा, भागवान चुप रहो, अरे इतने बड़े सरकारी अफसर क्या झूठ बोलेंगे। जब उनके रजिस्टर में लिखा है तो ठीक हीं होगा। हमें लिखे हुए पे भरोसा है। कई लोग आते हैं वे कहते हैं कि वेद में लिखा है। वेद में लिखा है तो मैं क्या करूं? अगर वो सत्य नहीं है तो नहीं है। वेद में लिखा है कि पृथ्वीं अचला है, अब मैं क्या करूं वेद में लिखा है तो। वैज्ञानिकों ने पता लगा लिया कि पृथ्वीं चल रहीं है। एक क्षण को भीं वो नहीं रुकतीं। वेद का ज्ञान झूठा हो गया। उन्होंने कहा था पृथ्वीं कभीं नहीं चलतीं। हजार बातें झूठीं हो चुकीं, लेकिन हमें लिखें हुए पर भरोसा है, शब्दों पर भरोसा है।

मैंने एक और कहानीं सुनीं है। नसरुद्दीन का दोस्त उसका पड़ोसीं महमूद मियां एक दिन उसके घर आया सुबह–सुबह और उसने कहा कि मुल्ला जीं अपना घोड़ा मुझे दे दीजिए, बगल के गांव में जाना है, बहुत जरूरीं काम अचानक आ पड़ा। मुल्ला ने कहा मेरा घोड़ा अभीं पांच मिनट पहले, मेरा एक मित्र मांग के ले गया, उसको भीं कहीं जरूरीं काम से जाना था। महमूद मियां वापिस जाने लगे। संयोग कीं बात तभीं भीतर आंगन में बंधा हुआ घोड़ा जोर से हिनहिनाया। ये गधे और घोड़े भीं विचित्र हैं, ठीक वक्त पे बात बिगड़ गई। महमूद मियां लौट के आए और कहा कि नसरुद्दीन हद कर दीं। तुम जरा सीं बात के लिए मुझसे झूठ बोल गए।

वो घोड़ा भीतर हिनहिना रहा है। नसरुद्दीन ने कहा कि हद तुम कर रहे हो, अरे मुझ जैसे पढ़े–लिखे मुल्ला की बात नहीं मान रहे और उस नालायक घोड़े की बात मान रहे हो। यथार्थ से हम चूकते हैं, शब्दों में भरोसा करने के कारण और भविष्य के जो हम आशा और सपने देखते हैं, उसका कारण भी समझ लो तो उससे मुक्ति का उपाय भी समझ में आ जाएगा।

भविष्य के सपने हम इसलिए देखते हैं क्योंकि हमारा वर्तमान आनंदपूर्ण नहीं है, हमारी कामनाएं अधूरी अटकी हुई हैं। हम उन्हें भविष्य में प्रोजेक्ट करते हैं कि कभी वो दिन आएगा जब हम इनको पूरा करेंगे। काश, अगर हम वर्तमान में अभी जीने लगें, जो करने जैसा है उसे अभी ही करें तब भविष्य के सपनों की कोई जरूरत नहीं होगी। तो वर्तमान का सुख लेना शुरू करो। इस सूत्र का प्रयोग समझाते हुए ओशो कहते हैं, उधार ज्ञान झूठा है और वह तुम्हारे काम का नहीं। उधार ज्ञान अज्ञान से भी खतरनाक है, क्योंकि अज्ञान कम से कम तुम्हारा तो है, ज्ञान उधार है, बासा है उससे तो अज्ञानी रहना बेहतर, कम से कम तुम्हारा है, प्रामाणिक है, ईमानदार है, सच्चा है। उधार ज्ञान मत ढोओ, अन्यथा तुम भूल जाओगे कि तुम अज्ञानी हो और अज्ञानी के अज्ञानी ही बने रह जाओगे। शिव कहते हैं, विशेष ज्ञान का पालन–पोषण करो। सदा ही जानने की कोशिश इस ढंग से करो कि वह सीधा हो, सच हो, प्रत्यक्ष हो, कोई विश्वास न पकड़ो, विश्वास तुम्हें भटका देगा।

अपने पर भरोसा करो, श्रद्धा करो और अगर तुम अपने पर ही श्रद्धा नहीं कर पाते तो किसी दूसरे पर भरोसा कैसे करोगे। सारिपुत्र नाम का शिष्य बुद्ध के पास आया और उसने कहा, मैं आपमें विश्वास करने के लिए आया हूं, मुझे आप में श्रद्धा है, मेरी मदद करें। बुद्ध ने कहा, अगर तुम्हें अपने पर ही श्रद्धा नहीं है तो तुम मुझमें श्रद्धा कैसे करोगे। मुझे भूल जाओ और स्वयं में श्रद्धा करो, बाद में मेरे बारे में सोचना। सच्चे और प्रामाणिक होने की चेष्टा करो।

ऐसा कुछ भी मत करो जो झूठा और नकली हो। अगर सिर्फ सात दिन के लिए तुम स्मरण रखो तो कुछ भी नकली, अप्रामाणिक नहीं करना है, जो भी गवांना पड़े गवां देना, खोना पड़े खो देना। जो होना है हो जाए लेकिन सच्चे बने रहना तो सात दिन के भीतर तुम्हारे भीतर एक नए जीवन का उन्मेष अनुभव होने लगेगा। तुम्हारी मृत परतें टूटने लगेंगी और नई जीवन धारा प्रवाहित होने लगेगी। तुम पहली बार पुनर्जीवन अनुभव करोगे, जीवन्त हो उठोगे। यथार्थ में कृत्य का पोषण करो, यथार्थ में ज्ञान का पोषण करो, स्वप्न में नहीं, यथार्थ में।

जो भी करना चाहो करो, लेकिन ध्यान रखो यह काम सच में तुम कर रहे हो या तुम्हारे द्वारा कोई और कर रहा है। माता–पिता अपने बच्चों के द्वारा कार्य कर रहे हैं, तुम्हारे मृत माता–पिता पूर्वज, समाज, पुरानी पीढ़ियां सब तुम्हारे भीतर अभी भी सक्रिय हैं। मरे हुए लोग तुम्हारे भीतर से काम कर रहे हैं, तुम्हारे भीतर वैसे संस्कार भर गए हैं कि तुम अब भी उनको पूरा करने में लगे हुए हो। मैं देखता हूं लोगों की जिंदगी की कहानी, उनके माता–पिता ने विवाह किया था, जो दुख और कष्ट उन्होंने भोगे अब उनके बच्चे वही भोग रहे हैं। अपने

माता–पिता की कहानी को दोहरा रहे हैं। उनके मन में एक धारणा बन गई, विवाह क्या होता है, पति–पत्नी कैसे होते हैं, अपने माता पिता को देखकर। वही कहानी अब इनके जीवन में दोहराई जाएगी। फिर इनके बच्चे भी इसी कहानी को दोहराएंगे। पिता जिन चीजों पे नाराज होते थे, बेटा भी उन्हीं चीजों पे नाराज होगा। माँ जिस प्रकार का व्यवहार करती थी, उसकी बेटी बड़ी होकर ठीक वैसा ही व्यवहार करेगी छोटी–छोटी डिटेल बातों में, वही की वही हू–बहू नकल।

हम अपना यथार्थ जीवन जी ही नहीं रहे, हमारे माध्यम से कोई और जी रहा है। तो आओ आगे एक छोटा सा प्रयोग करते हैं। यथार्थ ज्ञान और यथार्थ कृत्य का पोषण करेंगे। भूल जाओ दुनिया में कोई और भी है, किसी ने तुम्हें कुछ सिखाया है। सचमुच में वही करो जो तुमसे होने को है, सचमुच में उसे जानो जो तुम्हें अभी घटित हो रहा है। भूल जाओ सारा किताबी ज्ञान, उधार ज्ञान। तुमने क्या जाना आज तक, वही तुम्हारा है बाकी सब झूठ है, वो तुम्हारे काम नहीं आएगा। तो छोटा सा हम प्रयोग करेंगे।

सभी मित्र खड़े हो जाएं, आंख बंद कर लें और भाव करें आज तक आपने कौन सा कृत्य किया है? कोई भी नहीं, कृत्य तुमने नहीं किया केवल कर्तव्य निभाते रहे हो। जरा गौर से अपना अवलोकन करो, अब जो भी कृत्य सहज रूप से घट रहा है उसे घटने दो। इंडोनेशिया के संत सुबुद ने इसे लातिहान कहा है। आंख बंद, जो स्वयंमेव हो रहा है, उसे होने दो। अगर हाथ ऊपर उठने लगे तो उठने देना। कमर झुकने लगे नीचे को झुकने देना, हंसी आने लगे हंसने लगना, रोना फूट आए रो जाना, भूल जाओ कि कहीं कोई समाज है

कहीं कोई व्यक्ति मौजूद नहीं है तुम्हें देखने वाला। कल्पना करो कि तीसरा विश्वयुद्ध हो गया, पूरी मनुष्य जाति समाप्त, सिर्फ तुम बचे। तब तुम क्या करोगे? होने दो, जो भी हो रहा है, होने दो। नाचना आए नाचो, कूदना आए कूदो, कुछ न आए, कुछ न होने दो, यथार्थवादी बनो, बी रिआलिस्टीक, ।

अब आंख बंद करके बैठ जाओ और निरीक्षण करो कि वास्तव में तुम्हारा ज्ञान क्या है, आज तक तुमने क्या जाना? हटा दो सारी किताबें, हटा दो सारी शिक्षाएं और संस्कार, तुम्हारा ज्ञान क्या है? सुनी–सुनाई बातें भूल जाओ, पढ़ी–लिखी बातें विस्मरण करो, तुमने क्या जाना और अभी तुम क्या जान रहे हो, प्रामाणिक रूप से। धीरे से शवासन में लेट जाओ विश्राम में डूबें। भगवान शिव का वचन यथार्थ ज्ञान और यथार्थ कृत्य का पालन–पोषण करो। जो तुम्हारा है उसे सम्हालना, जैसे मुर्गी अपने बच्चों का पालन–पोषण करती है। जो दूसरों ने दिया हुआ है, कभी भी तुम्हारा न हो सकेगा। वह उधार है, वह आत्मज्ञान तक कभी न ले जा सकेगा। तुम्हारा छोटा सा ज्ञान ही बहुत है, तुम्हारा छोटा सा दीपक ही बहुत है। झूठा सूरज, पेटिंग का सूर्य किसी काम का नहीं। अपने ऊपर भरोसा और श्रद्धा, वही करो जो तुम्हारे भीतर से आता, वही जानो जो सचमुच में तुम जान रहे हो, खुद जान रहे हो। यह प्रयोग सिर्फ पांच मिनट की बात नहीं है, इसे पूरे जीवन तक फैलाना। धन्यवाद।

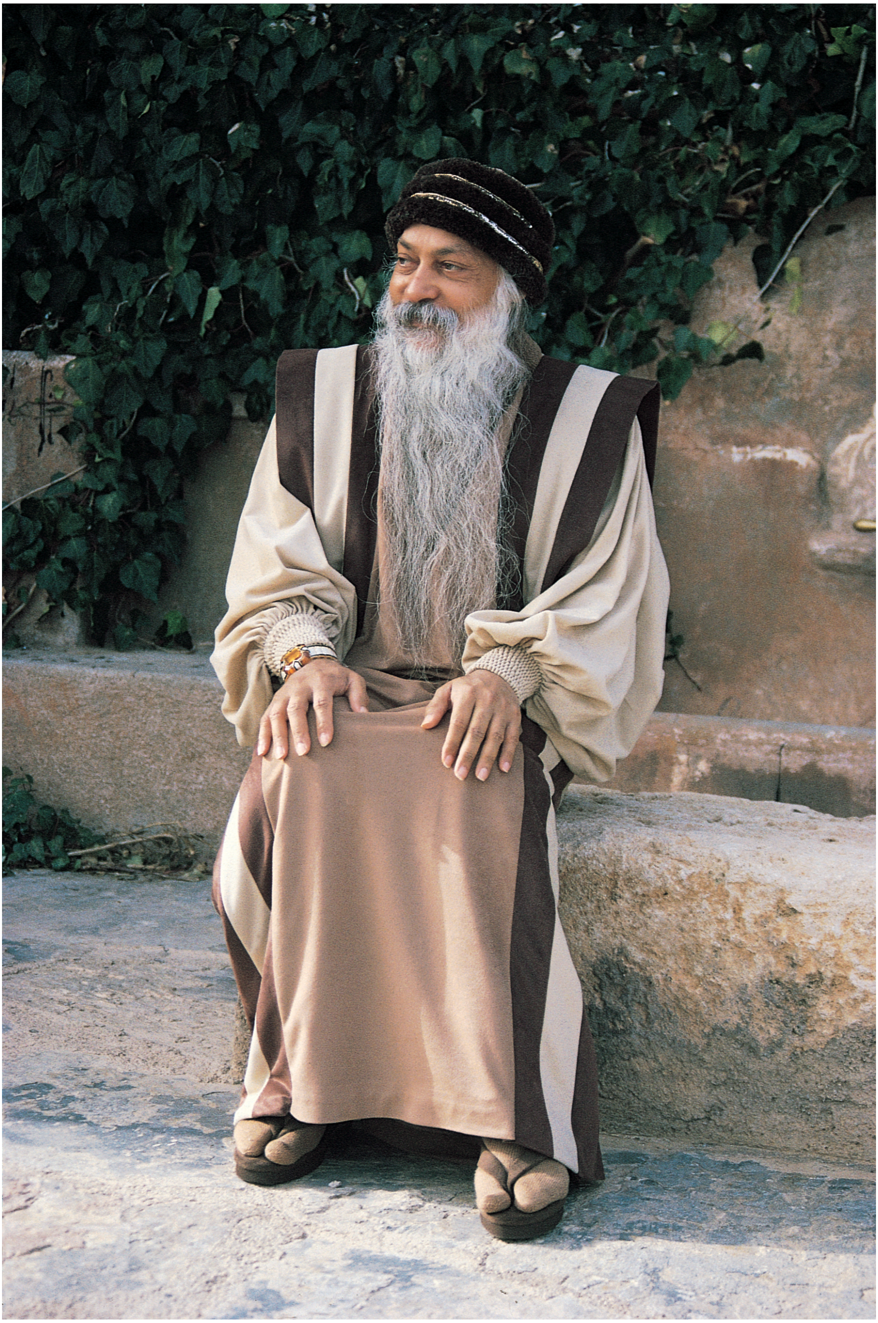

मोक्ष भी सापेक्ष

यथार्थतः बंधन और मोक्ष सापेक्ष हैं, ये केवल विश्व से भयभीत लोगों के लिए हैं। यह विश्व मन का प्रतिबिंब हैं। जैसे तुम पानी में एक सूर्य के अनेक सूर्य देखते हो वैसे ही बंधन और मोक्ष को देखो।

कामना है बंधन, निष्कामना है मुक्ति, इतनी बात तो समझना आसान है। किंतु आज के सूत्र में भगवान शिव इससे भी और गहरी बात कह रहे हैं। बड़े ध्यान से, गौर से, प्रेम और सहानुभूति से समझने की कोशिश करना। वे कह रहे हैं, हे पार्वती! यथार्थतः बंधन और मोक्ष भी सापेक्ष हैं। ये केवल विश्व से भयभीत लोगों के लिए हैं। यह विश्व मन का प्रतिबिंब है। जैसे तुम पानी में एक सूर्य के अनेक सूर्य देखती हो, वैसे ही बंधन और मोक्ष को भी जानो। बड़ी क्रांतिकारी बात कह रहे हैं। मोक्ष भी भ्रम है। कामना का बंधन तो भ्रम है ही, जंजीर तो झूठी है ही, जंजीर को खोलना भी हमारा भ्रम है। निश्चित रूप से जब बीमारी ही झूठी है तो इलाज सच्चा कैसे होगा। जिस कैद में तुम बंद हो, अगर वह कैद केवल तुम्हारा सपना है, तो इस कैद से बाहर आना भी सपना ही होगा। बीसवीं सदी के शुरूआत में, अलवर्ट आइंस्टीन ने सापेक्षिकतावाद का सिद्धांत खोजा। भारत के मनीषियों ने पांच हजार वर्ष पहले इसको खोज लिया था।

शिव कह रहे हैं, बंधन और मोक्ष सापेक्ष हैं, रिलेटिव। बड़ी अद्भुत और क्रांतिकारी बात है। धार्मिक लोग अपने आपको कहते हैं, मुमुक्षु। मुमुक्षु का अर्थ है, मोक्ष के इच्छुक। आवागमन से मुक्ति की चाहत जिनके भीतर है और चाहत ही बंधन है। तुम क्या चाह रहे इससे कोई भेद नहीं पड़ता, चाहत ही बंधन है। एक आदमी धन चाह रहा है, दूसरा आदमी ध्यान चाह रहा है। वो धन वाला लोभ से भरा है कि मुझे और धन मिल जाए और ध्यानी कह रहा है, मेरा ध्यान और गहरा हो जाए। इन दोनो में कोई भेद है क्या, कोई भी भेद नहीं। एक आदमी कह रहा है कि सुंदर मकान बना लूं, अच्छा बगीचा हो मेरे पास, दूसरा आदमी कह रहा है मरने के बाद

स्वर्ग का इंतजाम कर लूं। कोई भी भेद नहीं और कई बार तो बिल्कुल उल्टा दिखाई देता है, साधारण संसारी कम लोभी है, उसकी डिमांडस् और मांग छोटी हैं, जो धार्मिक लोग अपने आप को समझ रहे हैं, साधु-महात्मा, उनकी वासना बहुत बड़ी है, वो यहां छोटे से घर से तृप्त नहीं होने वाले, उनको तो स्वर्ग में महल चाहिए। वो यहां साधारण पत्नी से संतुष्ट नहीं होने वाले, उनको तो मेनका और उर्वशी चाहिए। उन्होंने कल्प वृक्ष से फरियाद की है, उसके नीचे बैठकर जो सोचोगे तुरंत पूरा हो जाएगा।

यहां संसार में तुम्हारे सोचने से पूरा नहीं होता, बहुत मेहनत करनी पड़ती है, तब भी जरूरी नहीं कि पूरा हो जाए। कल्प वृक्ष, सोचो और तुरंत पूरा हो जाए। कौन बड़ा लोभी है जरा ख्याल करो और कौन बड़ा कामी है, ख्याल करो। वे लोग जो मंदिरों में, मठों में दान दे रहे हैं, तीर्थ स्थानों में भंडारा करा रहे हैं, धन खर्च कर रहे हैं, इनसे पूछो क्यों? ये कहेंगे, क्योंकि दान से ही स्वर्ग मिलता है। ये धन के द्वारा स्वर्ग को भी खरीद रहे हैं, इन्होंने दुनिया में बहुत कुछ खरीद लिया है, मकान खरीद लिया, कार खरीद लिया, फैक्ट्री खरीद ली, अब ये स्वर्ग में भी इन्वेस्टमेंट कर रहे हैं। दान देके अब ये स्वर्ग में अपनी सीट रिजर्व कर रहे हैं। कौन बड़ा लोभी है जरा ख्याल तो करो। धर्म के नाम पर भी नई-नई कामनाएं हैं और कामना बंधन है, ये तो और बड़े बंधन में गिर गए। और शिव तो बड़ी ही क्रांति की बात कह रहे हैं, वो कह रहे हैं तुम्हारा मोक्ष भी काल्पनिक है। कामनाएं तो काल्पनिक हैं ही, मोक्ष भी काल्पनिक है। गौर से समझना तो ही बात समझ में आएगी।

पिछली सदी में सोवियत रूस में एक अद्भुत फकीर हुआ जार्ज गुर्जियफ । बचपन में उसके माता-पिता मर गए थे और वो चलते-फिरते बंजारों के साथ रहा। बंजारे एक गांव से दूसरे गांव जाते, कुछ छोटा-मोटा सामान बनाते हैं, खेती-किसानी का, घर गृहस्थी के काम का सामान, चाकू, छूरी, औजार, हथौड़े, हल, लोहारी का काम बढ़ईगिरी का काम। वे गांव में रुकते टेंट में, फिर एक गांव से दूसरे गांव जाते। बंजारों के साथ यही मुश्किल होती थी, बड़े गरीब थे। पुरुषों को, स्त्रियों को, सभी को काम में जाना पड़ता, धन कमाने के लिए जाना पड़ता, समस्या ये थी कि बच्चों का क्या करें? उन्होंने एक बड़ी ही कुशल तकनीक खोज ली थी। बच्चे के आसपास उसकी माँ अंगुली से एक घेरा बना देती चॉक का और कहती कि इस घेरे के बाहर तुम न निकल सकोगे। बस इसी के भीतर खेलते-कूदते रहना। गुर्जियफ बड़ा हैरान हुआ, जब पहली बार उसने देखा कि माँ काम करने चली गई, सात-आठ घंटे बाद वो वापिस आएगी, उसका बच्चा उसको सुरक्षित मिलेगा। वो घेरे के बाहर नहीं जा सकता।

यहां तक तो समझ में आया कि छोटे बच्चे हिप्नोटाइज हो गए हैं बेचारे। आश्चर्य तो यह था कि किसी अॅडल्ट के साथ, प्रौढ़ व्यक्ति के साथ उसकी मां, उसकी पत्नी या उसकी बहन उसके चारों तरफ एक गोल घेरा बना दे और कहदे कि इसके बाहर तुम नहीं निकल सकते, फिर वो व्यक्ति नहीं निकल पाता था। बड़ी कोशिश करेगा यहां तक कि वो रोएगा, चीखेगा, चिल्लाएगा, नाराज होगा कि मुझे बाहर निकालो, रेखा को मिटाओ, कोशिश करेगा बाहर

आने की, लेकिन जैसे ही वह रेखा के पास आएगा किसी अदृश्य कांच की दीवार से जैसे टकरा गया हो, धड़ाम से भीतर गिरेगा चोट भी लग जाएगी उसको। न वहां कोई दीवार है, न कुछ है। गुर्जियफ बहुत हैरान हुआ कि ये लोग किस प्रकार से सम्मोहित हो गए हैं। लेकिन बचपन से जो व्यक्ति इस प्रकार के सम्मोहन में है, कि कोई भी स्त्री उसके चारों तरफ घेरा खींच दे, फिर वो बाहर नहीं निकल सकता, असंभव। बड़े हो जाने पर भी वो सम्मोहन जारी रहेगा।

जरा सोचो अगर ये व्यक्ति इस घेरे से मुक्त हो जाए, क्या इसकी मुक्ति सच है? अगर इसका बंधन झूठा है तो मुक्ति भी तो झूठी हुई, मुक्ति कहां से सच हो जाएगी। हमें गुर्जियफ वाली इस बात पर हंसी आएगी, तुम जरा गौर करो तुम जिस बंधन में घिरे हो, किसी पंडित की उपस्थिति में पति-पत्नी ने हाथ पकड़ के आग के चार चक्कर लगाए और घेरा बन गया, अब नहीं निकल सकते बाहर। कौन तुम्हें रोक रहा निकलने से मगर तुम बंधे हुए हो। सात फेरे लगाए थे, अब तो सात जन्मों-जन्मों का नाता हो गया। अपराध बोध से भर जाओगे, तुम मर जाना पसंद करोगे मगर इस दुख के घेरे में रहोगे, इसके बाहर अब नहीं निकल सकते। और घेरा कहीं है ही नहीं तुमने माना है बस, मान्यता का खेल है।

देश का घेरा, राष्ट्र का घेरा, जाति का घेरा, रंग का घेरा, नाम का घेरा, रूप का घेरा, शिक्षा का घेरा, एक एलोपैथिक डाक्टर बंद है अपने एलोपैथी के ज्ञान के भीतर। अब इसके बाहर नहीं निकल सकता वो। उससे कहो कि होम्योपैथिक दवाई भी काम करती है, वो हंसेगा। कहेगा पागल हो गए हो उसमें दवाई होती ही नहीं, कैसे काम करेगी। जबकि पूरे प्रमाण मौजूद हैं कि कम से कम पचास प्रतिशत आदमी होम्योपैथी से ठीक हो रहे हैं, लेकिन वो एलोपैथिक डॉक्टर नहीं मानने वाला। वो नहीं मान सकता कि एक्यूपंचर की सुई से कुछ हो जाएगा, कि एक्युप्रेशर से कुछ हो जाएगा, यद्यपि दुनियां में लाखों लोग रोज ठीक हो रहे हैं या अपने खुद के घेरे में बंद है। वो एक्युपंचर वाला नहीं मान सकता कि किसी बाबाजी के भभूत देने से कोई ठीक हो जाएगा, लेकिन लोग हो रहे हैं, क्या करोगे। उनका अपना घेरा है, सबके अपने-अपने बंधन हैं। जो भी हम जान लेते हैं, उसके बंधन में हम घिर जाते हैं। हमारा ज्ञान हमारे चारों तरफ एक दीवाल बन जाता है। अगर ये बंधन झूठा है उसके बाहर निकलना भी झूठा होगा, वो कैसे सच हो सकता है।

जरा स्मरण करो एक आदमी जेल में बंद था। दस साल बाद वो छूटा। उसे बड़ी मुक्ति का एहसास होगा। आप खुली हुई दुनिया में रह रहे हैं, स्वतंत्र दुनिया में, आप कभी जेल नहीं गए, मैं आपसे पूछूं बताइए, क्या आप अपनी स्वतंत्रता का मजा ले रहे हैं? आप कहेंगे कैसी बात कर रहे हैं, हमको कभी ख्याल ही नहीं आया कि हम स्वतंत्र हैं। स्वतंत्रता का ख्याल भी बंधन में पड़ने के बाद आता है। वो जो दस साल जेल में रहा है, वो बाहर निकल के स्वतंत्रता का एहसास करेगा, आपने कभी नहीं किया। कर भी नहीं सकते दोनों चीजें सापेक्ष हैं। रिलेटीविटी का सिद्धांत यहां पर लागू होता है। हम तो नए-नए प्रकार के बंधन बनाते चले

जाते हैं। अगर तोड़ने की कोशिश करते हैं, हमारी ही कंडिशनिंग, हमारे ही संस्कार, हमारे आड़े आते हैं। बड़ी विचित्र दुनिया है, संसार को लोग कहते हैं बंधन और इससे बाहर निकलने को कहते हैं मोक्ष, भगवान शिव कह रहे हैं, दोनो ही बातें झूठी हैं।

मैंने सुना है एक युवती अपनी सहेली से कह रही थी कि आओ आज मैं तुम्हें अपने मंगेतर से मिलवाऊंगी, जिससे मेरी शादी होने वाली है, एंगेजमेंट तो हो चुका है। उसने मिलाया, फिर बाद में उसने अपनी सहेली से पूछा, मेरा प्रेमी तुम्हें कैसा लगा? उसने कहा देखो बहन बुरा मत मानना, लेकिन सच बात कहूं, वैसे तो ठीक-ठाक था उसकी शक्ल सूरत अच्छी है, लेकिन उसके दांत बहुत ऊबड़-खाबड़ और सड़े हुए हैं। जब हंसता है बहुत बुरा लगता है। उस युवती ने कहा तुम चिंता क्यों करती हो, शादी के बाद मैं उसे हंसने का मौका ही कब दूंगी। शादी के बंधन में हम जान-बूझकर गिर रहे हैं, हंसने का मौका भी नहीं मिलेगा। फिर पत्नी से पूछकर हंसना पड़ेगा। कब हंसना, कहां हंसना, कितना हंसना? बंधन भी झूठा है, वास्तव में कहीं कोई बंधन नहीं, कोई तुम्हें रोक नहीं सकता। लेकिन स्वतंत्रता पाने की कोशिश भी उतनी ही झूठी है। ये बात बड़ी गहरी है, गौर से समझोगे तो ही समझ में आएगी। इसका अर्थ हुआ धर्म और अध्यात्म के नाम पर जो चल रहा है, वह सब भी झूठा है। संसार तो झूठा है ही, धर्म भी झूठा है। आओ इस प्रयोग को माँ ओशो प्रिया के साथ करते हैं। धन्यवाद।

आज के ध्यान में आपका बहुत-बहुत स्वागत है। राजा जनक ने अपने बारह वर्ष की उम्र के गुरू अष्टावक्र से पूछा, कि मुक्ति क्या है? अष्टावक्र ने जवाब दिया, हे जनक! कामना जैसी व्याधि नहीं और निष्कामना सी समाधि नहीं। ओशो ने इस अनूठे वचनों को महागीता कहा। महागीता सुनते ही जनक को परम ज्ञान उपलब्ध हो गया। आएं आज हम सब मिलकर इस महागीता को सुनते हैं। आंखें बंद कर लें, और होशपूर्वक सुनें।

जनक ने अष्टावक्र से पूछा-

जिंदगी किस लिए मृत्यु है किस लिए? ये जवानी बुढ़ापा जनम किस लिए?
कुछ समझ में न आता तमाशा ये क्यों? सारा चक्कर है क्या हम जिएं किस लिए?
मुक्ति क्या है कृपा कर बताएं प्रभू, जिंदगी कैसे हो एक गीता अहो?

अष्टावक्र बोले-

हे जनक कामना जैसी व्याधि नहीं, और निष्कामना सी समाधि नहीं।
मुक्ति यदि चाहते कामना से बचो, विष समझकर विषय-वासना को तजो।
सत्य-संतोष-सरलता क्षमा को गहो, ज्ञान की मुक्ति की महागीता सुनो।

अब शवासन में लेट जाएं, विश्राम, पूर्ण विश्राम, विश्राम में ही मुक्ति है। परम विश्राम में डूबें, मोक्ष की कामना भी विदा हुई, मुक्ति की चाह से भी मुक्ति हुई। दो-चार लंबी, गहरी सांसें धीरे-धीरे ध्यान से वापिस लौटें। आज का ध्यान पूरा हुआ। हरि ओम् तत्सत्।

मेरुदंड में प्रकाश किरण

अपनी प्राण शक्ति को मेरुदंड से ऊपर उठती, एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र की ओर गति करती हुई प्रकाश किरण समझो, और इस भांति तुममें जीवंतता का उदय होता है।

विज्ञान भैरव का तंत्र आप स्वयं हैं, इस बात को स्मरण रखिएगा। दूसरी अन्य आध्यात्मिक पद्धतियां, साधना की विधियां, किसी अन्य लक्ष्य की ओर, किसी आदर्श की ओर इशारा करती हैं। कोई कहता है तुम राम जैसे बन जाओ, कोई कहता है कृष्ण जैसे बन जाओ, कोई कहता है बुद्ध और महावीर जैसे बन जाओ। भगवान शिव तुमसे कहते हैं, तुम बस तुम ही बन जाओ। तुम्हारी अनंत संभावनाएं हैं। तुम्हारी नियति या तुम्हारा भाग्य पहले से निश्चित नहीं है और यह परम सौभाग्य की बात है। हर व्यक्ति के लिए अनंत-अनंत संभावनाएं खुली हुई हैं। वह चाहे तो विकसित हो, चाहे तो विकसित न हो, वह किसी भी दिशा में यात्रा कर सकता है और यही मनुष्य की गरिमा है, यही उसकी महिमा है। अगर हमारी नियति पहले से ही तय हो तब तो हम एक रोबोट की तरह, यंत्र मानव की तरह हो जाएंगे। हम पहले से ही प्रोग्राम्ड, एक नक्शे के अनुसार हमें चलना होगा। सब कुछ पहले से ही सुनिश्चित होगा। फिर हमारी कोई गरिमा और महिमा नहीं होगी। नहीं, मनुष्य

परम स्वतंत्र है और उसकी स्वतंत्रता में यह बात निहित है, वह चाहे जो हो सकता है। रुक भी सकता है, ठहर भी सकता है, दुर्भाग्य भी इसी में छिपा है।

हम चाहें तो नीचे गढ़्ढों में गिर सकते हैं, हम चाहें तो ऊपर पर्वत शिखरों पर उठ सकते हैं। हम अंधेरी घाटियों में जी सकते हैं, हम उज्जवल प्रकाश के शिखरों में जी सकते हैं। हमारी सारी संभावनाएं खुली हैं। प्रकृति और अस्तित्व हमें हर तरफ से सहयोग देंगे। अगर हम गढ़्ढे में गिरना चाहें, शराब पीके लड़खड़ा के चलें तो गढ़्ढे में गिरेंगे, अपने हाथ-पैर तोड़ लेंगे। अगर हम सम्हल के चलें, होशपूर्वक चलें, प्रकृति हमें चलने में मदद देगी। इस बात को खूब अच्छे से ख्याल रखना। आज का सूत्र इसी तरफ इशारा है। भगवान शिव कहते हैं, हे शक्ति! अपनी प्राणशक्ति को मेरुदण्ड से ऊपर उठती हुई, एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र की ओर गति करती हुई प्रकाश किरण समझो और इस भांति तुममे जीवंतता का उदय होगा। बड़ी अद्भुत है यह विधि, करने में सरल भी है। कोई व्यक्ति इस विधि को एक घंटा प्रतिदिन, तीन महीने तक प्रयोग करे तो इसमें निश्चित रूप से सफलता हासिल कर लेगा। अपने आप को प्रकाश समझना है। मेरुदण्ड से प्रकाश किरणें ऊपर जा रहीं। ये जो छोटी-छोटी सरल सी विधियां हैं, इनसे बड़ा सहयोग हो सकता है।

अध्यात्म के क्षेत्र में गुरू की मौजूदगी, गुरू का निर्देश और विधियां, ये बड़ी उपयोगी हैं। बिना गुरू के, बिना विधि के भी कोई पा सकता है। किंतु भटकन बहुत होगी। ये विधियां किसी एक व्यक्ति ने नहीं खोजी हैं, स्मरण रखना केवल भगवान शिव ने ये विधियां नहीं खोजी हैं, लाखों-लाखों साधकों ने लाखों सालों में जो प्रयोग किये हैं, उन सबका निष्कर्ष है, परिणाम है। पतंजलि के योग सूत्र, पतंजलि मात्र ने नहीं खोजे हैं। पतंजलि के पहले हजारों मनीषी हो गए, उन्होंने जो खोजा उसकी सार देशना पतंजलि ने संग्रहीत की। ठीक इसी प्रकार शिव शक्ति से जो कह रहे हैं, वो लाखों साधकों द्वारा किए गए प्रयोगों का परिणाम है। ये कोई दो-चार दिन की बात नहीं है, दो-चार व्यक्तियों की बात नहीं है, भांति-भांति के मनुष्य हैं दुनिया में और सबके लिए अलग-अलग प्रकार की विधियां काम करती हैं। जरूरी नहीं कि एक ही विधि सबको काम करे।

इस विज्ञान भैरव तंत्र में प्रकाश संबंधी भी विधि है, अंधेरे संबंधी भी विधि है। जो लोग अंधेरे से भयभीत हैं वो लोग अंधेरे का प्रयोग न कर पाएंगे, भय की वजह से लोग वापिस लौट आएंगे, कोई बात नहीं। जिन लोगों को अंधेरे से भय लगता है, वो प्रकाश की विधि करें। कुछ लोग हैं जो प्रकाश की मौजूदगी में शिथिल नहीं हो पाएंगे, रिलैक्स नहीं हो पाएंगे। कुछ लोगों को रात नींद ही नहीं आती अगर कमरे में रोशनी हो। अगर वे प्रकाश की विधि करेंगे हो सकता है उनकी नींद में व्यवधान पड़ जाए। तो व्यक्तित्व अलग-अलग भांति के हैं और अलग-अलग तरीके की विधियां उनके लिए उपयोगी होंगी। सदगुरू की मौजूदगी, साधक संघ की मौजूदगी और भी मददगार होती है। हजारों साल में, कई-कई जन्मों में, अकेला कोई खोज पाएगा, लेकिन अगर गुरु की मौजूदगी है, साधक समूह है साथ में और

विधियों का हम उपयोग कर रहे हैं तो अनावश्यक ऊर्जा खर्च होने से बच जाती है। तब हम आसानी से, बड़े ही सुगम मार्ग से, शार्टकट से अपनी संभावनाओं के द्वार को खोल लेते हैं। इस बैकग्राउंड के साथ, इस भूमिका के साथ आज का प्रयोग हम करेंगे, इस विधि का प्रयोग करेंगे। बड़ी ही सरल विधि है।

योग और तंत्र का मानना है कि मेरुदण्ड में ऐसे सात बिंदु हैं, जहां पर चेतना संस्पर्श करती है, कॉरेस्पांडिंग प्वाइंट, याद रखना ये हमारे स्थूल शरीर में नहीं हैं, एनाटामिकल जांच करने से या पोस्टमार्टम करने से या एक्सरे में ये बिंदु नहीं आएंगे। ये हमारी अॅस्ट्रल बॉडी, सूक्ष्म शरीर में मौजूद हैं, ये हमारे विद्युत केन्द्र हैं। तुम चाहो तो सात की जगह, तीन या पांच में भी बांट सकते हो। सात थोड़ा ज्यादा हो जाता है। स्मरण रखना कठिन होता है। सात की कल्पना करनी कठिन होती है। प्रायोगिक तौर के लिए पांच या तीन में भी बांटा जा सकता है। हृदय मध्य का केन्द्र है, एक केन्द्र उसके नीचे मान लो, एक केन्द्र उसके ऊपर मानलो या हृदय केन्द्र के ऊपर-नीचे दो-दो केन्द्र मानलो। सबसे नीचे है मूलाधार, उसके ऊपर मानलो नाभि चक्र, फिर तीसरा हृदय केन्द्र, उसके ऊपर चौथा आज्ञाचक्र और पांचवां सहस्रार चक्र। याद रखना, चक्रों का जो क्लासिफिकेशन है, वर्गीकरण है, वह विधि के अनुसार किया जाता है। कोई जरूरी नहीं कि पांच में ही बांटो। कुछ संतों ने सात, कुछ ने नौ, तिब्बत में उन्होंने तेरह चक्रों की बात की है।

विभाजन कई भांति से किया जा सकता है। अब यहां इतने सारे लोग बैठे हुए हैं, जब आप ओशो मंदिर के बाहर जाएं तो कोई पूछे किसी से कि कितने प्रकार के लोग थे? कोई कह सकता है कि दो प्रकार के थे, स्त्रियां थीं, पुरुष थे। कोई कह सकता है तीन प्रकार के थे, बूढ़े थे, जवान थे, बच्चे थे। कोई कह सकता है गोरे और काले में विभाजन करके, कोई कह सकता लंबे-ठिगने, बीच की ऊंचाई के लोग, कोई कह सकता है सफेद गाउन पहने हुए, महरून कलर का गाउन पहने हुए, पैंट-शर्ट पहने हुए, साड़ियां पहने हुए, कई-कई प्रकार से विभाजन हो सकता है और सभी विभाजन सही हैं। कोई व्यक्ति यह भी कह सकता है कि वहां बस एक ही प्रकार के लोग थे, सब अध्यात्म के साधक थे, ओशो के प्रेमी थे। यह बात भी बिल्कुल ठीक। इस प्रकार से समझना, जब भी कोई चीज क्लासीफाइड करते हैं, कई लोग गिनती के भ्रम में पड़ जाते हैं। कहते हैं सच-सच बताइए, तीन चक्र हैं, कि पांच हैं, कि सात हैं। सब बातें सही हैं, अलग-अलग दृष्टिकोणों से कही गई हैं।

तो आज की विधि को समझाते हुए हमारे परम गुरू ओशो ने इस प्रकार से समझाया, आंखें बंद कर लो और भाव करो कि मैं बस प्रकाश हूं। यह मात्र भाव या कल्पना नहीं है, शुरूआत में तो कल्पना ही लगेगी, किंतु यथार्थ में भी ऐसा ही है। हर एक चीज प्रकाश से बनी है। अब तो भौतिक विज्ञान भी कहता है कि सब कुछ विद्युत के ही रूप हैं। तंत्र ने तो सदा से ही कहा है कि सब कुछ प्रकाश कणों से बना है और तुम भी प्रकाश कणों से बने हो। इसलिए कुरान कहता है कि परमात्मा प्रकाश है। वेद कहते हैं कि परमात्मा प्रकाश है। तुम प्रकाश

स्वरूप हो, तो पहले भाव करो कि मैं प्रकाश किरण हूं, फिर अपनी कल्पना को काम केन्द्र के पास ले जाओ, मूलाधार के निकट। अपने अवधान को एकाग्र करो, और भाव करो कि प्रकाश किरणें काम केन्द्र से ऊपर उठ रहीं हैं। मानो काम केन्द्र प्रकाश का स्रोत बन गया और प्रकाश किरणें मूलाधार चक्र से नाभिचक्र की ओर ऊपर उठने लगीं। जब तुम अनुभव करोगे कि नाभि चक्र दूसरा प्रकाश का स्रोत बन गया, प्रकाश किरणें वहां आकर एकत्रित होने लगीं तब धीरे–धीरे हृदय केन्द्र की ओर गति करो। अब और ऊपर बढ़ो और जैसे–जैसे प्रकाश हृदय के निकट पहुंचेगा, जैसे–जैसे उसकी किरणें वहां एकत्रित होने लगेंगी, वैसे–वैसे तुम्हारे हृदय की धड़कन बदल जाएगी। तुम्हारी श्वांस गहरी होने लगेगी। हृदय में गर्माहट पहुंचने लगेगी तब उससे और आगे आज्ञाचक्र की ओर ऊपर बढ़ो।

शिव कहते हैं, अपनी प्राणशक्ति को मेरुदण्ड से ऊपर उठती, एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र की ओर गति करती हुई प्रकाश की किरण समझो और इस भांति तुम्हें जीवन्तता का उदय होता है और जैसे–जैसे तुम्हें गर्माहट अनुभव होगी, वैसे–वैसे उसके साथ ही तुम्हारे जीवन के अंदर एक जीवंतता का उन्मेष होगा, एक आंतरिक प्रकाश का उदय होगा। हमारी संवेदनशीलता बढ़ेगी, हम ज्यादा जीवंत महसूस करेंगे, ज्यादा अलाइव महसूस करेंगे। अभी फिलहाल सामान्य मनुष्य की अवस्था तो ऐसी है, न ठीक से जीता, न ठीक से मरता। मैंने सुना है, सेठ चंदूलाल के घर नसरुद्दीन पहुंचा। देखा कि चंदूलाल किचिन में खड़े हैं और एक बर्तन में गरम पानी करके, उसमें चाकू खौला रहे हैं। नसरुद्दीन ने पूछा कि सेठजी क्या कर रहे हैं? चंदूलाल ने कहा कि मैं बहुत त्रस्त हो गया हूं जिंदगी से, मर जाना चाहता हूं। चाकू मारके सूसाइड करूंगा, आज आत्महत्या करने वाला हूं। नसरुद्दीन ने कहा तो चाकू को उबाल क्यों रहे हैं? चंदूलाल ने कहा, अरे! कीटाणु मर जाएं ताकि कोई इन्फेक्शन वगैरह न हो जाए। मरने में भी कंजूसी, जीने में भी कंजूसी, न हम ठीक से जीते, न हम ठीक से मरते। जब तुम्हारे भीतर जीवंतता का उदय होता है तब पहली बार तुम जानते हो कि जीवन क्या है। तब नई–नई संभावनाएं खुलती हैं।

तांत्रिक और योगी कहते हैं कि सहस्रदल कमल खुलता है। सहस्र शब्द का अर्थ हजार नहीं होता याद रखना। आज की भाषा में सहस्र यानि हम कहते हैं हजार, वन थाउजंड लेकिन संस्कृत की पुरानी भाषा में सहस्र का अर्थ होता था, अनंत, अंतहीन, अनगिनत। सहस्रदल कमल का अर्थ है, हमारा सबसे ऊपर का चक्र खिलता है और जब वह खिलता है तो बस खिलता ही चला जाता है। पंखुड़ियों पर पंखुड़ियां, खिलती ही चली जाती हैं। अंतहीन खिलावट होती जाती है, वही तंत्र का लक्ष्य है। कुछ मित्रों को यह प्रयोग करते हुए सिर भारी हो सकता है, गर्मी लग सकती है, किसी को चक्कर से आ सकते हैं, तब वो इसमें एक कल्पना और जोड़ दें। भाव करें कि सहस्रार से प्रकाश की किरणें विकीर्णित हो रही हैं। सारे अस्तित्व में रेडियेट हो रही हैं और तब शीघ्र ही शीतलता का उदय होगा। सिर धीरे–धीरे ठण्डा होने लगेगा। नीचे के केन्द्र से प्रकाश किरणें मेरुदण्ड से होती हुई ऊपर जाएंगी और

ऊपर से सारे अस्तित्व में फैल जाएंगी। तब और भी अधिक जीवंतता का अनुभव होता है।

कुछ लोग जो सहस्रार पर ऊर्जा का इकट्ठा होना आसानी से अनुभव नहीं कर पाते उनके लिए उपयोगी होगा सिर पर टोपी लगाएं या कोई वस्त्र बांध लें, पटका बांध लें। रेशमी कपड़ा हो या ऊनी कपड़ा हो तो और भी अच्छा। सूफियों ने ऊनी कपड़ों का प्रयोग किया है। सिर पर अगर एक कपड़ा बंधा हो तो यह विद्युत ऊर्जा, यह प्रकाश ऊर्जा सिर में संग्रहीत हो जाती है। तो प्रयोग करके देखना तुम्हें कौन सा प्रयोग जंचता है। इसलिए मैंने भांति–भांति की बातें आपसे कहीं। शुरूआत में कपड़ा बांधकर या टोपी पहनकर प्रयोग करना। अगर तुम्हें लगे कि बहुत गर्मी या चक्कर आने लगा, तब कपड़ा हटा देना और प्रकाश ऊर्जा फैल रही है सारे जगत में, इस भाव में डूबना। बड़ा ही अद्भुत प्रयोग है। आओ इस प्रयोग को करते हैं।

माँ ओशो प्रिया–

खड़े होकर सामने झुकें, वापिस ऊपर उठें, फिर सामने झुकें, ऊपर उठें। मेरुदण्ड की इस गति के साथ अनुभव करें कि प्रकाश की किरणें मेरुदण्ड से ऊपर की ओर सहस्रार की ओर जा रही हैं। ऊर्जा का उर्ध्वगमन हो रहा है। प्रकाश की किरणें ऊपर की ओर गति कर रही हैं। ऊपर–नीचे, ऊपर–नीचे, अब बैठ जाएं। बारी–बारी से सामने और पीछे झुकें, मेरुदण्ड की गति, उसके साथ प्रकाश का उर्ध्वगमन हो रहा है। वाइटल फोर्स, प्राणऊर्जा ऊपर की ओर गति कर रही है।

स्थिर हो जाएं अब, मेरुदण्ड से प्रकाश की ऊर्जा ऊपर पहुंच गई। सहस्रदल कमल खिल रहा है। प्रकाश ही प्रकाश, प्रकाश ही प्रकाश, सब तरफ रोशनी व्याप्त हो रही है। भाव करें आपके सहस्रार से सब तरफ रोशनी व्याप्त हो रही है। सहस्रदल कमल खिल रहा है, प्रकाश ही प्रकाश, प्रकाश ही प्रकाश। सब तरफ रोशनी व्याप्त हो रही है, सारा अस्तित्व प्रकाशमय है, उस प्रकाश के साथ आप एक हो गए।

अब लेट जाएं और सारे अस्तित्व के साथ एक महसूस करें।

प्रकाश ही प्रकाश बचा, प्रकाश ही प्रकाश। ओंकार की ध्वनि से ओत–प्रोत, आप स्वयं प्रकाश स्वरूप हैं, सारा ब्रम्हाण्ड प्रकाश स्वरूप है। एक ही प्रकाश है, न कुछ मेरा, न कुछ तेरा, बस प्रकाश, बस प्रकाश, प्रकाशमय हो जाएं। धन्यवाद।

भीतर बिजली कौंधना

या बीच के रिक्त स्थानों में यह बिजली कौंधने जैसा है, ऐसा भाव करो।

पश्चिम में मनोविज्ञान विकसित हुआ और पूरब में अध्यात्म। इन दोनों के बुनियादी भेद को समझ लें फिर आज की विधि को समझना आसान होगा। पश्चिम के मनोवैज्ञानिकों ने असामान्य व्यक्ति का, विक्षिप्त लोगों का, मानसिक रूप से रुग्ण लोगों का अध्ययन किया और उनके अध्ययन करके जो निष्कर्ष निकला, उन्हें सामान्य लोगों पर लागू किया। बिल्ली का अध्ययन किया, कुत्तों का अध्ययन किया, चूहों का अध्ययन किया, पशुओं का अध्ययन किया और उस अध्ययनों से जो निष्कर्ष हाथ में आए उनको मनुष्यों पर एप्लाई किया, इससे एक बड़ी विचित्र घटना घटी। विक्षिप्त लोग और पशुओं का व्यवहार सामान्य सा लगने लगा और जो सामान्य औसत व्यक्ति था, उसने स्वीकार लिया कि हम पशुवत ही हैं, उसने अपनी पाशविकता को भी मूल्यवान समझ लिया और वो अपनी मनुष्यता से नीचे गिर गया। भारत में इसका ठीक उलटा हुआ। यहां पर मानसिक रोगियों का अध्ययन नहीं हुआ, यहां बुद्ध, महावीर, कबीर, रैदास, नानक इनका अध्ययन हुआ, उनकी तरफ हमने निगाहें उठाई। उनका हमने निरीक्षण किया और तब सामान्य से जो ऊपर उठ गए हैं, जो परमहंस हो गए हैं, उनको देखकर हमें एक चुनौती मिली।

औसत मनुष्य के लिए एक प्रेरणा के स्रोत वे बने कि हम भी इन ऊंचाइयों को छुएं।

तो तीन स्थितियां समझें, एक पशु की स्थिति है, एक परमहंस की स्थिति है और बीच में सामान्य मनुष्य की स्थिति है। विक्षिप्त आदमी का मन भी डांवाडोल हो गया और परमहंस मन के पार चला गया। यदि हमने पागलों को देखकर उनके जैसे होने को स्वीकार लिया, तब हम अपनी सामान्य मनुष्यता को भी खो बैठेगें और पश्चिम में वही हुआ है। वहां अब किसी को क्रोध आता है तो वह हजार तर्क देने को तैयार है कि क्यों मुझे क्रोध आता है। कामवासना को उन्होंने स्वीकार लिया। अपनी सभी पाशविक प्रवृत्तियों को उन्होंने सहज रूप से स्वीकार लिया कि हम ऐसे ही हैं और ऐसे ही हो सकते हैं, यही मनुष्यता है। भारत में हमने मन के पार चले गए लोग, परमहंसों की तरफ देखा, बुद्धों की तरफ, जिनों की तरफ, अवतारों की तरफ देखा और तब हमारे भीतर एक चुनौती जागी कि क्या हम भी क्रोध से मुक्त हो सकते हैं? क्या हम भी ब्रम्हचर्य को उपलब्ध हो सकते हैं, क्या अहिंसा, अलोभ, अचौर्य हमारे जीवन में भी संभव है? तब बड़ी प्रेरणा जागी और उर्ध्वगमन शुरू हुआ। तो पूरब और पश्चिम का यह भेद समझना।

विज्ञान भैरव तंत्र की जो विधियां शिव दे रहे हैं, वे सामान्य से ऊपर उठने के लिए हैं, परमहंस होने के लिए हैं। परम जागरण में जाने की चुनौती उनमें छिपी हुई है। आज की विधि बड़ी अदभुत है। विधि नंबर 71 में भगवान शिव कहते हैं, 'या बीच के रिक्त स्थानों में यह बिजली कौंधने जैसा है, ऐसा भाव करो'। यह जो 'या' शब्द जुड़ा है, यह पिछली विधि 70 के संदर्भ में है, उसमें भगवान ने कहा पार्वती से कि धीरे-धीरे प्रकाश की किरणें मेरुदण्ड से ऊपर उठ रही हैं, ऐसा भाव करो और इसमें वो कहते हैं, या, अचानक कौंधने जैसी घटना घट रही है। मेरुदण्ड में, एक चक्र से दूसरे चक्र पर, एक अस्थि से दूसरी अस्थि की ओर, नीचे से ऊपर की ओर, अनायास, अचानक, घटना घट रही है, ऐसी धारणा करो।

दुनिया में दो प्रकार के लोग हैं, कुछ लोग क्रमिक घटनाओं का भाव कर सकते हैं, कुछ लोग अचानक घटने वाली घटनाओं का भाव कर सकते हैं। हमें स्वयं खोजना होगा क्या हमारे लिए सहज, सुगम और सरल है। जो भी हमें रास आता है, क्योंकि हमारे व्यक्तित्व अलग-अलग हैं। विशेषकर स्त्रियों के लिए आसान है, कोई ग्रेजुअल प्रोसेस की कल्पना करना। धीरे-धीरे कोई घटना घट रही है। पुरुषों का स्वभाव चंचल है, एक जगह से दूसरी जगह छलांग लगाते हैं, एक जगह टिकते नहीं। क्रमिक घटना की धारणा करना उनके लिए कठिन है। अचानक, अनायास कुछ हो, सीधी मूलाधार से बिजली चमके और सहस्रार में पहुंच जाए, ऐसा संभव है। जापान में झेन फकीर हुए, उनमें अधिकतम गिनती पुरुषों की है। स्त्री झेन फकीर बहुत कम हुई हैं। इसलिए सडन एन्लाइटेनमेंट जापान के झेन फकीरों में बहुत प्रचलित हुआ, अनायास, अचानक। जहां भक्ति का मार्ग विकसित हुआ भारत में सूफियों में, वहां अचानक एन्लाइटेनमेंट की बात नहीं है, वहां धीरे-धीरे ग्रेजुअल प्रोसेस है।

गौतम बुद्ध के बारे में हमें पता है कि फलां-फलां पूर्णिमा की रात को वो परमज्ञान को

उपलब्ध हुए। महावीर के बारे में पता है कि अमावस्या की रात को फलां–फलां तारीख को उनका परम जागरण फला। मीराबाई के बारे में कोई नहीं जानता कि मीराबाई को परमज्ञान कब हुआ। सहजोबाई के बारे में, राबिया के बारे में नहीं मालूम, क्यों नहीं मालूम? क्योंकि इनकी घटना इतनी धीमी थी, कब रूपान्तरण हो गया पूरा, कुछ पता ही न चला। धीरे–धीरे पानी गरम हो रहा था, गरम होते–होते पानी भाप बनने लगा, लेकिन यह घटना इतनी क्रमिक ढंग से घटी कि पता ही न चला। यदि अचानक विस्फोट हो, अचानक ठण्डा पानी एकदम खौलके भाप बन जाए तो उसका पता चलेगा। मुझे स्मरण आता है, मेरी माँ को भी परम ज्ञान हुआ, बुद्धत्व घटा, उसके संबंध में ओशो ने एक जगह कहा, कि वो घटना इतने धीरे–धीरे घटी है और माँ इतनी सहज, सरल कि उन्हें पता ही नहीं चला कि कब घटना घट गई। कोई तारीख नहीं तय की जा सकती। तो अधिकांश स्त्रियों के बारे में जो परमहंस हुई हैं, उनके बारे में कोई तारीख नहीं मालूम कि कब वो ज्ञानी हो गई। धीरे–धीरे बात बदलती चली गई। पुरुषों के बारे में जरूर, क्योंकि उन्हें सडन एन्लाइटेनमेंट होता है, अचानक घटना घटती है, इसलिए उन्हें भी एहसास होता है और दूसरों को भी रूपांतरण का एहसास होता है।

मैंने सुना है एक फ्लॉप फिल्म के डायरेक्टर से एक आलोचक की बात हो रही थी। डायरेक्टर ने पूछा कि मेरी फिल्म आपको कैसी लगी? आलोचक ने कहा कि बाकी सब ठीक है, यदि हीरो को अंत में जहर देकर मारने की बजाय, गोली से या बम से उड़ाते तो ज्यादा अच्छा होता। डायरेक्टर ने पूछा कि इसका क्या फायदा होता? आलोचक ने कहा कि धूमधड़ाम की आवाज सुनके कम से कम सोते हुए दर्शक जाग जाते, उठ–उठकर अपने–अपने घर चले जाते, धूमधड़ाम, अचानक। अब धीरे–धीरे किसी को स्लो प्वाइजन देकर मारना, आलोचक कह रहा कि इतनी बोर फिल्म थी कि सब दर्शक सो रहे थे, कम से कम आवाज होती तो घर जाने का पता तो चल जाता कि फिल्म कब खत्म हुई। मैं पढ़ रहा था एक और लतीफा कि एक सज्जन की अचानक बिजली गिरने से मौत हुई। जोर की बिजली चमकी, गाज गिरने से उनकी मौत हुई। जब वे ऊपर परलोक में पहुंचे तो मुस्कुराते हुए पहुंचे। देव दूतों ने पूछा कि आप हंस क्यों रहे हैं? उन्होंने कहा कि मैं समझा कि मेरी फोटो उतारी जा रही है, किसी ने कैमरा क्लिक किया है, और फ्लैश लाइट देखकर, मेरी पुरानी आदत है फोटो खिंचवाते हुए मुस्कुराने की।

अचानक कुछ हो, कुछ लोगों को इसमें प्रसन्नता का कारण नजर आएगा, सबको नहीं आएगा, अलग–अलग प्रकार के लोग हैं, अपना ढंग देखना। मैंने सुना है, एक राजनेता का अंतिम संस्कार करके जब लोग मरघट से लौट रहे थे, अचानक बादल घिर आए, आंधी–तूफान चलने लगे, जोर की बिजली तड़कने लगी, लोगों ने ऊपर की तरफ देखा और कहा कि लगता है कि उपद्रवी नेता पहुंच गया वहां। कुछ लोगों को अचानक घटने वाली घटना उपद्रव जैसी लगेगी। खासकर स्त्रैण चित्त के लोगों को उपद्रव जैसी लगेगी लेकिन पुरुष चित्त के लोगों को इनमें रस होगा। कुछ लोगों के लिए अगर अचानक ऊर्जा का उर्ध्वगमन हो जाए,

बिजली जैसी कौंध जाए भीतर तो उनको गर्मी लगने लगेगी, असहनीय गर्मी लगने लगेगी। भीतर ऐसा लगेगा कि कुछ बेचैनी उत्पन्न हो रही है। तब इस प्रकार की विधि उनके काम की नहीं। तो अपने स्वभाव को परखना, विधि को करके देखना दो–तीन दिन, तीन दिन में समझ में आ जाता है कि मुझे रास आ रही कि नहीं। अगर तुम्हारे भीतर शांति, आनंद, प्रेमभाव की वृद्धि हो रही है तो जानना कि यह विधि तुम्हारे लिए है। विज्ञान भैरव तंत्र में सब प्रकार के लोगों के लिए विधियां हैं। इसलिए भगवान शिव कह रहे हैं या, अर्थात्, या तो इसके पहले वाली विधि या यह वाली विधि, दो में से चुन लेना। दोनो ही प्रकाश से संबंधित हैं। एक में ग्रेजुअल प्रोसेस है, एक में सडन प्रोसेस है। अनावश्यक उपद्रवों में नहीं पड़ना।

धर्म के नाम पर, अध्यात्मिक साधना के नाम पर कुछ लोग पहले से भी ज्यादा बेचैन, पहले से भी ज्यादा परेशान हो जाते हैं, वह जरा भी उचित नहीं। हमेशा ख्याल रखना तुम्हारी शांति बढ़ रही है कि नहीं, तुम्हारे जीवन में प्रेम भाव और कोमल भावनाएं विकसित हो रही हैं कि नहीं। अगर नहीं हो रही हैं तो कुछ भूल–चूक हो रही है। गलत विधि नहीं करना। तीसरे नेत्र की विधि करने वाले बहुत लोग बेचैन हो जाते हैं, तनावग्रस्त हो जाते हैं, उनका सिर भारी हो जाता है। कुछ लाभ न हुआ, नुकसान ही हो गया। कुछ विधियां ऐसी हैं जिनमें लोग भयभीत हो जाते हैं। मृत्यु संबंधी जैसे कोई विधियां हैं। अगर कोई व्यक्ति बहुत डरा हुआ है मौत से, अच्छा है वो वाली विधियां वो न करें। वो बहुत साहसी लोगों के लिए हैं। अपने व्यक्तित्व को देखना। ओशो ने इस संदर्भ में बिल्कुल स्पष्ट निर्देश दिया है कि वही विधि करना जिससे तुम्हारे भीतर शांति और आनंद बढ़ता है।

इस विधि पर बोलते हुए ओशो ने कहा, भाव करो की प्रकाश की एक चिंगारी एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र पर छलांग लगा रही है और दूसरी विधि बिल्कुल सच है, क्योंकि प्रकाश सचमुच छलांग लेता है। इसमें कोई क्रमिक, कदम ब कदम विकास नहीं होता, प्रकाश सदा छलांग लेता है। विद्युत प्रकाश को देखो, तुम सोचते हो कि वह स्थिर है, लेकिन यह तुम्हारा भ्रम है। उसमें अंतराल हैं, लेकिन वे अंतराल इतने छोटे हैं कि उनका तुम्हें पता नहीं चलता। विद्युत छलांगों में आती है, एक छलांग और उसके बाद अंधकार का अंतराल होता है। फिर दूसरी छलांग, उसके बाद फिर अंधकार का अंतराल होता है। लेकिन तुम्हें कभी गैप का पता नहीं चलता, क्योंकि छलांग बड़ी तीव्र है। प्रकाश की गति लगभग 3 लाख किलोमीटर प्रति सेकण्ड है। हर क्षण अंधकार आता है फिर छलांग लगती है। प्रकाश कभी धीरे–धीरे नहीं चलता, सदा छलांग ही लेता है। जो लोग छलांग की धारणा कर सकते हैं, यह दूसरी संशोधित विधि उनके लिए उचित होगी।

शिव कहते हैं बीच के रिक्त स्थानों में बिजली कौंधने जैसा भाव करो। प्रयोग करके देखो, अगर तुम्हें किरणों का क्रमिक ढंग से आना अच्छा लगता है तो वही ठीक और अगर तुम्हें अच्छा न लगे, लगे कि किरणें छलांग ले रही हैं, तो किरणों की बात भूल जाओ और आकाश में कौंधने वाली विद्युत की, बादलों के बीच छलांग लेने वाली विद्युत की धारणा करो।

ओशो की बड़ी कृपा है कि उन्होंने हमें इस बात को इतनी आसानी से समझा दिया कि कौन सी विधि किसके लिए उचित होगी। सब विधियां सबके लिए नहीं हैं। और इसलिए सहज योग की धारणा बड़ी उपयोगी होगी। यहां जो श्रृंखला चल रही है प्रवचनों की, इसको हमने नाम सहजयोग इसीलिए दिया। हठयोगी मत बनना, जिद्दी मत बनना, हठी मत बनना। अहंकार की चुनौती मत लेना, सहज, स्वाभाविक, सरल और सुगम पर ध्यान देना। ओशो का सबसे बड़ा योगदान अध्यात्म की जगत में एक यही है कि उन्होंने चीजों को सहज और स्वाभाविक की तरफ मोड़ा। हमारे एक मित्र हैं उन्होंने एक बड़ा प्यारा गीत लिखा है, लिखते हैं–

एक प्रार्थना जगी है, एक दीप मिल गया है,
एक अर्चना हुई है, एक फूल खिल गया है।
ये धन्यता के पल हैं, जो ओशो मिल गए हैं,
रसधार बह रही है, हां प्यार खिल गया है।
उत्सव मना रहे हम, इक राग पल रहा है,
ये हैं बसंत के दिन, एक फाग चल रहा है।
एक नृत्य चल रहा है, संगीत चल रहा है,
महफिल सजी हुई है, एक गीत चल रहा है।
अनमोल ये दिवस हैं, आनंद में निमज्जित,
ये अंतरंग क्षण हैं, आलोक से सुसज्जित।
सतसंग चल रहा है, कुछ बात हो रही है,
रसरंग में भिगाती बरसात हो रही है।
ये धन्यता के पल हैं, जो ओशो मिल गए हैं,
रसधार बह रही है, हां प्यार खिल गया है।
महफिल सजी हुई है, एक दीप चल गया है।

ओशो की बड़ी कृपा कि उन्होंने साधना को एकदम सुगम बना दिया। कठिन का आकर्षण समाप्त कर दिया। आओ आज इस विधि का हम प्रयोग करते हैं।

सभी मित्र कृपया खड़े हो जाएं। अपने पैरों को इतना दूर रखें जितने चौड़े आपके कंधे

हैं। आराम से सीधे और शिथिल खड़े हों। भाव करें पैर के पंजों से कोई शक्ति कौंधती हुई ऊपर की ओर उठ रही है। इस उर्ध्वगमन की अचानक धारणा के साथ शरीर का कंपन शुरू कर दें। पूरा शरीर कांपने लगे। कंपन जारी रखें, और तीव्र, झटके के साथ और अपना सारा ख्याल मेरुदण्ड पर रखें। भाव करें हर कंपन के साथ, झटके के साथ रोशनी ऊपर की ओर बढ़ रही है। अब आराम से बैठ जाएं, संगीत सुनते हुए इसी भाव में डूबें, विस्फोट के साथ मेरुदण्ड से प्रकाश ऊपर की ओर बढ़ रहा है। अब आराम से लेट जाएं, शरीर को शिथिल छोड़ दें, श्वांस धीमी, प्रकाश ही प्रकाश हो गया। डूबते जाएं इस प्रकाश में, स्नान कर लें। आत्मपूजा उपनिषद का ऋषि कहता है, प्रकाश में स्नान करो। जब तक भाव हो ध्यान में डूबे रहें। धन्यवाद।

पारदर्शी ब्रह्मांड

भाव करो कि ब्रह्मांड एक पारदर्शी शाश्वत उपस्थिति है।

कैसे सुकून पाऊं, तुझे देखने के बाद,
अब क्या गजल सुनाऊं, तुझे देखने के बाद।
आवाज दे रही है, मेरी जिंदगी मुझे,
जाऊं या मैं न जाऊं, तुझे देखने के बाद।
काबे का एहतराम भी, मेरी नजर में है,
सर किस तरफ झुकाऊं, तुझे देखने के बाद।
तेरी निगाह मस्त ने, मखमूर कर दिया,
क्या मयकदे को जाऊं, तुझे देखने के बाद।

नजरों में ताबेदीद भी, बाकी नहीं रही,
किससे नजर मिलाऊं, तुझे देखने के बाद।

गुरू शिष्य के बीच जब प्रेम घटित होता है, श्रद्धा फलित होती है तब ऐसा ही लगता है, काबे का एहतराम भी मेरी नजर में है, सर किस तरफ झुकाऊं तुझे देखने के बाद। गुरू के प्रति प्रेम में पड़ जाना जगत की सर्वाधिक दुर्लभ घटना है। याद रखना, इस विज्ञान भैरव तंत्र की जो हम चर्चा कर रहे हैं, वह शिव पार्वती के बीच हो रहा संवाद है। गहन प्रेम में डूबी हुई हैं पार्वती, शिव के साथ। न केवल प्रेमिका हैं, उनकी शिष्या भी हैं। सवाल पूछा है कि हे प्रभू आप कौन हैं, यह रहस्यमय जगत क्या है? व्यक्तिगत सवाल से शुरू हुआ आप कौन हैं और अचानक समष्टिगत प्रश्न में छलांग लग गई। यह विचित्र, रहस्यमय संसार क्या है? और शिव उत्तर दे रहे हैं, कोई दार्शनिक उत्तर नहीं, कोई वैचारिक उत्तर नहीं, गहन प्रेम से वो विधियां दे रहे हैं। गहन प्रेम में प्रेमी और प्रेमिका एक दूसरे में घुल–मिल जाते हैं। जैसे दो दीपक पास–पास आएं। उनकी माटी की देह तो अलग–अलग रह जाएं और उनकी ज्योति एक ही हो जाए। शिवपार्वती मिलकर एक हो गए और इसलिए सदियों–सदियों से शिव के ज्योतिर्मय रूप की ही पूजा की जाती है शिवलिंग की, ज्योतिर्लिंग। वह ज्योति केवल प्रेम की ही ज्योति रह गई बस। शिव भी खो गए अंतर्ध्यान हो गए, पार्वती भी विलीन हो गई, दोनो मिलकर एक हो गए। आज तंत्रसूत्र की जिस विधि को हम लेने जा रहे हैं, केवल गहन प्रेम में डूबकर ही उसे अनुभव किया जा सकता है।

भगवान शिव कहते हैं, हे देवी! भाव करो कि ब्रम्हाण्ड एक पारदर्शी शाश्वत उपस्थिति है। शाश्वत उपस्थिति भी गहन के प्रेम क्षणों में ही अनुभव में आती है और केवल प्रेमी ही एक–दूसरे के लिए पारदर्शी होते हैं। तो एक तो साधारण प्रेम है जगत का उसमें शाश्वत की छोटी सी झलक मिलती है, थोड़ी सी पारदर्शिता आती, एक दूसरे में प्रवेश मिलता, फिर उससे और भी गहरा प्रेम है गुरू शिष्य का, श्रद्धा जिसे हम कहते हैं। उसमें और गहरी अनुभूति होती और अंतिम है भक्ति, प्रेम की पराकाष्ठा जिसमें सारे अस्तित्व के साथ एक हो जाते। भक्त और भगवान दो नहीं बचते, एक ही हो जाते हैं। आकार खो जाता, रूप खो जाता, एक शाश्वत उपस्थिति रह जाती। स्मरण रखना, यह विधि 72 कहने के पहले, भगवान शिव ने विधि नंबर 70 और 71 में अपने आप को प्रकाशमय बनाने की बात कही। उन दो विधियों से गुजर के इस तीसरी में छलांग लगानी आसान होगी। सीधे इसमें प्रवेश न हो सकेगा। पहले स्वयं को प्रकाशरूप जानो, फिर सारे अस्तित्व के प्रकाश के साथ एक हो जाना बहुत आसान होगा। इसकी साधना करने के लिए ज्यादा से ज्यादा संवेदनशीलता साधो।

अगर कोई व्यक्ति तीन माह तक इस भाव में जी सके कि मैं प्रकाशमय हूं, इसमें गहरा

डूब सके तो अवश्य ही सारे ब्रम्हाण्ड के प्रकाश के साथ उसकी एकात्मीयता हो जाएगी। रासायनिक द्रव्य लेकर भी लोग अपनी चेतना को फैला लेते हैं, लेकिन याद रखना रासायनिक द्रव्य हमारी इंद्रियों को रासायनिक ढंग से उत्तेजित करते हैं, अतिसंवेदनशील बना देते हैं थोड़ी देर के लिए। एक बहुत सुंदर जगत दिखाई देता है, लेकिन वह सब क्षणिक है, वह केमिकल्स की वजह से हो रहा है। रासायनिक द्रव्य दुख को भुला सकते हैं, मिटा नहीं सकते। केवल ध्यान, केवल समाधि ही दुख को मिटा सकती है। मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन आधी रात शराब पीकर, शराबखाने से लौटा अपने घर। दरवाजा खटखटाया, उसकी पत्नी ने दरवाजा खोला, नसरुद्दीन इतने नशे में था कि पहचान नहीं पा रहा था। उसने पूछा कि बहन जी आप कौन हैं, पत्नी ने कहा कि अरे मुझे भूल गए, मैं तुम्हारी बेगम। नसरुद्दीन ने कहा बे–गम, मुझे कुछ याद नहीं। शराब पीकर सब गम भूल जाते हैं। तुम किस प्रकार की गम हो, बेगम। शराब में भूल तो सकते हैं, किंतु मिटा नहीं सकते। क्योंकि गम का कारण हमारा स्वयं का छुद्र अहंकार है। वह सारे अस्तित्व के प्रति प्रेम में पड़ने से ही समाप्त होता है।

आज की इस विधि को समझाते हुए परम गुरू ओशो कहते हैं, सबसे पहले संवेदनशीलता को बढ़ाना है। तुम्हारी प्रत्येक इंद्रिय को ज्यादा जीवंत बनाना है। तो ही इस विधि का प्रयोग कर पाओगे। भाव करो कि ब्रम्हाण्ड एक पारदर्शी शाश्वत उपस्थिति है। सर्वत्र प्रकाश है, अनेक–अनेक रूपों और रंगों में सर्वत्र प्रकाश व्याप्त है। उसे देखो, सर्वत्र प्रकाश को महसूस करो, क्योंकि सारी सृष्टि प्रकाश की आधार शिला पर ही खड़ी है। एक पत्ते को देखो, फूल को देखो या पत्थर को और देर–अबेर तुम्हें अनुभव होगा कि उससे प्रकाश किरणें निकल रही हैं। बस धैर्य से प्रतीक्षा करो, जल्दबाजी न करो, क्योंकि जल्दबाजी में कुछ भी प्रकट नहीं होता। तुम जब शीघ्रता में होते हो तो तुम जड़ और असंवेदनशील हो जाते हो। किसी भी चीज के साथ धीरज से इंतजार करो, और तुम्हें एक अदभुत तथ्य से साक्षात्कार होगा जो सदा से मौजूद था, लेकिन जिसके प्रति तुम सजग नहीं थे। शिव कहते हैं कि ब्रम्हाण्ड एक पारदर्शी, शाश्वत उपस्थिति है।

जैसे ही तुम्हें इस शाश्वत अस्तित्व की उपस्थिति होगी, वैसे ही तुम्हारा चित्त बिल्कुल मौन और शांत हो जाएगा। तुम उस अस्तित्व के एक अंश भर हो जाओगे। किसी अद्भुत संगीत में एक स्वर मात्र, फिर कोई चिंता नहीं है, फिर कोई तनाव नहीं। बूंद सागर में गिर गई, खो गई, सागर के साथ एक हो गई। लेकिन आरंभ में एक कल्पना की जरूरत होगी। अगर तुम संवेदनशीलता बढ़ाने के प्रयोग भी करो तो वे सहयोगी होंगे, तुम कई प्रकार के प्रयोग कर सकते हो। किसी का हाथ अपने हाथ में ले लो। आंखें बंद कर लो और दूसरे के भीतर के जीवन को महसूस करो, उसे अनुभव करो और उसे अपनी ओर बहने दो, गति करने दो, फिर अपने जीवन को महसूस करो, उसे दूसरे की ओर प्रवाहित होने दो। किसी वृक्ष के निकट बैठ जाओ, उसकी छाल को छुओ, उसे स्पर्श करो, अपनी आंखें बंद कर लो, वृक्ष में उठते जीवन तत्व को अनुभव करो। वृक्ष का आलिंगन कर लो और तुम्हें तुरंत ही

बदलाहट अनुभव होगी। याद रखना, ध्यान की, समाधि की सारी विधियों के पीछे प्रेम तत्व बहुत गहरा असर करता है। बिना प्रेम के भी तुम विधियों को कर सकते हो, किंतु तब बात न बनेगी। कोई केवल विधि को एक टेकनीक की भांति करे, वैज्ञानिक तरीके से करे तो बात न बनेगी। अगर तुम्हारा भाव भी उसमें जुड़ा है, गुरू के प्रति भाव, अस्तित्व के प्रति भाव, परमात्मा के प्रति भाव, स्वयं के प्रति भी प्रेम का भाव जुड़ा है तब ये विधियां जादुई ही असर करती हैं।

अगर तुम कोई छोटा सा प्रयोग कर सको रात को मोमबत्ती जलाकर बैठ जाओ। प्रार्थना करो मोमबत्ती से कि अपने रहस्य मुझ पर उजागर करो, तुम धीरे–धीरे पाओगे प्रकाश बदलने लगा। इंद्रधनुषी रंग प्रकट होने लगे, रंग–बिरंगी छटाएं दिखाई पड़ने लगीं। वो छोटी सी मोमबत्ती अपने रहस्य तुम पर उजागर करने लगी। ओशो ने एक बार कुछ मित्रों से कहा कि नदी किनारे जाओ और कोई एक पत्थर चुन लेना छोटा सा, नदी के किनारे बहुत से रंग–बिरंगे पत्थर होते हैं। उस पत्थर के साथ एक घंटे प्रेमपूर्वक रहना। आश्चर्यजनक परिणाम हुए, वो मित्र गए, एक–एक पत्थर वो अपनी–अपनी पसंद के खोज लिए, उसको हाथ में लिए बैठे, गोद में रखा, सीने से लगाया, जब घंटे भर बाद वहां से चलने का समय आया, तो सभी मित्र कहने लगे कि क्या हम ये पत्थर अपने साथ घर ले जा सकते हैं? आश्चर्य की बात, घंटे भर धैर्यपूर्वक पत्थर के साथ रहने पर, पत्थर के प्रति प्रेम उत्पन्न हो गया।

प्रेम की बात जमाने में निराली देखी,
प्रेम की प्रेम से फलती हुई डाली देखी।
प्रेम इंसान को इंसान बना देता है,
प्रेम पत्थर को भी भगवान बना देता है।

प्रेम में डूबो। भगवत्ता कहीं दूर नहीं है, ईश्वर कहीं दूर नहीं है, प्रेम की आंखों से देखे गए संसार का नाम ही परमात्मा है। संसार और परमात्मा दो अलग–अलग बातें नहीं हैं। सारा अस्तित्व जुड़ा हुआ है, इस जोड़ को अनुभव करो। मैंने सुना है, एक बच्चे से टीचर ने पूछा कि चंद्रमा और पृथ्वी का आपस में क्या संबंध है? बच्चे ने कहा कि दोनो भाई–बहन हैं। टीचर ने कहा कैसे? उस बच्चे ने कहा धरती हमारी माँ है और चंद्रमा हमारा मामा है। एक छोटे बच्चे की नजर से देखो, निर्दोष भाव से देखो, सब कुछ जुड़ा हुआ है, कुछ भी दूर–दूर नहीं है। सब चीजें आपस में संयुक्त हैं। सारे ब्रम्हाण्ड में एक नाद गूंज रहा है, उस नाद के अलग–अलग गीत हैं हम सब, उस गीत की अलग–अलग कड़ियां हैं हम सब, सारे जगत से हमारा जोड़ है। यह ट्रांसपेरेंसी, यह पारदर्शिता गहन प्रेम के क्षणों में उपलब्ध होती है। सारे जगत के प्रति प्रेम से

भरो। उस प्रेम का नाम ही भक्ति है। यह जो विधि है सच पूछो तो यह भक्ति में डूबने का एक उपाय है। आओ माँ ओशो प्रिया के साथ इस विधि का प्रयोग करते हैं। धन्यवाद।

माँ ओशो प्रिया–

आज की ध्यान विधि में आपका बहुत–बहुत स्वागत है। सामने रखी मोमबत्ती को उठाएं। प्रेम से भर जाएं और प्रेमपूर्वक एकटक उसे निहारें और मन ही मन प्रार्थना करें कि हे ज्योतिर्मय स्वरूप मुझपर अपने रहस्य प्रकट करो। हे ज्योतिर्मय स्वरूप मुझपर अपने रहस्य उद्घाटित करो। धीरे–धीरे उत्तेजना विदा ले रही है, सारी उत्तेजनाएं मिट गईं, संवेदनशीलता बढ़ गई। हम और–और संवेदनशील होते जा रहे हैं। अब मोमबत्ती सामने रख दें, सारी दुनिया को भूलकर बस ज्योति को एकटक निहारें, खूब प्रेम से भरकर उसके साथ, धीरे–धीरे ज्योति में कुछ बदलाहटें नजर आएंगी। ये बदलाहटें ज्योति में नहीं, ये बदलाहटें हममें हो रही हैं। नए रंग, नई आभाएं, नई छटाएं प्रस्तुत हो रही हैं। इन्द्रधनुषिय रंग दिखने लगे। अद्भुत, अनुपम प्रकाश का सौंदर्य झलक दे रहा है। मोमबत्ती बहुरंगीय हो गई, असाधारण हो गई, रहस्यमयी हो गई। अब आंखें बंद करें, भाव करें कि यह ब्रम्हाण्ड पारदर्शी है, सारा विश्व पारदर्शीय उपस्थिति है। आप खुद भी प्रकाशमय हो, प्रकाश स्वरूप हो, ज्योतिर्मय हो, ट्रांसपरेंट हो। हमारे आर–पार प्रकाश गुजर रहा है, ज्योति गुजर रही है। सब पारदर्शी है, पारदर्शी, प्रकाश ही प्रकाश, हमारी प्रकाशमय उपस्थिति।

दो–चार गहरी श्वासें और धीरे–धीरे आंखें खोलें। दोनो हाथ जोड़कर पूरे ब्रम्हाण्ड के प्रति अहोभाव, धन्यवाद भाव। आज का ध्यान पूरा हुआ। हरि ओम् तत्सत्।

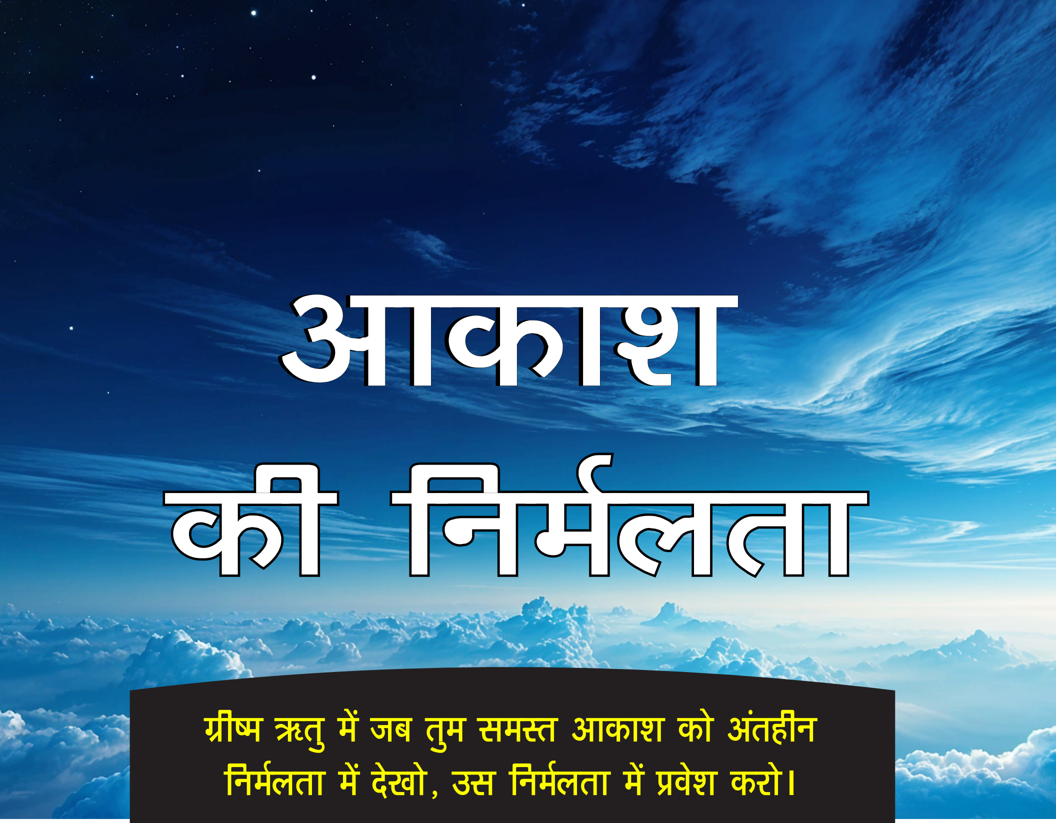

आकाश की निर्मलता

ग्रीष्म ऋतु में जब तुम समस्त आकाश को अंतहीन निर्मलता में देखो, उस निर्मलता में प्रवेश करो।

सब कुछ है, फिर भी कुछ खो रहा है आदमी,
होना था क्या, क्या हो गया है आदमी!
इस तरफ कुआँ और उस तरफ खाई है,
धार पे तलवार की चल रहा है आदमी।
जिंदगी तो बस यूं ही नाम की है जिंदगी,
अनचाहे बोझ सी ढो रहा है आदमी।
जितना सुलझाओ उतना ही उलझ जाता है,
धागों के गुच्छे सा हो गया है आदमी।
दूर से लुभाता और पास से चुभाता है,
कैक्टस के झाड़ सा हो गया है आदमी।

सब कुछ कर सकता है, चाहे जो बन सकता, आदमी भर हो नहीं पा रहा है आदमी!!

मनुष्य की सबसे बड़ी दुविधा यही है, सबकुछ कर सकता है, चाहे जो बन सकता है, स्वयं के होने से चूकता जा रहा है बस। आदमी भर हो नहीं पा रहा है आदमी। धागों के गुच्छे सा हो गया है आदमी। बुरी तरह से हम उलझ गए हैं अपने कृत्यों में। शारीरिक कृत्यों में, मानसिक कृत्य अर्थात विचार, कल्पनाएं, स्मृतियां, हृदय के कृत्य, भावनाएं, विश्वास इत्यादि। इनमें हम उलझ गए हैं। कीचड़ में इस बुरी तरह से धंस गए हैं कि निकलना संभव नहीं, बहुत कठिन। समझ हो तो निकला जा सकता है।

एक बड़ी पुरानी सूफी कहानी है। एक बैलगाड़ी में आदमी जा रहा है रात के धुंधलके में और कीचड़ के गड्ढे में गाड़ी फंस गई है। अब बड़ी मुश्किल हो गई। कुछ लोग गांव के आ गए, उन लोगों ने कहा कि ऐसा करो कि बैलगाड़ी का सारा बोझ उतार दो तब गाड़ी निकालना आसान होगा। बैलगाड़ी वाला बोला, क्षमा करें, बैलगाड़ी में कोई बोझ ही नहीं है उतारने के लिए, आपकी सलाह काम न आ सकेगी।

उसकी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति को हम समझ सकते हैं, हमारी स्थिति उतनी दुर्भाग्यपूर्ण नहीं है, हमारे पास उतारने को बहुत कुछ है। हमारा मन, हमारा अहंकार, हमारे कर्ताभाव का बोझ, कीचड़ में से हम बाहर निकल सकते हैं। ध्यान की ये सारी विधियां जो शिव पार्वती से कह रहे हैं उस कीचड़ में से बाहर निकलने के भांति-भांति के उपाय हैं। जो तुम्हें रास आ जाए, जो तुम्हें जम जाए उस विधि का उपयोग कर लेना। असली बात है उस धागों के गुच्छे से, उस मन से मुक्त होने की विधि। उसका मुख्य बिंदु है जागरण

निर्मल मन जैसी कोई चीज नहीं होती। कितना ही ज्ञान एकत्रित करो, वह सदा परिवर्तनशील रहेगा अतः कन्फ्यूज़न से छुटकारा असंभव है। हमारी चेतना दर्पण जैसी है। सामने जो दृश्य होता है वही उसमें प्रतिबिंबित होता है, भीतर छलकता है और हम तादात्म्य बना लेते हैं कि यही मैं हूं। दृश्य में हम उलझ जाते हैं, इस प्रकार हमारा मन निर्मित होता है। मन यानि दृश्य के साथ तादात्म्य। तंत्र की सारी विधियों का जोर इस बात पर है कि तुम अपने निर्मल दर्पण स्वरूप में स्थित हो जाओ। चेतना एक दर्पण के समान है, उसकी जो मिररिंग क्वालिटी है उसकी शुद्धता में डूबो। क्या ऐसा नहीं हो सकता कुछ क्षण जिंदगी में प्रतिदिन मिल जाएं जब हम कुछ भी प्रतिबिंबित न कर रहे हों। ना शरीर से करते हों, न मन से कुछ सोचते हों, न हृदय के किन्हीं भावनाओं में डूबे हों, न कोई स्थूल कर्म, न कोई सूक्ष्म कर्म, कुछ भी न करते हों। उस क्षण में हमारा होना प्रगट होता है। जब दर्पण के सामने कोई भी दृश्य न हो तब दर्पण स्वयं उजागर हो जाता है।

आज की विधि उसी तरफ इशारा है। कहते हैं भगवान शिव पार्वती से कि ग्रीष्म ऋतु में

जब तुम समस्त आकाश को अंतहीन निर्मलता में देखो उस निर्मलता में प्रवेश करो। सामान्यतः हम विराट से चूकते चले जाते हैं क्षुद्र में अटकने की वजह से। अगर हम आकाश की तरफ कभी देखते भी हैं तो हमें चांद दिखाई देगा, तारे दिखाई देंगे, सूरज दिखाई देगा, कोई हवाई जहाज गुजरती है तो उस पर हमारी नजर पड़ेगी, कहीं इंद्रधनुष दिखाई देगा, कभी तैरते हुए बादल की टुकड़ियां दिखाई देंगी। जिस आकाश में ये सब मौजूद हैं उससे हम चूक जाते हैं, क्षुद्र पर अटक जाते हैं और विराट से चूक जाते हैं। ठीक इसी प्रकार हम परमात्मा से जन्मों–जन्मों से चूकते चले आ रहे हैं। इसलिए भगवान शिव जोर देकर कह रहे हैं, ग्रीष्म ऋतु में जब आकाश बिल्कुल खाली है, कोई बादल नहीं तैर रहा, उस निर्मल आकाश को जब देखोगे तो क्या होगा? जब कुछ दृश्य ही नहीं है। निर्मल आकाश अर्थात कुछ भी नहीं, शून्य। वह शून्य तुम्हारे भीतर झलकेगा और उस झलक में तुम अपने भीतर की शून्यता को जान लोगे। जब दर्पण के सामने कुछ भी न रहा, केवल निर्मलता रह गई, निर्मलता अर्थात कुछ भी नहीं। याद रखना, मन कभी निर्मल नहीं हो सकता, मन एक उलझाव का नाम है, एक गुत्थी का नाम है, धागों का गुच्छा है वह। सुलझाओ तो और उलझ जाता है। मन कभी निर्मल नहीं हो सकता, मन स्मृतियों का भण्डार है, हमेशा ही भ्रम में रहेगा, ज्ञान कभी भी आत्मविश्वासी नहीं हो सकता। जैसे–जैसे विज्ञान बढ़ा समझ बढ़ी धीरे–धीरे चीजें और भी अनिश्चित हो गईं। अभी भौतिकविदों ने एक नियम खोजा है, उसे वे कहते हैं द प्रिंसिपल आफ अन्सर्टेनिटी, अनिश्चितता का नियम। नियम का तो मतलब ही होता था कि चीजें सुनिश्चित हैं, अनिश्चितता का नियम! निश्चित ही जैसे–जैसे खोज होगी चीजें अनिश्चित होती चली जाएंगी, मन कभी भी निश्चय नहीं कर सकता।

मैंने सुनी है एक मजाक, एक मेडिकल कालेज के प्रोफेसर ने पांच साल अपने विद्यार्थियों को पढ़ाने के पश्चात उनको विदा देते हुए, डिग्रियां देते हुए कहा कि एक और असली बात तुम्हें बताना चाहता हूं। विज्ञान नित–नूतन बदलता रहता है और इसलिए पिछले पांच साल में जो मैंने तुम्हें पढ़ाया उसमें से केवल पचास प्रतिशत सही है और पचास प्रतिशत गलत है लेकिन मुश्किल की बात यह है कि मुझे खुद यह नहीं मालूम कि कौन सा पचास प्रतिशत सही है और कौन सा पचास प्रतिशत गलत है। इस दुनिया में केवल मूढ़, कम जानने वाले ही आश्वस्त हो सकते हैं अपने ज्ञान के प्रति। जो व्यक्ति सचमुच में विद्वान है वो चीजों को वैसी ही देखता है जैसी कि वे हैं, वो तो बड़े ही अनिश्चय में चला जाता है। अनिश्चय बिल्कुल स्वाभाविक है, यह मन की वृत्ति है। इसलिए मैंने कहा मन कभी निर्मल नहीं हो सकता। अधिक समझदार व्यक्ति हमेशा अनिश्चित होगा। केवल मूढ़ या कम ज्ञानी ही निश्चित हो सकते हैं। आत्मज्ञानी न निश्चिय न अनिश्चिय में, दोनों के पार, निर्मलता में, अ–मन में अतिक्रमण कर जाता है। निश्चिय की खोज में ही अनिश्चिय पैदा होता है।

अगर निर्मलता को जानना है तो मन के पीछे जो हमारी चेतना है, जागरूकता की शक्ति है उसमें हमें गहरे पैठना होगा। उसका बड़ा ही सरल उपाय कह रहे हैं भगवान शिव,

बड़ा ही आसान तरीका– गर्मी के मौसम में जब बादल भी नहीं हैं, खुला आकाश है विश्रामपूर्वक इस आकाश को देखो। इस विधि को समझाते हुए ओशो कहते हैं–

'खुले आकाश को देखना बहुत बढ़िया है, उसका असीम विस्तार बहुत सुंदर है, उस असीम के संपर्क में तुम्हारी सीमाएं भी विलीन होने लगती हैं क्योंकि वह असीम आकाश तुम्हारे भीतर प्रतिबिंबित होने लगता है। अगर आंखों को झपकाए बिना अपलक ताक सको तो और भी अच्छा होगा, अपलक ताकना बहुत अच्छा है। अगर तुम पलक झपकाओगे तो विचार प्रक्रिया वहीं चालू रहेगी। तो बिना पलक झपकाए देखो, शून्य में झांको, उस शून्य में डूब जाओ, भाव करो कि तुम उससे एक हो गए और किसी भी समय आकाश तुम में उतर आएगा।

पहले तुम आकाश में प्रवेश करते हो और फिर आकाश तुममें प्रवेश करता है। तब महामिलन घटित होता है, आंतरिक आकाश बाह्य आकाश से मिलता है और उस मिलन में परम उपलब्धि घटती है। उस मिलन में मन नहीं बचता। क्योंकि यह मिलन ही तब होता है जब मन नहीं होता। उस मिलन में तुम पहली दफा मन नहीं होते और उसके साथ ही सारी भ्रांतियां विदा हो जाती हैं।'

मन के बिना भ्रांति नहीं हो सकती। सारा दुख समाप्त हो जाता है क्योंकि दुख भी मन के बिना नहीं हो सकता। यदि भीतरी और बाहरी आकाश क्षण भर के लिए भी मिलते हैं और मन विलीन हो जाता है तो तुम एक नए जीवन से भर जाओगे। एक नई जीवन ऊर्जा, उसकी गुणवत्ता ही नई होगी, वह शाश्वत जीवन होगी। मृत्यु से अस्पर्शित, भय से अस्पर्शित, सनातन नित्य जीवन। उस नित्य जीवन की खोज ही धर्म है। आज की यह विधि बहुत ही अद्भुत है। कुछ बातों का ख्याल रखना, फिर विधि बहुत आसान है।

आज बाहर बगीचे में चलकर खड़े होकर आकाश को देखना है। आकाश अस्तित्व की शुद्धतम चीज है। छः बातों का ख्याल रखें।

1. अपलक देखें।

2. बिना सोच–विचार के देखें।

3.निर्मलता के प्रति सजग रहें।

4. बगैर फोकस के देखें।

5. बादलों के प्रति उदासीन और अंतरालों के प्रति सजग रहें।

6. स्त्रैण संवेदनशीलता के संग निर्मलता को ग्रहण करें।

सबसे पहली बार देखते हुए पलक न झपके, और उससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण आंख की पुतली न हिले। दूसरी बात, बिना सोचे–विचारे देखें। आकाश कोई विषय नहीं है, उसके संबंध में सोचने की कोई जरूरत नहीं। वह एक शून्यता है।

तीसरा, निर्मलता के प्रति सजग हों, वो जो कोरापन है आकाश का याद रखना, आकाश हमेशा ही निर्मल है, कुछ भी उसे छूता नहीं। उसका कुंवारापन कभी नष्ट नहीं होता। चांद, सूरज, पृथ्वी बनते हैं, मिटते हैं, सृष्टि उपजती है, नष्ट होती है, बादल आते हैं जाते हैं। न काले बादलों से आकाश को कालिख लगती, न सफेद बादलों के आने से आकाश सफेद हो जाता। सब आते हैं जाते हैं आकाश में लेकिन आकाश को कुछ भी नहीं होता। आकाश स्वयं न कहीं आता न कहीं जाता, न उसे कुछ होता। सबकुछ आकाश में होता है लेकिन आकाश को कुछ भी नहीं होता, वह सदा कुंवारा और निर्मल है।

चौथा बिन्दु, बिना फोकस किए देखना, कहीं भी अपनी आंखों को एकाग्र मत करना, किसी बिन्दु पर नहीं, किसी वस्तु पर नहीं, बस एक फैली हुई दृष्टि। कभी नवजात बच्चों को देखें, छोटे शिशु को निहारें कि वो कैसे देखता है, बिना कहीं फोकस किए। बादलों के प्रति उदासीन और अंतरालों के प्रति सजग रहें। और आखिरी बिन्दु, एक स्त्रैण संवेदनशीलता के साथ, ग्रहणशीलता के साथ उस निर्मलता को अपने भीतर प्रवेश करता हुए जानें। इन छः बिन्दुओं का ख्याल रखकर आकाश की ओर देखेंगे।

तो मैं निवेदन करूंगा कि सभी मित्र बाहर बगीचे में चलें। मैं यहीं से बैठकर आपको निर्देश देता रहूंगा और आप उनका पालन करें। बाहर बगीचे में जाकर, आकाश की ओर उन्मुख होकर खड़े हो जाएं। गौर से देखें, बिना पलक झपकाए, बिना पुतली हिलाए, बिना फोकस किए आकाश की निर्मलता को निहारें। अगर कहीं कोई बादल हैं तो उनके प्रति उदासीन, बीच के गैप के प्रति जागरूक, फेमिनाइन रिसेप्टीविटी के साथ इस निर्मलता को अपने भीतर प्रवेश करने दें। देखते जाएं, निर्मल अंतहीन आकाश, वह शून्य आपके भीतर भी प्रतिबिंबित होने लगा।

जिसे हम देखते हैं वैसे ही हम होने लगते हैं... क्षुद्र को देखने से क्षुद्र, सीमित को देखने से सीमित, विराट को देखने से विराट, असीम को देखने से असीम। अंतराकाश,

बहिर्आकाश एक होने लगे, आप भी असीम, अनादि, अनंत, निर्दोष, निर्मल होते जा रहे हैं। अब आराम से बैठ जाएं, शरीर को शिथिल छोड़ दें, किसी का लेटने का भाव हो तो लेट जाएं, विश्राम। आंख बंद कर लें, एक आकाश बाहर है, एक आकाश भीतर भी है। भीतर के इस आकाश को निहारें, बाहरी आकाश की अंतहीन निर्मलता तुम्हारे भीतर भी प्रवेश कर गई।

आप शुद्ध बुद्ध निर्मल चैतन्य है, विचार रूपी बादल नहीं, आकाश रूपी आत्मा हैं, अपने स्वभाव को पहचानें। आप आकाश स्वरूप हैं, विराट, अनंत, अनादि, निर्दोष और निर्मल, अपने आकाश रूपी स्वभाव में रमें, जब तक आपका भाव हो बैठे रहें या लेट जाएं। इस आकाश के स्मरण के साथ ही जीना शुरू करें। धन्यवाद।

सिर में समाहित अंतरिक्ष

हे शक्ति, समस्त तेजोमय अंतरिक्ष मेरे सिर में ही समाहित है, ऐसा भाव करो।

आज एक बहुत ही अद्भुत विधि हम करने जा रहे हैं। तंत्र सूत्र की विधि नंबर 74 में भगवान शिव पार्वती से कहते हैं ''हे देवी! समस्त तेजामय अंतरिक्ष तुम्हारे सिर में ही समाहित है, ऐसा भाव करो।'' यह उच्चतर और गहनतर विधियों में से एक है।

सीधा–सीधा इसको करना आसान नहीं होगा, इसको करने के पहले थोड़े दूसरे अभ्यास करना। रात सोने के पहले विश्रामपूर्वक लेटकर भाव करना कि तुम्हारे पैर छः इंच ज्यादा लंबे हो गए। तीन–चार दिन रोज इसी भाव को करते–करते सोना। चार–छः दिन बाद फिर दूसरा प्रयोग करना कि तुम्हारा सिर लंबा हो रहा है, बड़ा हो रहा है। आठ–दस दिन के अंदर तुम भाव करने में सफल हो पाओगे कि तुम्हारा पूरा शरीर फैलकर दस–बारह फिट का हो गया।

तब और आगे कोशिश करना कि तुम्हारा शरीर फैलकर पूरे कमरे में भर गया, कमरे की दीवारों को छूने लगा। जब इसमें सफलता मिल जाए कि तुम्हारा शरीर कमरे की दीवारों को छूने लगे तब और विराट होने का भाव करना। अब मकान तुम्हारे भीतर आ गया। फिर धीरे–धीरे भाव करना कि न केवल तुम्हारा मकान, तुम्हारा पूरा गांव तुम्हारे भीतर समाया है, फिर पूरा देश, फिर पूरी पृथ्वी, फिर चांद–सूरज इस प्रकार धीरे–धीरे बढ़ते–बढ़ते एक दिन यह भाव कर पाओगे कि सारा अंतरिक्ष तुम्हारे भीतर समाहित है।

इस विधि को क्रमिक ढंग से ही करना चाहिए। क्योंकि जितना हम करते हैं उसके लिए तैयार हो जाते हैं, समायोजित हो जाते हैं। तीन महीने जाते–जाते इस विधि को पूरा करना।

अचानक विधि करने में कुछ खतरे भी होते हैं।

इस विधि के संबंध में परमगुरू ओशो ने कहा, ''आंखें बंद करके अनुभव कर सकते हो कि सारा आकाश, सारा अंतरिक्ष तुम्हारे सिर में समाहित है। और जिस क्षण तुम्हें यह अनुभव होगा मन विलीन हो जाएगा। क्योंकि मन बहुत क्षुद्रता में जीता है। आकाश जैसे विस्तार में मन नहीं टिक सकता वह खो जाता है। इस महाविस्तार में मन असंभव है, वह केवल क्षुद्र और सीमित में ही हो सकता है, विराट आकाश के लिए मन में जगह नहीं।

यह विधि सुंदरतम विधियों में से एक है। मन अनायास ही बिखर जाता है और आकाश प्रगट हो जाता है। तीन महीने के भीतर यह अनुभव संभव है और तब तुम्हारा संपूर्ण जीवन रूपांतरित हो जाएगा। किन्तु एक-एक कदम चलना, क्योंकि कभी-कभी इस विधि से लोग विक्षिप्त भी हो जाते हैं, अपना संतुलन खो देते हैं।''

यह प्रयोग और इसका प्रभाव बहुत विराट है। अगर अचानक यह विराट आकाश तुम पर टूट पड़े और तुम्हें बोध हो कि तुम्हारे सिर में समस्त अंतरिक्ष समाहित है, तुम्हारे सिर में चांद-तारे और पूरा ब्रह्माण्ड घूम रहा है तो तुम्हारा सिर चकराने लगेगा इसलिए अनेक परंपराओं में इस विधि को करते हुए अनेक सावधानियां बरती जाती हैं।

बीसवीं सदी के संत स्वामी रामतीर्थ ने इस विधि का प्रयोग किया था। रामतीर्थ को ऐसा अनुभव होने लगा कि सारा ब्रह्माण्ड उनके भीतर घूम रहा है। उनके शिष्यों ने पहले तो सोचा कि वे काव्य की भाषा में बोल रहे हैं लेकिन फिर उन्हें लगने लगा कि संभवतः वे पागल हो गए हैं। क्योंकि उन्होंने दावा करना शुरू कर दिया कि मैं ब्रह्माण्ड हूं और सबकुछ मेरे भीतर है। और फिर एक दिन वे पहाड़ की चोटी से नदी में कूद गए। रामतीर्थ ने नदी में कूदने से पहले एक बहुत सुंदर कविता लिखी जिसमें उन्होंने कहा है-

मैं ब्रह्माण्ड हो गया हूं, अब मेरा शरीर भी मेरे लिए भार हो गया है, इस शरीर को अब मैं अनावश्यक मानता हूं इसलिए इसे वापिस प्रकृति को लौटाता हूं। अब मुझे किसी सीमा, रूप की जरूरत नहीं, मैं असीम ब्रह्म हो गया हूं। मनोचिकित्सक तो सोचेंगे कि वे विक्षिप्त हो गए, ये पागलपन का लक्षण है लेकिन जिन्हें मनुष्य चेतना के गहन आयामों का पता है वे कहेंगे कि वे मुक्त हो गए, परमहंस हो गए, बुद्ध हो गए।

ऐसी विधियों में खतरे संभव हैं। इस प्रकार की विधियां वास्तव में आश्रम में, गुरू के सानिध्य में, मित्रों के बीच, संघ के बीच करने के लिए हैं। अकेले करने की विधियां नहीं हैं। तुम्हारी देखभाल करने वाले मित्रों का एक समुदाय चाहिए। इसीलिए बुद्ध इतना जोर देते हैं संघम् शरणम् गच्छामि। कुछ विधियां ऐसी हैं इंडीविजुअल, निजी तौर पर की जा सकती हैं, कुछ ध्यान की विधियां ऐसी हैं जो ग्रुप में की जा सकती हैं, समूह के साथ ही संभव हैं। एक मैत्रीपूर्ण संघ हो, देखभाल करने वाले लोग हों क्योंकि खतरे संभव हैं।

तादात्म्य टूटेगा, शरीर और मन के साथ तादात्म्य टूटेगा, विराट के साथ तादात्म्य जुड़ेगा, सारा जीवन और जीवन की शैली रूपांतरित हो जाएगी। उस रूपांतरण को ऐसा

समझो जैसे कोई नया जन्म हुआ हो, संभालने वाले लोग चाहिए। इसलिए संघ में, आश्रम में इस प्रकार की विधियां की जाती हैं।

मैंने सुना है एक चुटकुला, लक्ष्मी नामक एक दक्षिण भारतीय महिला डॉक्टर के पास पहुंची। डॉक्टर ने दवा लिखी और महिला ने पूछा कि डॉक्टर साहब मैं क्या–क्या खा सकती हूं, क्या कोई परहेज है? डॉक्टर ने कहा कोई परहेज नहीं, आपको पेट की कोई तकलीफ नहीं है इसलिए जो जी चाहे खाइए। लेकिन उस महिला को तसल्ली न हुई, उसने कहा, डॉक्टर साहब इडली खा सकती हूं? डॉक्टर ने कहा, जरूर, शौक से खाइए। फिर पूछा, डोसा खा सकती हूं? डॉक्टर ने कहा, हां–हां, खा सकती हैं। डॉक्टर थोड़ा झल्लाने लगा लेकिन वह महिला पूछती ही गई, सांभर पी सकती हूं? डॉक्टर ने कहा, हां, अवश्य पीजिए। महिला कमरे के बाहर गई, फिर लौटकर आई और बोली कि डॉक्टर साहब, एक चीज तो पूछना मैं भूल ही गई, उत्तपम खा सकती हूं कि नहीं? डॉक्टर ने कहा अवश्य खाइए। महिला ने पूछा, केला खा सकती हूं? डॉक्टर ने कहा, जरूर। फिर बोली, डॉक्टर साहब नारियल, खोपरे की चटनी? डॉक्टर ने कहा मेरी खोपड़ी छोड़कर जो जी चाहे खाइए, मुझे बख्श दीजिए।

आज जिस विधि की हम चर्चा कर रहे हैं वह खोपड़ी खाने वाली है। जब विराट अंतरिक्ष तुम्हारे भीतर समाएगा तो यह खोपड़ी रह नहीं जाएगी। और तुम्हारा पुराना जीने का ढंग भी बदल जाएगा। इसलिए आश्रम व्यवस्था पर, गुरूकुलों पर हमारे ऋषि–मुनियों का बड़ा जोर था। कुछ विधियां इसीलिए गुप्त रखी गईं, जनसमूह को नहीं कही गईं।

ये तंत्र सूत्र की विधियां भगवान शिव ने जो पार्वती से कहीं, जनमानस इनसे अनभिज्ञ ही है, जानबूझकर छिपाकर रखी गईं। इसलिए मैं आपको विधि बता तो जरूर रहा हूं लेकिन अपने आप मत करना, किसी गुरू का हाथ पकड़कर चलना। कोई मार्ग निर्देशक हो तभी ये विधियां कारगर हो सकती हैं, वरना खतरनाक भी हो सकती हैं। घूंट–घूंट पीना, एक साथ मत पी जाना।

जीवन की हर घड़ी निराली फिर क्यों फिरता खाली–खाली,
तेरे लिए ही रस की प्याली, सद्गुरू ने है कब से सम्हाली।
किसी सद्गुरू का सहारा लेना,
अंधकार में बिना सहारे, क्यों फिरते हो मारे–मारे,
गुरु का हाथ पकड़ लो प्यारे, फिर देखना सुबह की लाली।
जिसने दिया ये जीवन प्यारा, तू है उसकी आंख का तारा,
क्यों घबराता छोड़ दे उसके चरणों में अब चिंता सारी।
प्रभु ने सब पर प्रेम लुटाया, गुरु मेघ बन जल बरसाया,

शिष्य का रोम–रोम हर्षाया, जिसने भी झोली फैलायी।
त्याग दो अपने मन का द्वंद्व, जीवन होगा परमानंद,
सुनो अंतस का छंद अखण्ड, जिंदगी तब होगी मतवाली।
जीवन की हर घड़ी निराली फिर क्यों फिरता खाली–खाली,
तेरे लिए ही रस की प्याली, सद्‌गुरू ने है कब से सम्हाली।

किसी सद्‌गुरू का संग–साथ पकड़ना, मित्रों का कोई संघ ढूंढ़ना, साधकों का एक वर्ग जो मिलकर साधना करता हो, वहां पर इस प्रकार की गहन विधियां उपयोग में लाई जा सकती हैं। और इसलिए बहुत सी ध्यान विधियों को गुप्त ही रखा गया। अब समय आया है कि उन्हें उजागर किया जाए। ओशो ने जब तंत्र सूत्र पर प्रवचन दिए अंग्रेजी में, उस मूल प्रवचनमाला का नाम है 'द बुक आफ द सीक्रेट्स' 'रहस्यों की किताब'।

वास्तव में शिव ने अध्यात्म के बड़े रहस्य खोले हैं। ये छोटी–छोटी 112 पंक्तियां, छोटा सा ग्रंथ है 'विज्ञान भैरव तंत्र' एक अंतर्देशीय पत्र पर पूरा प्रिंट हो सकता है इतना छोटा और उसमें अनगिनत खजाने छुपे हुए हैं और उन खजानों की चाबियां भी छुपी हुई हैं जो काम आ सकती हैं साधक के। इनकी कोई व्याख्या नहीं हुई। गीता की बहुत व्याख्याएं हुईं, रामायण पर बहुत लोग प्रवचन देते हैं, भगवत की कथाएं सुनाते हैं लेकिन विज्ञान भैरव तंत्र बिल्कुल अछूता ही रह गया। हिन्दुओं में अधिकांश लोगों को मालूम भी नहीं कि इस प्रकार का ग्रंथ भी कोई है।

जब ओशो ने पहली बार विज्ञान भैरव तंत्र पर प्रवचन दिए, पंडित और विद्वान हैरान हुए कि क्या ऐसी भी कोई किताब है, हिन्दुओं का कोई ऐसा ग्रंथ भी है! इसलिए पुनः दोहराता हूं कि आज की यह विधि अकेले करने के लिए नहीं है, मिलकर करने के लिए है। संघ–साथ में, जहां तुम्हारी देखभाल करने वाले लोग हों, आश्रम में रहकर, गुरुकुल में रहकर करने के लिए है।

सभी मित्र तैयार हो जाएं, अब हम एक छोटा सा प्रयोग करेंगे, सिर्फ समझने के लिए, जानने के लिए। फिर जिनको उत्सुकता हो, समय निकालकर यहां आएं और फिर उनको गहराई में डुबाया जा सकेगा। सभी मित्र अपनी–अपनी जगह खड़े हो जाएं और तीव्र गति से लंबी–गहरी सांस लें और छोड़ें, प्राणायाम शुरू करें। छोड़ने पर जोर, जोर से गहरी सांस छोंड़ें, ... शरीर का रोम–रोम आंदोलित हो जाए, गहरी सांस, .. गहरी सांस.... लेने पर जोर नहीं, छोड़ने पर जोर। और तेजी से, .. और तेजी से, ... आधा मिनट और, ... तेज सांस, .. तेज सांस, ... तेज सांस।

दूसरा चरण, आराम से बैठ जाएं, आंख बंद कर लें, रीढ़ और गर्दन सीधी। बिना तनाव के जितनी सीधी हो सके। अब धीमी और गहरी सांस लें। गति धीमी, .. गहराई सामान्य से

ज्यादा। भाव करें कि सांस ऊपर की तरफ आपके सिर में जा रही है। सांस भीतर लेने के बाद दो सेकेण्ड रुक जाएं, .. अंतर्कुंभक। कल्पना करें कि जैसे छोटे बच्चे गुब्बारे से खेलते हैं, रबर के गुब्बारे में हवा भरते हैं और गुब्बारा फूलता जाता है, ठीक वैसे ही आपका सिर बड़ा होता जा रहा है। धीमी–गहरी सांस, दो–दो सेकेण्ड का अंतर्कुंभक और हर कुंभक के साथ सिर बड़ा हो रहा है, विशाल से विशालतर, गुब्बारे की तरह फूलता जा रहा है, फूलता जा रहा है।

अब सांस का प्रयोग छोड़ दें, बस इस भाव में तल्लीन हों कि सिर विराट हो गया, पूरा ब्रह्माण्ड उसके भीतर समा गया। अनादि और अनंत, असीम पूरा आकाश, पूरा अंतरिक्ष उसमें समाहित है। विराट की प्रतीति के साथ विचार खो गए, सिर जैसे गायब ही हो गया, निर्विचार, भावातीत अवस्था, अद्भुत शांति उतर आई।

क्षुद्र के साथ अशांति है, विराट के साथ शांति है। छोटे के साथ दुख है, बड़े में आनंद है।

अब लेट जाएं, शरीर को शिथिल छोड़ दें, अब भाव भी न करें, कल्पना भी न करें, केवल रिलैक्स, जो कल्पना आपने की थी वह भाव मौजूद रहेगा, क्योंकि वास्तव में आप विराट ही हैं। तन–मन के इस छोटे से घड़े में विराट आकाश है। तन–मन छोटे होंगे, चेतन का आकाश अनंत है।

विराटता की प्रतीति अनूठी है और अद्भुत अनुभूति हो रही है। डूबते जाएं, डूबते जाएं, डूबते जाएं, सारे अंतरिक्ष को स्वयं में समाए हुए डूबते जाएं, गहरे, गहरे, और गहरे। जब तक भाव हो समाधि में डूबे रहें। धन्यवाद।

अपने को प्रकाश समझो

जागते हुए, सोते हुए, स्वप्न देखते हुए,
अपने को प्रकाश समझो।

किसी शायर ने कहा है–

जिसका कोई नहीं उसका खुदा है यारो,
मैं नहीं कहता, किताबों में लिखा है यारो।
मैं अंधेरे में रहूं या कि उजाले में रहूं,
ऐसा लगता है कि कोई देख रहा है यारो।
मुड़कर देखूं तो किधर और सदा दूं तो किसे,
तुमने तो मुझे तन्हा छोड़ दिया है यारो,
इंतजार आज के दिन का था बड़ी मुद्दत से,
बन गया जीवन मंदिर का दीया है यारो।

आज की विधि अपने आपको मंदिर का दीया बनाने की है। भगवान शिव कहते हैं, ''हे पार्वती जागते हुए, सोते हुए और स्वप्न देखते हुए अपने को प्रकाश समझो।'' बड़ी ही सरल,

बड़ी ही अनूठी और अद्भुत विधि है यह ध्यान की। शुरूआत करनी पड़ेगी जागरण से, फिर स्वप्न में प्रवेश संभव है और अंततः निंद्रा में भी प्रवेश संभव है। स्वयं के प्रकाश होने का भान, ऐसा लगता है कि कोई देख रहा है यारो।

वह देखने वाले द्रष्टा तुम स्वयं हीं हो और भीतर एक आलोक है, एक प्रकाश है जो सदा दिखाई देता है, वह भी तुमसे भिन्न नहीं, वह तुम्हीं हो।

मैंने सुना है सरदार विचित्तर सिंह से किसी ने पूछा कि चांद और सूरज में से आप किसको महान मानते हैं? विचित्तर सिंह ने कहा कि निश्चितरूप से चांद ज्यादा महान है। प्रश्नकर्ता ने पूछा, क्यों? विचित्तर सिंह बोले, माना कि धीमी रोशनी देता है लेकिन चांद कम से कम रात को अंधेरे में रोशनी तो देता है, सूरज का क्या काम, वह तो दिन में आता है जब पहले से हीं प्रकाश होता है।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि चांद और सूरज से भिन्न एक और प्रकाश है जो सदा हीं मौजूद है। दिन में भी मौजूद है, रात में भी मौजूद है, जागरण में भी मौजूद है, नींद में भी मौजूद है। सौ साल पहले पश्चिम के मनोविज्ञान ने स्वप्नों का विश्लेषण करना शुरु किया, स्वप्नों में रुचि ली और लगभग पचास साल पहले मनोवैज्ञानिक नींद का भी अध्ययन करने लगे। वे सोचते हैं कोई बड़ी नई बात कर रहे हैं। भारत के मनीषी सदा से हीं स्वप्न में और नींद में उत्सुक रहे हैं, हजारों साल से इसका अध्ययन होता रहा है लेकिन कारण अलग था।

पश्चिम के मनोवैज्ञानिक स्वप्न का विश्लेषण करने के लिए, नींद का अध्ययन करने के लिए, उसके बारे में जानकारी हासिल कर रहे हैं। भारत के मनीषियों ने अध्ययन करने के लिए नहीं, अतिक्रमण करने के लिए नींद को जाना था। लक्ष्य दोनों का अलग-अलग है।

भारत के मनीषी कहते हैं, हमारी चेतना की तीन अवस्थाएं हैं, जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति। और वह जो चेतना है वह स्वयं चौथी है, तुरीय। तुरीय का अर्थ होता है दी फोर्थ, चौथी। जैसे कोई यात्री ट्रेन में बैठा हो, एक स्टेशन गुजरे, दूसरा गुजरे, तीसरा गुजरे। परंतु निश्चितरूप से यात्री तो इनसे भिन्न है, वह स्वयं कोई स्टेशन नहीं है। ठींक इसी प्रकार स्वप्न, जाग्रति, सुषुप्ति स्टेशन हैं। स्टेशन अर्थात जहां हम थोड़ी देर के लिए ठहरते हैं, रुकते हैं।

कुछ घंटे हम जागरण में रहते, कुछ घंटे हम स्वप्न देखते, कुछ घंटे हम गहन निंद्रा में खो जाते। हम कौन हैं जो इन तीनों में से गुजरते हैं? उस स्वयं को जानना है, इन तीनों का अतिक्रमण करना है। तो पूरब और पश्चिम के इस भेद को ख्याल रखना। कई लोग सोचते हैं कि क्या मनोविज्ञान धर्म का रिप्लेसमेंट बन सकेगा, क्योंकि उनकी उत्सुकता अध्ययन की है, अतिक्रमण की नहीं है।

गहन नींद में जहां तुम भूल जाते हो कि हिन्दू हो कि मुसलमान, भारतीय हो कि पाकिस्तानी, पढ़े-लिखे हो कि अनपढ़, गरीब कि अमीर, स्त्री कि पुरुष वहां भी तुम तो होते हो, वह तुम्हारा होना क्या है? वह एक अत्यंत सूक्ष्म प्रकाश है। संतों ने उसके लिए एक अलग नाम लिखा, आलोक, प्रकाश से भिन्न कहने के लिए।

प्रकाश से हम समझते हैं तीव्र, आंखों को उत्तेजित करने वाला। एक धीमा आलोक भी है, ओशोधारा के निरति समाधि कार्यक्रम में उस आलोक से परिचय होता है छः दिनों में। तुम स्वयं प्रकाश स्वरूप हो। वह प्रकाश ही यात्री है जो चेतना की इन तीन अवस्थाओं से गुजरता है। लेकिन हम आइडेंटीफाई हो गए हैं अपने शरीर और मन से, हम समझते हैं कि यही हम हैं जबकि हमारा वास्तविक स्वरूप प्रकाशमय है।

भगवान शिव कहते हैं पार्वती से कि इन तीनों अवस्थाओं में स्वयं के प्रकाशमय होने को जानो। मैं सुनता था एक पंजाबी लोकगीत, उसके शब्द बड़े प्यारे लगे–

जब से तुझे मैंने देखा है भगवन्,
मचलने लगी है मेरे दिल की धड़कन,
तुझे देखकर मजा आ गया है,
तुझे देखकर एक नशा छा गया है।
तुझे मैंने पहले बहारों में देखा,
दुनिया के रंगीं नजारों में देखा,
तुझे देखा मैंने जमीं आसमां में,
फिर तुझको देखा है सारे जहां में।
फिर जित्थे–जित्थे देखिया तेरा नूर देखिया।
तेरा नूर देखिया, हां तेरा नूर देखिया।
मैं राम–रघुवीर विच, मैं बुद्ध–महावीर विच,
मैं साधु ते फकीर विच, मैं नानक ते कबीर विच,
मैं हर तस्वीर विच तेरा नूर देखिया,
हां, तेरा नूर देखिया।
मैं धूप और छांव विच, मैं मस्ती दी राहां विच,
मैं पैनां ते परावां विच,
मैं मां दियां बावां विच, मैं अपने ही सावां विच,
तेरा नूर देखिया,
हां, तेरा नूर देखिया।

मैं मस्ती दे रंग विच, मैं ध्यान दी तरंग विच,
मैं दुनिया के रंग विच, मैं दिलां दी उमंग विच,
मैं सारे सत्संग विच तेरा नूर देखिया,
हां तेरा नूर देखिया,
जित्थे-जित्थे देखिया तेरा नूर देखिया।

एक बार अपने उस भीतर के आलोक से पहचान हो जाए, वह आलोक ऐसा है जैसा संध्या के समय होता, सूर्योदय के पूर्व होता, प्रकाश के स्रोत का पता नहीं चलता, सूरज अभी क्षितिज के नीचे है, भोर का समय, ब्रह्ममुहूर्त का समय, इसलिए उसको ब्रह्ममुहूर्त का समय कहते हैं, ठीक वैसा ही प्रकाश हमारे भीतर होता है। या शाम को जब सूरज ढल चुका, तीव्र रोशनी जा चुकी, थोड़ा-थोड़ा उजाला रह गया वह है आलोक, स्रोतहीन प्रकाश।

संत उसे कहते हैं, दीया जले अगम का, बिन बाती बिन तेल। न कोई बाती है, न कोई तेल है और न दीये का पता चलता फिर भी एक हल्की सी रोशनी है। अपने आपको उस रोशनी से आइडेंटीफाई करो। इससे पहले जरूरी होगा कि तन-मन से हमारा तादात्म्य ढीला हो।

दो प्रकार की साधनाएं हैं- एक है नेति-नेति वाली साधना जिसमें कहते हैं कि छोड़ो ये भाव कि मैं शरीर हूं या मन हूं। यह नकारात्मक साधना है। एक दूसरी साधना है विधायक, भाव करो कि मैं प्रकाश स्वरूप हूं। कुछ लोगों के लिए नेति-नेति की साधना ज्यादा आसान होगी, कुछ लोगों के लिए विधायक साधना ज्यादा आसान होगी।

आज का यह सूत्र विधायक साधना की तरफ इशारा है। शुरूआत करो जागने से।

इस विधि को समझाते हुए परमगुरू ओशो कहते हैं, जागते समय चलते हुए, खाते हुए, काम करते हुए अपने को प्रकाश रूप में स्मरण रखो, मानों तुम्हारे हृदय में एक ज्योति जल रही है और तुम्हारा शरीर उस ज्योति का प्रभामण्डल बस हैं।

कल्पना करो कि तुम्हारे हृदय में एक लपट मौजूद है और तुम्हारा शरीर उस लपट के चारों ओर आभामण्डल के अतिरिक्त और कुछ नहीं, तुम्हारा शरीर उस लपट के चारों ओर फैला हुआ प्रकाश है, इस भाव को अपने मन और चेतना की गहराई में उतरने दो, इसे आत्मसात करो और जब दूसरों को आभास होने लगे तब तुम निश्चिंत हो सकते हो।

किसी से कहना नहीं कि तुम ज्योति की साधना कर रहे हो, बस ज्योति का भाव करना और तुम्हारा शरीर उस ज्योति के चारों ओर फैला आभामण्डल है। यह स्थूल शरीर नहीं, प्रकाश शरीर है। अगर तुम धैर्यपूर्वक लगे रहे तो लगभग तीन महीनों में अन्य मित्रों को बोध होने लगेगा कि तुम्हें कुछ विचित्र घट रहा है, वे तुम्हारे चारों ओर एक सूक्ष्म प्रकाश महसूस करने लगेंगे।

दूसरे चरण में इस विधि को स्वप्न में ले चलना है। अब तुम स्वप्नजगत में इसका प्रयोग शुरू कर सकते हो, अब यह यथार्थ हो गया, कल्पना नहीं रहा, कल्पना के द्वारा तुमने सत्य को उजागर कर लिया। परमसत्य यही है कि सब कुछ प्रकाश से बना है, सब कुछ प्रकाशमय है, तुम प्रकाश स्वरूप हो। अब तो वैज्ञानिक भी इस बात से राजी हैं कि पदार्थ नहीं है, प्रकाश, विद्युत ऊर्जा का कंडेंस्ड रूप, सघन रूप है।

जब तुम्हारी स्वप्न अवस्था में यह सत्य प्रगट होगा कि तुम प्रकाश हो, ज्योति हो, प्रज्ज्वलित आलोक हो तब सारे सपने विदा हो जाएंगे। और जब स्वप्न विदा हो जाएंगे तभी इस भाव को तीसरे चरण में गहरी नींद में ले जाया जा सकता है, उसके पहले नहीं। अब तुम निद्रा के द्वार पर खड़े हो। यह विधि तुम्हें अब तीनों अवस्थाओं जाग्रति, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाओं के पार जाने में सहयोगी होगी।

अगर तुम सजग हो सको कि मैं ज्योति हूं, मैं प्रकाश हूं, कि नींद मुझे नहीं घटित हो रही तब तुम नींद में भी जागरूक बने रह सकोगे। तुम एक सचेतन प्रयत्न कर रहे हो, अब तुम एक ज्योति ही हो गए, अब शरीर ही सोया है, तुम नहीं।

कृष्ण गीता में यही कहते हैं कि योगी कभी नहीं सोते। जब सारी दुनिया सोती है तब भी योगी जागे हुए होते हैं। ऐसा नहीं है कि उनके शरीर नहीं सोते, उनके शरीर तो सोते हैं लेकिन बस शरीर ही विश्राम करते हैं, चेतना को विश्राम की कोई जरूरत नहीं। बड़ी अद्भुत बात कहते हैं गीता में कृष्ण। लेकिन इससे गलतफहमी भी पैदा होती है, गलत व्याख्याएं हो जाती हैं।

मैंने सुना है एक उर्दू के टीचर ने क्लास में पूछा, मर्ज बढ़ता गया ज्यों–ज्यों दवा की, इस शेर के जरिए शायर क्या कहना चाहता है? एक शागिर्द बोला, जी शायर यही कहना चाहता है कि मरीज का इलाज किसी सरकारी अस्पताल में हो रहा है। सरकारी और असरकारी, असरकारी यानि इफेक्टिव, प्रभावशाली जो असर दिखाए और सरकारी इसका उल्टा।

एक शिक्षक ने छात्रों से पूछा, रावण की लंका को सोने की लंका क्यों कहा जाता है? विद्यार्थी ने कहा सर, चूंकि लंका में कुंभकरण रहता था जो दिन–रात सोया रहता था इसलिए उसको सोने की लंका कहते हैं।

याद रखना, चाहे कुंभकरण हो चाहे तुम, छः घंटे सोओ चाहे छः महीने, सोना तो पड़ेगा ही। कृष्ण की गीता का गलत अर्थ मत निकालना। शरीर तो सोएगा, शरीर तो पदार्थ है उसे तो विश्राम की जरूरत है लेकिन चेतना पदार्थ नहीं है, चेतना प्रकाशमय है, उसे विश्राम की कोई जरूरत नहीं है।

तो शरीर सोएगा लेकिन भीतर तुम जागे ही रहोगे। और तब तुम्हें आत्मअनुभूति होगी। तन और मन के पर चेतन का बोध होगा।

आओ, मा प्रिया के साथ इस विधि का प्रयोग करें।

1. खड़े होकर प्रकाशित बल्ब को देखो। भाव करो कि प्रकाश किरणें आपके भीतर प्रवेश कर रही हैं। न केवल आंखों से बल्कि रोम–रोम से अंदर जा रही हैं।

2. बैठ जाओ। पूर्णरूप से जागरूक रहो। भाव करो कि आप प्रकाश से निर्मित हो। जागृति की अवस्था में खुद को प्रकाशमय समझो।

3. लेटकर स्वप्न में डूबो। मन में सपने तैर रहे हैं, उन्हें देखते हुए अपने को प्रकाश समझो। चेतना की दुधारी तलवार– एक तरफ सपने का दृश्य, दूसरी ओर खुद का प्रकाशमय रूप।

4. अब सो जाओ। भाव करो कि नींद आ रही है। और याद रखो कि नींद में भी आप अपने को प्रकाश जानोगे। विश्राम, विश्राम, परम विश्राम। प्रकाश में विश्राम। योग निद्रा घेर रही है और प्रकाश का स्मरण सधा है। नींद आ रही है, शिथिलता छा रही है और अपने प्रकाशमय होने का बोध बना हुआ है। इसी बोध के साथ सो जाओ। सो जाओ। गहन निद्रा में खो जाओ। सो जाओ। सो जाओ। सो जाओ। गहन निद्रा में खो जाओ।

अंधेरे में प्रवेश

वर्षा की अंधेरी रात में उस अंधकार में प्रवेश करो जो रूपों का रूप है।

सम्हल–सम्हल कर चलो और भी चलना होगा,
कदम–कदम हमें फूंककर रखना होगा,
सरल नहीं है चमन से चुराना फूलों को,
कभी–कभी तो हमें खार से चुभना होगा।
कठिन है राह पर दूर नहीं मंजिल ज्यादा,
बस यही सोच बड़ी दूर तक चलना होगा।
खरी हो जाएगी जिंदगी कुंदन की तरह,
चैन के साथ हमें आग में तपना होगा।

जिंदगी में सिर्फ रोशनी नहीं है यारो,
बंद आंखों से अंधेरे में भी चलना होगा।

जिंदगी सिर्फ चमचमाता दिन ही नहीं, अंधेरी रात भी है, फूल ही फूल नहीं, कांटे भी है। प्रेम ही प्रेम नहीं, क्रोध और घृणा भी है। भगवान शिव के ये सूत्र बड़े अद्भुत हैं, वे हर चीज का ध्यान समाधि में हमें डूबने का उपाय बता रहे हैं।

आज का सूत्र अंधेरे से संबंधित है। कहते हैं भगवान शिव– ''वर्षा की अंधेरी रात में उस अंधकार में प्रवेश करो जो रूपों का रूप है।''

विधि नंबर 75 में उन्होंने प्रकाश की बात की कि स्वयं को प्रकाश समझो, उसके तुरंत बाद उन्होंने दूसरे पहलू को लिया, अंधेरे में डूबो। अकेले प्रकाश की बात अधूरी होगी। जिंदगी में सिर्फ रोशनी नहीं है यारो, बंद आंखों से अंधेरे में भी चलना होगा। संभल–संभलकर चलो, और भी चलना होगा। वेद, कुरान, बाईबिल ये धर्मग्रंथ कहते हैं कि परमात्मा प्रकाश स्वरूप है। केवल भगवान शिव और इसैनी संप्रदाय के लोग जिसमें ईसा मसीह दीक्षित हुए थे वे कहते हैं कि परमात्मा अंधकार स्वरूप भी है।

निश्चित रूप से परमात्मा द्वंदातीत है, वह केवल प्रकाश ही नहीं हो सकता वरना अंधकार कौन होगा? वह केवल राम ही नहीं हो सकता वरना रावण में फिर कौन होगा? वह द्वंद्वों का मिलन है। अंधेरे की साधना प्रकाश की साधना से भी ज्यादा उपयोगी है।

कई बार मैंने देखा है कि जो लोग प्रकाश की साधना करते हैं उनके भीतर क्रोध और काम की मात्रा बढ़ जाती है, रजस तत्व बढ़ जाता है। जो लोग अंधकार की साधना करते हैं उनके भीतर रजस तत्व कम होता है, तमस तत्व बढ़ जाता है। उनके भीतर काम, क्रोध, लोभ, मोह, विकार ये सब धीरे–धीरे खो जाते हैं, अंधकार में लीन हो जाते हैं, खत्म हो जाते हैं।

तुम्हें चुनना होगा कि तुम किस दिशा में जाना चाहते हो और जो धर्मग्रंथ कहते हैं कि परमात्मा प्रकाश स्वरूप है, उससे परमात्मा के स्वरूप का कम बोध होता है। यही पता चलता है कि हम चूंकि अंधेरे से डरते हैं, लाखों साल मनुष्य जाति जंगल में आदिवासियों की तरह रही। अंधेरे में बड़े भय थे, जंगली जानवरों के खतरे थे, रात बड़ी भयावह हुआ करती थी इसलिए हमारे अचेतन मन में अंधेरे का डर समाया हुआ है।

जब हम कहते हैं परमात्मा प्रकाश है तब यह हमारा अनुभव और ज्ञान कम, आकांक्षा ज्यादा है। हम चाहते हैं कि परमात्मा प्रकाश हो क्योंकि अंधेरे से हमें डर लगता है।

जब हम कहते हैं परमात्मा परम मां है, परमपिता है इसमें हमारी आकांक्षा छिपी है कि कम से कम परमात्मा तो हमारे प्रति कठोर न हो, करुणावान हो, माता–पिता के समान हो। इसमें हमारा असहाय भाव, हमारा बचपना ज्यादा झलकता है। हमारी परमात्मा के संबंध में जो धारणाएं हैं बड़ी बचकानी, भयग्रस्त धारणाएं हैं। वे परमात्मा के तथ्य को उजागर नहीं

करतीं, हमारे भय को उजागर करती हैं।

शिव कहते हैं, परमात्मा अंधकार स्वरूप है। अंधकार के बारे में कुछ बातों को समझना।

मुख्यरूप से दस बिन्दुओं पर आपका ध्यान दिलाना चाहूंगा।

पहली बात, अंधकार शाश्वत है। प्रकाश उदय होता, अस्त होता, आता–जाता। चाहे छोटा सा दीपक रात भर जले और चाहे सूरज अरबों–अरबों साल जले, चाहे कोई और महातारा खरबों–खरबों वर्ष जले लेकिन याद रखना, सूरज और तारे भी एक दिन बने थे और एक दिन मिट जाएंगे। तो वैज्ञानिकों ने कोल्डस्टार्स और ब्लैकहोल्स खोज लिए हैं, तारे ठंडे पड़ गए।

तारे भी बुझ जाते हैं। माना कि उनकी उम्र बड़ी लंबी है, छोटा सा दीया रात भर जलता है, कोई महातारा खरबों साल तक चलता है लेकिन शाश्वत तो वह नहीं है, अंधकार शाश्वत है। जब तारे नहीं बने थे तब भी था और जब तारे नहीं रहेंगे तब भी होगा और जब सारे सूरज–तारे हैं तब भी वह अपनी सघनता में मौजूद है। अंधकार शाश्वत है।

दूसरा, अंधकार कहीं आता–जाता नहीं, प्रकाश चलता है। वैज्ञानिकों ने खोज की है प्रकाश की गति बड़ी तीव्र है, अबसल्यूट वैल्यू, अबसल्यूट वैलोसिटी, लगभग तीन लाख किलोमीटर प्रति सेकेण्ड की स्पीड से प्रकाश चलता है। प्रकाश कहीं से आ रहा, कहीं जा रहा, अंधकार न कहीं से आ रहा और न कहीं जा रहा, अंधकार आवागमन से मुक्त है। और जिसे आवागमन से मुक्त होना हो उसे अंधकार की साधना करनी चाहिए।

तीसरा बिन्दु, अंधकार का कोई स्रोत नहीं, कोई उद्‌गम नहीं, प्रकाश का तो स्रोत है। चाहे वह छोटी सी टार्च हो कि बिजली का बल्व हो, कि चांद हो, कि सूरज हो, कि तारे हों, जिस चीज का स्रोत है वह चीज सीमित होगी। जिसका कोई स्रोत नहीं है, जिसका कहीं से उद्‌गम नहीं हो रहा उसका कहीं समापन भी नहीं होगा।

चौथा, अंधकार विश्रामदायी है। प्रकाश में तनाव उत्पन्न होता है इसीलिए तो हम दिन में ठीक से सो नहीं पाते और रात को गहरी नींद में जाते हैं। अगर रात को आपके कमरे में तेज रोशनी कर दी जाए तो आपकी नींद टूट जाएगी। समाधि भी गहन विश्राम है और इसलिए समाधि में डूबने के लिए अंधकार की साधना बड़ी उपयोगी होगी।

पांचवा बिन्दु, प्रकाश सीमित होता है, प्रकाश में आकृतियां और रूप नजर आते हैं। अंधकार असीम है, विराट है, निराकार है, अरूप है, अथाह है और अनंत है। परमात्मा के सारे गुण अंधकार में मौजूद हैं।

छठवां बिन्दु, मृत्यु, नींद और समाधि समान होते हैं। महर्षि पतंजलि कहते हैं, सुषुप्ति और समाधि एक समान। जैसे नींद गहन अंधेरे में आती है वैसे ही समाधि भी गहन अंधकार में डुबा देती है। मृत्यु भी एक गहन अंधकार है समाधि से मिलती–जुलती। इसलिए तो हम ध्यान की पराकाष्ठा को भी समाधि कहते हैं और किसी व्यक्ति की कब्र को भी समाधि कहते

हैं।

सातवां बिन्दु, प्रकाश में सब चीजें सीमित हो जाती हैं, स्पष्ट हो जाती हैं, पृथक हो जाती हैं, विभाजित हो जाती हैं, खण्ड-खण्ड हो जाती हैं, अंधेरे में सारी चीजें अखण्ड हो जाती हैं, मिस्टीरियस हो जाती हैं, रहस्यमय हो जाती हैं। संतों को हम कहते हैं रहस्यदर्शी, मिस्टिक, जिन्होंने उस परमरहस्य को जाना। अंधकार बड़ा रहस्यमय है, प्रकाश रहस्यों को नष्ट करता है। और याद रखना, रहस्य में है आनंद। इसलिए जहां-जहां रहस्य है, आश्चर्य का भाव है वहां-वहां आनंद है। जितना ही हम चीजों को स्पष्ट कर लेते हैं, विश्लेषित कर लेते हैं उतना ही उनका आनंद समाप्त हो जाता है।

आठवां बिन्दु, प्रकाश में तुम स्वयं भी परिभाषित हो जाते हो इसलिए अहंकार का उदय होता है। गहन अंधकार में तुम्हारा अहंकार भी विसर्जित हो जाता है। दूसरे की मौजूदगी में स्वयं के होने का एहसास होता है। गहन अंधकार में जहां दूसरा नहीं बचा वहां तुम भी नहीं बचे। मैं और तू एक ही डंडे के दो छोर हैं। समस्त अध्यात्म का लक्ष्य है अहंकार से मुक्ति। गहन अंधकार में अहंकार से मुक्ति हो जाती है।

नौवां बिन्दु, ज्योति की तरह अंधकार कोई आब्जेक्ट नहीं है, प्रकाश में आब्जेक्ट दिखाई देते हैं, अंधकार में कुछ भी दिखाई नहीं देता। अंधकार स्वयं भी दिखाई नहीं देता, वह कोई आब्जेक्ट नहीं है, वह कोई दृश्य नहीं है और इसलिए अध्यात्म की खोज सब्जेक्टिविटी की खोज है वह अंधकार में बड़ी आसानी से हो सकती है।

दसवां बिन्दु, प्रकाश में लीनता कठिन है, अंधकार में लीनता बड़ी सुगम है, तल्लीन हो जाना बड़ा आसान है। अगर सिनेमा हॉल में तेज रोशनी जल रही हो कि दर्शक एक-दूसरे को देख पाएं तो फिल्म देखने में तल्लीनता नहीं आएगी। आपको हंसी आएगी कोई कामेडी का दृश्य देखने में या कोई दुखद दृश्य देखने में रोना आएगा लेकिन आप ठीक से हंस या रो नहीं पाएंगे क्योंकि आसपास के लोग आपको देख रहे होंगे।

प्रकाश में तल्लीनता नहीं आती, हम उथले-उथले नहीं हो जाते हैं, गहराई में नहीं जा पाते। अंधकार में हम तल्लीन हो पाते हैं।

इन दस बिन्दुओं का ख्याल रखते हुए इस बात को गौर से समझना कि अंधकार की साधना प्रकाश की साधना से ज्यादा उपयोगी है। अंधेरे से धीरे-धीरे मैत्री साधो, घनिष्ठता बनाओ। आजकल के आधुनिक युग में विशेषकर विद्युत की खोज होने के बाद अंधेरे से हमारा नाता ही टूट गया। कहीं दूर पहाड़ी गांव में चले जाना जहां बिजली नहीं पहुंची है और वहां जाकर कुछ महीने अंधकार की साधना करना और तुम एक नए ही व्यक्ति हो जाओगे, बिल्कुल रूपांतरित हो जाओगे।

ओशो ने स्वयं अपने विश्वविद्यालय काल के दौरान अंधेरे की साधना की, कुछ वर्ष वे गहन तमस में जिए। आपने ओशों के प्रवचनों में उस समय की कहानियां सुनी होंगी। ओशो के साथ जो घटनाएं घटीं, स्मरण रखना वे सारी घटनाएं अंधेरे की साधना की वजह से हैं।

जैसे मैंने कहा कि जब तुम प्रकाश की साधना करोगे तो दूसरे लोग दो-चार माह में अनुभव करने लगेंगे कि तुम बदल गए, ठीक ऐसे ही अंधकार की साधना करने में भी होगा। एक-दो माह में कुछ लोग तुमसे बचने की कोशिश करने लगेंगे, तुमसे डरने लगेंगे, तुम अंधेरे का एक टुकड़ा अपने साथ लिए चलोगे अपने आसपास लपेटे हुए। तुम्हारा व्यक्तित्व रूपांतरित हो जाएगा, एक गहन शांति, गहन शीतलता तुम्हें घेर लेगी।

इस विधि पर प्रवचन देते हुए ओशों ने कहा- ''अपनी आंखें खुली रखो और अपनी आंखों से देखते रहो, तुम्हें एक अलग ही किस्म का अंधकार मिलेगा, विधायक अंधकार। वह सचमुच है, उसमें टकटकी लगाओ, अंधकार को घूरते रहो, तुम्हारे आंसू बहने लगेंगे, तुम्हारी आंखें दुखने लगेंगी, चिंता मत करना, प्रयोग जारी रखना।

जिस क्षण असली अंधकार तुम्हारे अंदर प्रवेश करेगा, वह तुम्हें एक सुंदर भाव से भर देगा, सुखद भाव से भर देगा। मानो कड़ी धूप में चलने वाला राही घनी छाया में आ गया हो। और विधायक अंधकार का प्रवेश तुम्हारे भीतर से सभी नकारात्मक अंधकार को हटा देगा। यह एक बहुत ही अद्भुत अनुभव है।

अभी तुम्हारे भीतर जो अंधकार है वह नकारात्मक है, प्रकाश के विपरीत है। वह प्रकाश की अनुपस्थिति नहीं, उसका ठीक उल्टा है। वह वही अंधकार नहीं है जिसे शिव सभी रूपों का रूप कहते हैं, सच्चा अंधकार बताते हैं। उस सच्चे अंधकार से हम इतने भयभीत हैं कि उससे बचने के लिए प्रकाश के हमने अनेक साधन जुटा लिए और एक प्रकाशित संसार में हम रहते हैं।

जब हम अपनी आंख बंद करते हैं तो इस प्रकाशित संसार का एक नकारात्मक रूप प्रतिबिम्बित होता है। असली अंधकार से, शिव के अंधकार से हमारा संपर्क नहीं हुआ, उसके साथ हमारा कोई जोड़ नहीं रहा, हम इतने भयभीत हैं कि हम उससे बिल्कुल ही विमुख हो गए। हमने उसकी तरफ पीठ कर ली। तो यह विधि प्रयोग के समय शुरूआत में कठिन लगेगी लेकिन अगर तुम इसे कर सके तो वह बड़ी अद्भुत सिद्ध होगी। तुम्हारा होना सर्वथा भिन्न होगा, तुम एक नए ही व्यक्ति बन जाओगे। आओ इस विधि को करते हैं-

आराम से बैठ जाओ, आंख बंद कर लो और अंधेरे से घनिष्ठ मैत्रीभाव साधो। प्रकाश की बजाए अंधकार में लीनता सुगम है। अंधेरे से डरो मत, दोस्ती साधो। मित्रभाव से देखो। अंधेरे का आनंद लो। अहा! कितना विश्रामदायी है। कोई भी दृश्य दिखाई नहीं पड़ रहा, बस देखने वाला रह गया, अंधकार ही अंधकार रह गया, अंधकार ही अंधकार है, अंधकार ही अंधकार है।

भगवान शिव कहते हैं, अंधकार में डूबते चलो जो कि रूपों का रूप है,

जो शाश्वत है, स्रोतहीन है, सृष्टि के बाद जो था और प्रलय के बाद भी जो होगा। अंधकार को मां के गर्भ की तरह मानो। नौ माह तुम अपनी मां के गर्भ में अंधेरे में थे। वे तुम्हारे जीवन के सर्वाधिक आनंद के दिन थे। भाव करो जागतिक अंधेरे में तुम समाए हुए हो। अंधकार ही असली मां है, उससे ही सारी सृष्टि जन्मती और उसी में लीन हो जाती।

अचेतन मन में दबे हुए भय उभर सकते हैं, उन्हें साक्षीभाव से देखना, अंधकार के प्रति तथाता भाव रखना। विश्राम, ... विश्राम, ... विश्राम। अंधेरे में समा जाएं, ... सब तरफ अंधेरा ही अंधेरा है, ... अंधकार ही अंधकार है, ... बड़ा शांत, शीतल, विश्रामदायी, ... अंधकार ही अंधकार। मां की गोद की तरह बड़ा प्यारा, छोटे बच्चे की तरह डूब जाओ विश्राम में। अद्भुत है यह अंधकार, .. कितना प्रीतिकर, .. कितना शीतल, डूबते जाएं, . . डूबते जाएं... और अंततः आप खो ही जाएं। आपका अहम मिटा कि ब्रह्म का साक्षात्कार हुआ।

परमात्मा परम अंधकार है। जब तक भाव हो, ध्यान में डूबे रहें।

ओम् नमः शिवाय। ओशो शरणं गच्छामि।